डूबते मस्तूल

डूबते मस्तूल

श्री नरेश मेहता

१९५४
आत्माराम एण्ड सन्स
प्रकाशक तथा पुस्तक-विक्रेता
काश्मीरी गेट
दिल्ली—६

उस मुख को
जो स्मरण कगारे
छोड़ गया है अग्नि-वाक्य यहं,

ऽ यातना माँ है
जननि है सत्य की—

ओ अस्तगामी मृगमुख !
यही वेदना तिलक हमारी !!

चार विद्यार्थी गुरुकुल से विद्याध्ययन समाप्त कर अपन-अपने घर वापस जा रहे थे। विश्राम के लिए वे एक निर्जन वन में ठहरे। भोजन की तैयारी के लिए चारो ने काम बाँट लिया--एक ने स्थान साफ करने का, दूसरे ने जगल से लकडियाँ बटोर लाने का और शेष दो ने निकटवर्ती ग्राम से सामग्री लाने का भार सम्हाला।

स्थान बुहारते विद्यार्थी को किसी जीव की एक हड्डी मिली। उसने अपनी विद्या परीक्षार्थ मत्र द्वारा उस जीव की सारी हड्डियाँ उस स्थान पर एकत्र कर डाली। लकडियाँ लेकर जब दूसरा विद्यार्थी लौटा तो हड्डियो का ढेर देखकर उसे आश्चर्य हुआ। जब प्रथम विद्यार्थी ने अपने मत्रबल का प्रभाव दूसरे को बतलाया तो दूसरे मेधावी ने कहा--मै चाहूँ तो इन अस्थियो को आकार प्रदान कर सकता हूँ --और दूसरे की मत्र शक्ति ने उन अस्थियो को रूप दे दिया।

शेष दोनो विद्यार्थी जब हाट करके लौटे तो इन दोनो की मत्र-शक्तियो को देखकर उनका अपना स्वत्व जागा। तीसरा बोला--मै चाहूँ तो इस आकार को मास-मज्जा प्रदान कर सकता हूँ--और देखते-देखते वह अस्थि ढेर एक सिह का शव बन गया। चौथे ने अपनी विद्या के घमण्ड में कहा--बस ? मै इस मृतक को प्राण प्रदान कर सकता हूँ--और वह मृतक सिह मत्रबल के प्रभाव से जी उठा।

और कथा कहती है कि अत मे वह सिह उन चारो 'मेधावियो' को खा गया।

यह तो हुई कथा, इस से आप तात्पर्य क्या निकालेगे इससे मुझे प्रयोजन नही। मैने कथा कही, निष्कर्ष आप निकाले।

एक शब्द भाषा के बारे मे कह दूँ कि उत्तरार्द्ध में 'सप्तमी' के प्रयोग किये गये है। सस्कृतप्रियता के कारण नही बल्कि बोलियो मे सप्तमी, नामधातु आदि होते है और हिन्दी मे अनेक प्रभावो के कारण यह प्रक्रिया लुप्त-सी हो गयी है। अवधी मे जैसे--अवधेस के द्वारे सकारे गयी--या मालवी मे, 'शनीवारे राते' आदि के रूप मिलते है इसलिए हिन्दी, बोलियो के अधिक निकट इसी प्रकार के प्रयोगो द्वारा जा सकती है। यह न माना जाये कि चौंका देने के लिए ऐसा कुछ किया गया है, अस्तु--

अनेक मित्रो का आभारी हूँ, और विशेषकर श्री वेदव्रतजी का।

अगत्या कृति सम्मुख है, कृतिकार बिदा लेता है।

रक्षाबन्धन--२०११

श्री नरेश मेहता

२३ मार्च सन् १९५१,
लखनऊ शहर के चारबाग रेलवे स्टेशन पर अभी उतरा हूँ। कैसा खूबसूरत स्टेशन है! स्टेशन की गोल घड़ी मे दोपहर के १२–३० बज रहे हैं।

आज होली है, इसलिए ट्रेन मे ज्यादा भीडभाड नही थी, वर्ना लोगबाग फुटबोर्डो तक पर खडे-खडे आते हैं।

इधर उत्तर भारत के लोगो मे होली काफी उत्साह से मनाने का रिवाज है, यह मैने रास्ते भर कानपुर से आते हुए अनुभव किया है।

कुली लोग दौड-दौडकर लोगो का सामान ठीक-ठाक करने मे मशगूल हैं—अपनी ऊँची-ऊँची धोतियाँ पहने, रेलवे की लाल कमीजो पर नम्बरो की सफेद पट्टियाँ लगाये, और सिर पर नीला साफा बाँधे हुए—कम्पार्टमेंट की खिडकियो मे से ही लोगो की मुराहियो, अटैची बाक्स, बिस्तरे, रगीन टोकरियाँ उतारने मे लगे हुए हैं। उनकी बढी हुई दाढियो पर थोडी देर पहले का खेला गया रग कई रग-बिरगी धारियो मे सूख गया है और मुँह पर अबीर-गुलाल लपेटे उनकी शक्लें अजीब हो रही हैं। प्लेटफार्म की वह बडी सी गोल घडी, जिस पर किसी के द्वारा फेंके गये गुलाबी रग की धारियाँ शीशे पर जमी हुई-सी लग रही है, और जिस पर मक्खियाँ भिनभिना रही हैं। सहमे-सहमे से लाल गुलाबी भेष मे बच्चे, सामान के पास खडे हुए कुलियो से मोलभाव करते हुए अपने माता-पिताओं की ओर निरीह दृष्टियो से देख रहे हैं। प्लेटफार्म पर कोई फेरीवाला नजर नही आ रहा है। सामने का ह्वीलर का बुकस्टाल भी बद है।

सुबह से ही मौसम उमस वाला हो रहा है। पानी बराबर फुहारो की तरह बरस रहा है, लेकिन गरमी हल्की-हल्की आ चली है, और पसीने की हल्की चिपचिपाहट भी जरूर ही अनुभव की जा सकती है।

अपने हाथ का अखबार और रेलवे टाइम टेबल दो-तीन बार पाजामे पर बजाते हुए मैं तय कर रहा हूँ कि मुझे अब यहाँ से सीधे अपने मित्र पुरी के पास जाना है और रास्ते की थकान, और ट्रेन लेट हो जाने के कारण मन की थकान सब दूर करनी है। मैं अब अपने जेब से पुरी का पत्र निकालूँगा जो कि मेरे जलगाँव वाले पत्र का उत्तर है, क्योकि उस पत्र मे पुरी का पूरा पता दिया हुआ है।

मैं उत्तर भारत मे पहली बार आ रहा हूँ। विजगापट्टम मे पैदा होकर भी पढने अवश्य ही अकोला तथा नागपुर तक गया हूँ क्योकि एक मेरे चाचा अकोला मे तार बाबू और नागपुर मे मेरे मामा सस्कृत की पुस्तको की तथा सतारी पेडे की दुकान सीताबर्डी मे किया करते थे। इतवार के दिन उस महाल वाली जम्मा झील मे हम लोग जलमुर्गाबियो

की तरह तैरा करते थे और साँझ को एम्प्रेस मिल के भोपू की गिरती हुई परछाई तथा सूर्यास्त देखा करते थे। पढने-लिखने के बाद बनियान और मौजो की हौजरी मे काम करनेवाले के पास अवकाश क्या! आवश्यक वक्त ही कहाँ होता है कि वह यहाँ-वहाँ घूमे, और फिर वह भी शौकिया घूमना! शौक एक कीमती नाजुक चीज है। पुरी का पिता, जब हम बच्चे थे तब, हमारे विजगापट्टम मे लकडी का पीठा और टाल चलाया करता था और उस समय यह पुरी वही हमारे साथ पढा करता था।

रेलवे अहाते के बाहर अब ताँगा निकल आया है और वह अब दाहिने हाथ की मोडवाली खुली लम्बी सडक पर अपना घोडा मोड रहा है। सडके एकदम सुनसान लग रही है। बाये हाथ की खुली जगह मे हजारो छोटे-छोटे भूरे-नीले-खाकी रग के तम्बू तने हुए है, जिनमे के रहनेवाले काफी हट्टे-कट्टे गोरे चिकने बतलाते है कि वे पजाबी है और शरणार्थी है। दाहिने हाथ पर रेलवे के कर्मचारियो के क्वार्टर बने हुए है, जिनके पिछवाडो की खिडकियाँ सडक की ओर दिखायी पड रही है। इन क्वार्टरो की चिमनियो मे से हल्का धुआँ निकल रहा है। इन क्वार्टरो की बगल मे बडा-सा टिन का घेरा बना हुआ है जिसके भीतर या तो गोदाम होगा या फिर मैदान। बाये हाथ पर मैदान के पार बहुत-सी इमारतो की दीवारो पर 'डोगरे का बालामृत' या फिर 'धूतपापेश्वर' के विज्ञापन मोटे-मोटे शब्दो मे दिखायी पड रहे है।

आसपास के पेड लगभग सभी नगे हो चले है, जो बताते है कि उत्तर मे दक्षिण की अपेक्षा पतझर पहले आता है, क्योकि जब मै घर से चला था तो घर की इमली, सामने के शिवाले का बिल्व-वृक्ष और सुपारी के पेड पतझर की प्रतीक्षा कर रहे थे, पर यहाँ तो जैसे पेडो की हड्डियाँ ही हड्डियाँ निकल आयी हो। इन पेडो के पास ढेर सारे पीले पत्ते पडे हुए है। सडक के दोनो ओर के गड्ढे बताते है कि पिछली रात यहाँ काफी पानी गिरा है। घास के पीले तिनके कैसे धुले हुए चमक रहे है! पर वातावरण मे फिर भी एक उदासी-सी लग रही है।

और यह शायद मालगोदाम के मैदान का घेरा खत्म हो रहा है, और उस पार कोई गाडी चली आ रही है। रेलवे क्वार्टरो मे लोग होली खेल चुके मालूम होते है क्योकि तारो पर गीली रगीन साडियाँ, बच्चो के हाफ पेट, फ्रॉक, बडो की कमीजे और पाजामे सब सुखाये जा रहे है।

पुरी और मै एक साथ ईसाई स्कूल मे पढा करते थे। बेचारे पुरी को उन दिनो हम लोगो से बाते करने मे कितनी कठिनाई हुआ करती थी और उसकी बोली की नकल मेरी शैतान बहन किस तरह उतारा करती थी कि बस! वह हमे टूटे-फूटे तरीके पर अपने बचपन की बाते सुनाया करता था। इन बातो मे शिमला, लाहौर, रावलपिडी सभी हुआ करते थे। पुरी की बातो मे लस्सी और कुल्फियो का जिक्र बहुत होता था। वह अपने माता-पिता से सदा इस बात पर झगडा किया करता था कि वे लोग उसे लाहौर मे उसके चाचा

के पास क्यो नही भेज देते जहॉ दूसरे भाई-वहन भी तो है । पुरी को हम लोगो की बोली, खाना---सभी से बडी चिढ रही थी, मगर जब वह हाई स्कूल का इम्तहान देकर हमेशा के लिए पजाब जा रहा था तब उसे मसालदोसा, साभर, इडली बहुत अच्छे लगने लगे थे । इमली की खट्टी-खट्टी कोटरो के लिए तब तक भी हम लोगो मे बहुत झगडे हो जाया करते थे पर कुल मिलाकर हम दोनो गहरे दोस्त थे और जिस दिन वह जा रहा था मैंने उसे स्टेशन पर कैसे झेपते हुए एक सिल्क का रूमाल भेट किया था और फिर हम दोनों हँस पडे थे।

मगर मै वहुत व्यर्थ का, और जाने क्या-क्या अपने मित्र के बारे मे सोच रहा हूँ। इस तॉगेवाले की बीडी का कडवा धुआँ मेरे गले मे जैसे चुभता-सा लग रहा है, फिर भी मै अपना सोचना बद नही कर पा रहा हूँ। घोडा बीच-बीच मे मुँह से थूक उडाते वक्त की आवाज करता हुआ बहुत ही मरियल चाल से चल रहा है। जैसे-जैसे दोनो ओर मकानो की सख्या बढती जा रही है मै अब उम्मीद कर रहा हूँ कि कोई मुझे साफ कपडो मे देखकर जरूर ही रग डालेगा और तब मैं जरूर ही गीला हो जाऊँगा। मुझे अपने गीले होने का उतना डर नही जितना कि इस आज के अखबार और अखबार से ज्यादा कीमती तथा काम की चीज इस रेलवे टाइमटेबल के खराब हो जाने का है, क्योकि इसमे मैंने विजगापट्टम से चलते समय पत्नी के सामने गाडियो की तथा अपने ठहरने की तारीखे तक डाल रखी है, और इसमे मैंने वह पत्र भी रख दिया है जो कि पुरी का है, जिसमे उसने मुझे होली पर बुलाया है ।

मै दोनो ओर की उन गलियो की ओर भी देख रहा हूँ जहाँ कि इस समय छोटे-छोटे बच्चे अपनी पिचकारियाँ लिये हुए आने-जाने वालो पर रग डाल रहे है। रग मे नहाये हुए आवारा कुत्ते उन तरकारियो के डठलो मे मुँह डालते फिर रहे है जो घरो के सामने ढेरो मे पडे है। मै जल्दी से पुरी का पता फिर से याद कर लेना चाहता हूँ जिससे कि कभी किसी ने यदि मुझ पर रग डाल भी दिया और पत्र भीग भी जाये तो मुझे पते के लिए परेशान न होना पडे। मैंने इतनी समझदारी जरूर की है कि तॉगेवाले से साफ-साफ कह दिया है कि "मियॉ! मेरे लिए तुम्हारे नवाबो का यह नफीस लखनऊ बिलकुल नयी जगह है और मुझे ठीक ११ नॉर्थ एवेन्यू वाले बॅगले पर ही छोडना होगा।" हालॉकि इस तरह इन तॉगेवालो से साफ-साफ नही कहना चाहिए---यह मेरी पत्नी ने चलते वक्त भी कहा था, क्योकि वे अजनवी समझकर फिर ऊल-जुलूल मॉगने लगते है---पर मै इसमे कोई हानि नही देखता।

मेरे पाजामे पर अव तक तीन पिचकारियाँ चल चुकी है। रग डालनेवाले बच्चो ने किस कदर शैतानी खुशी के साथ रग डाला है और---'होली है'---कहकर कैसे गहरे खुश हुए थे । मेरी चप्पले भी गीली हो गयी है। सडक पर अकेला ताँगा चला जा रहा है और लोगो की शरारती निगाहे मुझसे अधिक अब इस समय मेरे इस सफेद कुर्ते पर लगी

हुई है और मै किसी भी क्षण उनके हमले की उम्मीद मे बैठा हुआ, ताँगे के घोडे की चाल के कारण हिलते हुए ताँगे मे बैठा-बैठा हिल रहा हूँ।

मुझे अपने आप पर हमेशा चिढ हुई है । क्योकि अपनी लापरवाही खुद को तकलीफदेह तो होती ही है, पर दूसरो को भी कम कष्ट नही पहुँचाती । इस समय मै सोच रहा हूँ कि यदि एक जोडी कपडा और लेकर चलता तो कितना अच्छा था --फिर भले ही कितना ही रग क्यो न फेका जाता, मुझे कुछ भी उलझन तब न होती--मगर यह सब आदत का सवाल है।

मुझ पर अब चारो ओर से रग फेका जा रहा है और मेरे साथ यह बेचारा मुसल-मान ताँगेवाला भी भीगता चला जा रहा है, जिसकी दाढी बराबर कई रगो मे भीगती जा रही है। मेरी बनियान तक शायद अदर भीग गयी है, तभी तो वह बराबर मेरे शरीर से चिपकती-सी लग रही है। मेरे हाथ के रेलवे टाइमटेबल पर बनी साडी के विज्ञापन वाली औरत भी पूरी तरह रगो मे खो गयी है, भीग गयी है। कितनी खूबसूरत साडी उसकी--और वह भी कीमती--खराब हो गयी है--क्या कीमत होगी उसकी ? मै कितना मूर्ख हूँ, व्यर्थ--अपनी घडी की ओर तो मेरा ख्याल ही नही गया है। घडी का चमडे का पट्टा पूरा गीला हो गया है, उसका शीशा एकदम रगीन हो उठा है। मुझे उसे अब रूमाल मे पोछकर अदर की जेब मे जरूर रख लेना चाहिए वर्ना, घडी खराब हो सकती है ।

मेरे मुँह पर जरूर ही रग सूख गया होगा और मै निश्चित रूप से बदसूरत भी लग रहा हूँगा। हो सकता है कि मेरा मित्र पुरी दूर से शायद पहचान ही न सके और उसकी पत्नी--जिसे मैने अभी तक नही देखा है--मुझे इस अवस्था मे देखकर कही फूहड न समझ बैठे, क्योकि कही आश्चर्य मे वह ओठो पर अँगुली रखकर या आँखे फाडते हुए कह उठे--"अच्छा, तो ये ही है वो आपके मित्र--मतलब कि इन्ही फूहडराज को तुम अपना मित्र कहते हो, मुझे तो भई मितलान छूटती है, छि छि ! !"--मगर वह मेरे दोस्त की पत्नी है । वह कदाचित् दूसरी महिलाओ की तरह ऐसा सब कुछ पति के मित्र के लिए कहकर हल्का न बनेगी ।

पुरी ने एम कॉम करने के बाद शादी की थी । हाँ, विवाह का निमत्रण भी आया था, मगर मै इतना बीमार होगया था कि जाना सभव न हो सका था। उसके विवाह को दो साल हुए है क्योकि ४९ के दिसम्बर मे--नही नवम्बर मे शादी हुई है--दो साल मे कुछ ज्यादा नही हुए है, तो जरूर ही उसकी बीबी खूबसूरत होगी अभी तो, और फिर पजाबी तो यो भी गोरे-चिट्टे होते है । पुरी ने शायद अपने लिए बीबी बहुत खोजकर निकाली होगी--या, हो सकता है--क्लास-फेलो रही हो। निश्चय ही, मेरे इस मित्र की पत्नी सुसस्कृत होगी ही।

मेरे सामने इस समय ट्रको पर लदे हुए लोग होली मनाते हुए जा रहे है । औरतो के मोटे-मोटे स्तन और पेट इनकी गीली कमीजो से कैसे सटकर दिखायी दे रहे हैं,

किस बदसूरती से ट्रक के हिलने के साथ ही हिलते जा रहे हैं ! और ये लोग किस कदर शोर करते जा रहे हैं, शायद बहुत ज्यादा खुश नजर आ रहे हैं। इनके बालो मे रग की परते पडी हुई है।

बिजली के खभो के तार धीरे-धीरे हवा मे झूल रहे है। इन हरे और राख रगों के खभो पर लगे हुए सिनेमा के पोस्टरो मे बनी हुई सुरैया हर खम्भे पर ठीक उसी तरह हँसती हुई मिलेगी जैसी कि वह पहले खम्भे पर होगी । मै अब तक चुपचाप बैठा हुआ ताँगे मे चल रहा था पर मुझे एकदम हँसते हुए देखकर तागेवाले ने भौचक होकर अपनी नजर मेरी ओर घुमायी है, और जिधर मै देख रहा हूँ उधर ही वह हँसी के कारण को जान जाने के लिए देखने लगा है, और वह भी अब कितना खुलकर हँसा है कि बस ! ! हम दोनो जिस बात पर बेवकूफो-से हँस रहे है उसमे कोई भी विशेष बात नही है, लेकिन फिर भी हम कई बार छोटी सी बात को लेकर ही खूब मारा हँस दिया करते है, फिजूल ही। तो, इस समय मै जिस बात पर हँस रहा हूँ वह भी बहुत कुछ ऐसी ही छोटी-सी बात है और बात सिर्फ यही है कि एक खम्भे पर पोस्टर मे बनी सुरैया के चेहरे पर किसी मनचले ने खीझकर दाढी-मूँछ बना दी है और साथ ही तुर्की टोपी भी पहना दी है । औरत के चेहरे पर दाढी-मूँछ ! ! —वैसे बात कही से भी, किसी भी रूप मे अजीब नही लगनी चाहिए, क्योकि यदि इस तरह की घटना शरीर-विज्ञान मे हो भी गयी होती तो क्या हो जाता ? कुछ भी नही होता। अगर कोई भी दूसरा इस तरह की बात पर यो ही हँसता, जिस तरह अभी मै हँसा हूँ, तो मै इसी प्रकार के न जाने कितने तर्क दे डालता, मगर मै खुद जो इस समय हँस रहा हूँ। यह बात दूसरी है कि इसका मतलब खुद जानता हूँ कि मै इस तरह क्यो हँस रहा हूँ। एक बात तो यही है कि रास्ते भर किसी से बोला नही हूँ इसलिए घबरा उठा हूँ, यहाँ तक कि अखबार की एक-एक खबर और पक्ति को इतनी बार पढ चुका हूँ कि मै आँखे बद करके पूरे अखबार को बोलकर कम्पोजीटर से कम्पोज करवा सकता हूँ। रेलवे टाइम टेबल मे मैने हर बडे और हर छोटे वे सब स्टेशन खोज निकाले है जो रास्ते मे मुझे अभी तक मिलते आये हैं और जो आगे मिलने को हैं।

मै इस समय तागे की पीतल की छड पकडकर अपने दोस्त पुरी के बारे मे सोचने का इरादा कर रहा हूँ। मेरा दोस्त अपनी पत्नी के साथ बैठा हुआ मेरे आने की प्रतीक्षा कर रहा होगा। दिन भर वे लोग भी रग खेले होगे और मेरे दोस्त की पत्नी की आँखे धुली हुई सीप-सी लग रही होगी। वे लोग जरूर ही मुझे लेने स्टेशन आना चाहते रहे होगे मगर रग के डर से शायद नही आये । मै अब थोडी देर बाद ही एक आरामकुर्सी पर पैर पसारकर बैठा हूँगा। उजली सफेद कमीज और भट्टी का धुला हुआ पाजामा ! ! मगर मुझे अपनी डायरी मे यह नोट कर लेना चाहिए कि मै निश्चित ही एक लापरवाह व्यक्ति हूँ और आइन्दा कही भी बिना जरूरी सामान लिये हुए नही जाऊँगा। ठीक है, दोस्त नही भी सोच सकता है मेरी इस लापरवाही पर—लेकिन वह, उसकी बीबी क्या सोचेगी कि यही है वह

दोस्त जो अपने साथ एक जोडी कपडा तक लेकर नही आया ! शायद औरतो का ध्यान इन छोटी-छोटी बातो की ओर ही ज्यादा जाता है ।

रास्ते मे मुझे जो भी मार्गसूचक पत्थर मिले है उन्हे खूब आँखे फाड-फाडकर पढता आया हूँ। मै उम्मीद कर रहा हूँ कि अचानक इस तरह किसी पतली खूबसूरत सडक पर 'नॉर्थ एवेन्यू' लिखा मिलेगा और फिर यह ताँगा उस ओर मुड जायगा—तब जल्दी-जल्दी बँगले गिनते-गिनते वह ११ नम्बर दिखायी देगा जिस पर पीतल की नेम-प्लेट पर पुरी का नाम होगा—श्री हंसराज पुरी एम कॉम !

मगर मै देख रहा हूँ, यह लम्बी सडक तो लम्बी ही होती चली जा रही है। यह बाये हाथ पर शायद कोई होटल है, इसके बाहर लॉन मे धूप की छतरियाँ अभी तक भी लगी हुई है जिनके नीचे कुछ कुर्सियाँ और टेबले पडी हुई है। ताँगेवाले ने अपने दाहिने हाथ को, जिसमे चाबुक है, उठाकर बताया है कि यहाँ एम एल ए रहते है। कोन्सिल के मेम्बरो के घरो मे होली काफी देर पहले खत्म हो चुकी है, यह मै साफ देख पा रहा हूँ, क्योकि इस इकहरी बिल्डिग के सामने के हरे लॉन मे बने हुए बच्चो के खेलनेवाले झूले फिसलनेवाली चिकनी सीढियाँ—सब पर उजले कपडे पहने हुए बच्चे खेल रहे है। फव्वारे का जल हवा के कारण इधर-उधर उडता हुआ गिर रहा है। 'यहाँ फिल्म बनती है जनाब'—और यह कहते हुए ताँगेवाले ने अपना पीला-पीला कफ उस चिकनी सडक पर गिरा दिया जिस पर कही-कही गोबर पडा हुआ है, और कोवे आसपास के पेडो से कभी-कभी आकर उस गोबर मे किसी दाने के लिए चोच मार जाया करते है। स्टूडियो के लोहे के दरवाजे के पार एकदम खुला-खुला-सा लग रहा है। मद्रास के स्टूडियो मुझे याद आ रहे थे। मै खूब अच्छी तरह समझ सकता हूँ कि यहाँ पर 'इन-डोर शूटिंग' ही होती होगी, क्योकि पहाड, समुद्र वगैरह मुझे कही भी नही दिखायी दे रहे है। यह सामने दैनिक अखबार का साइन बोर्ड लगा हुआ है । बाहर की दीवार मे पतली जालियोवाली लम्बी आलमारी-सी बनी हुई जगह मे सुबह का अखबार लगा हुआ है जो आज तो इस समय पूरा रँग उठा है, पर, रोज जब ऐसा न होता होगा, तब इस सामने के स्टूडियो के मेक-अप-मैन, कैमरा-मैन, और दफ्तर के बाबू जरूर ही पैसे की बचत करने के ख्याल से पढने आते होगे ।

मै बहुत ही झुंझला उठा हूँ। कितने मरियल तरीके से यह घोडा चल रहा है—टप् टप्, टिप् टिप् ! मै इस ताँगेवाले को कैसे बताऊँ कि यदि एक बजे तक नही पहुँच पाता हूँ तो मेरा दोस्त जरूर ही समझ लेगा कि 'अब कौन आयेगा'—और फिर जाने क्या हो !, मै अब किस कदर अपनी घडी देखना चाह रहा हूँ कि आखिर मुझे चले कितने घटे हो गये। ओह ! मैने अपनी घडी कितने झुंझलाकर वापस जेब मे डाल ली है क्योकि अभी भी एक बजने मे पन्द्रह मिनट बाकी है। मेरा दम घुटने सा लगा है, जरूर ही यह घडी रंग से भीगकर बेकार हो गयी है और अब मुझे इस घडी को किसी घडीसाज को दिखाना पडेगा, और फिर तो घडी गयी समझो। मै जान रहा हूँ कि ताँगेवाला इस पीली बिल्डिग को, जो

दाहिनी और है और जिसके सामने से होकर इस समय मेरा ताँगा गुजर रहा है, 'रेडियो' कहकर मुझे दिखाना चाहता है। मै डर रहा हूँ कि यह पागल ताँगेवाला कही इस सीमा तक तो सीधा नही है कि इसने मुझे लखनऊ दिखाने का भी काम अपने सिर पर ले लिया हो। किस खरामाँ तरीके से वह ताँगा हाँक रहा है, जैसे आज दिन भर उसे सिर्फ यही सवारी पहुँचानी है और इस सवारी को भी जैसे दिन भर इसी ताँगे मे बैठे रहना है।

कोई कार बार-बार हॉर्न दे रही है। ताँगेवाला अपनी ही धुन मे बडबडा रहा है—"किब्ला! बगल से क्यो नही निकल जाते? क्या किसी के सिर पर से होकर जाइयेगा? क्या जमाना आ गया है जनाब! कहाँ वे पहले की सवारियाँ, और कहाँ ये आज की सवारियाँ—तौबह, न बैठनेवाला ही खतरे से खाली, और न रास्ता चलनेवाला ही। अब भला इन्हे कौन समझाये? ."

मै सडक पर जाते हुए हर व्यक्ति को अब पुरी समझ रहा हूँ और इसी गलती मे हर आदमी मेरे ताँगे के पास मे धीमे-धीमे पीछे छूट जाता है। जाने कितने लोग उधर ही चले जा रहे है जिधर मै जा रहा हूँ, मगर मैने उन्हे बिना चले ही पीछे छोड दिया है और वे लोग दूर मे दूरतर होते जा रहे है। सडक पर चलनेवालो के चेहरे पहले धुँधले पडते है, और फिर एक सीमा तो वह आ जाती है जब कि लगता है जैसे सडक पर सिर्फ पैंट्स और फ्रॉक, धोती और साडियाँ ही चल रही हो। ईसाई औरते लाल-पीली चैक के ऊँचे-ऊँचे फ्रॉक और ऊपर मे सफेद खुले गले की कॉलरवाली ब्लाउजो मे बडी खूबसूरत लग रही है और मझे अपने आफिस की वह स्टेनोग्राफर याद आ रही है जो हालीवुड की हर एक्ट्रेस की तरह बाल रखने के शौक मे कई बार बहुत उजबक-सी लगती रही है।

लच के बाद मै अक्सर अपना थर्मास उठा होजरी के अहाते मे लगे सुपारी और नारियल के पडो के नीचे बैठकर उसके साथ कॉफी पीना कभी नही भूलता हूँ।

मगर मै इस समय सचमुच इतना भूखा हूँ कि अगर मेरा दोस्त मुझे कपडे बदलने और नहाने पर जोर नही देगा तो मै जरूर ही खूब सारा पहले खा लेना चाहूँगा।

बिल्कुल भी धूप नही है, पर फटे दूध का-सा सफेद छिछला प्रकाश आसमान से इस समय गिर रहा है और आसपास की ये सारी बिल्डिगे, जो पानी से भीगी हुई है, जी उबा देने वाली सफेदी मे खडी हुई है।

अन्दर की बनियान थोडी-थोडी सूख चली है और मुझे फिर से पिचकारी चलानेवाले उस लडके पर गुस्सा आ रहा है जिसने मेरे कान के पास आकर कितने जोरो से रग फेका था कि वह तो कान का पर्दा फट ही जाता अगर मै तेजी से अखबार की आड नही कर लेता तो। सडक पर जानेवाले अजीब रगो मे पुते हुए आदमियो को दखकर दिल मे हल्की-सी मतली छूटती है कि क्या शक्ल है आपकी! बस, बहुत कुछ इसी तरह मै भी बदसूरत लग रहा हूँगा। इसी बदसूरत शक्ल को लेकर मै पुरी और उसकी उस पत्नी से मिलूँगा जिसे पहली बार देखना है। मुझे अपने पर झल्लाहट आनी स्वाभाविक है, क्योकि

मैं आज के बजाय कल भी तो आ सकता था। कल क्यो ? कानपुर कौन दूर है यहाँ से, शाम को यहाँ पहुँचनेवाली गाडी भी तो पकडी जा सकती थी ।

मेरा ध्यान अब उस बिल्डिग की ओर जा रहा है जो बहुत बडी है । दिल्ली, बम्बई, मद्रास गया हूँ इसलिए यह समझने मे देरी नही लग रही है कि यह बिल्डिग यहाँ का काउन्सिल हाउस है । राष्ट्रीय झडा कैसा गुमसुम डडे मे लिपटा हुआ मौन है ! मैं इस ताँगेवाले के बारे मे बहुत ही ईमानदारी से कह सकता हूँ कि अगर कही ये बिगडे नवाबजादे साहब गाइड का काम शुरू कर दे तो ज्यादा अच्छा हो । वह जिस तरह चारो ओर देखता है और रह-रहकर मुझे कनखियो से देखता है उसमे मैं साफ समझ बैठा हूँ कि यह मुझे 'मनहूस' या 'अहमक' कह रहा होगा दिल मे। क्योकि इसमे और चाहे जितने भी दुर्गुण होगे मगर इसके बारे मे मेरी पक्की धारणा है कि हजरत की नवाबी तो चली गयी, पर तबियत मे, अदाज मे ऐंठ वही है अभी, और दूसरे मुसाहिबियत का चस्का । किसी चीज के बारे मे कहने पर उतर आयेगे तब लीजिए फिर उसका ऐतिहासिक सबध बता जायेगे, साथ ही किस छोटे लाट ने कहाँ पर अपना बावर्चीखाना बनाया फिर खानो की किस्मे, मुर्गियो के अडे देने के तरीको पर मौसम के लिहाज से तफसील बयान—तीतरों का अदाज, बटेरो के जोड, वजीर क्यो नही घोडे की चाल चल सकता है—गरज कि गिलौरियाँ ओठो पर अपना रग दिखाती है और मियाँ कबूतरो की-सी आँखे बनाते हुए सवारी का मनबहलाव करते जाते है।

वह हर बिल्डिग के लिए कुछ न कुछ कहकर फिर न जाने कितनी देर तक बडबडाता रहता है। शायद मेरी शक्ल और कम बोलने से वह यह समझ गया है कि मैं इधर की बोली या तो बिलकुल ही नही समझता या फिर कामचलाऊ ही जानता हूँ । मगर बात ऐसी नही है क्योकि मैं पुरी को बराबर हिन्दी मे पत्र लिखता आया हूँ। अगर इस समय यह ताँगेवाला मुझे बेवकूफ समझ भी लेता है कि मैं लखनऊ की तहजीब और जबान नही जानता हूँ, तो कोई हानि नही देखता हूँ। हालाँकि कोई भी आदमी यह बर्दाश्त नही कर सकता है कि आप उसे सरेआम बेवकूफ मानकर चल रहे हो और वह बिना किसी प्रतिकार के आपके साथ-साथ मौन धारण किये हुए चलता रहे !

अच्छा, तो अभी सामने के घटाघर मे १ बजने मे १० मिनट बाकी है ? और अब मुझे अपनी उस घडी पर जाने कितना प्यार उमड आया है जिसे मैंने गलत समझकर किस बुरी तरह झुँझलाकर जेब मे फेक दिया था । मैं अब उसे अपनी कलाई पर जरूर बाँधूँगा, क्योकि उसका फीता मेरी अदर की जेब से रगड खाकर सूख तो नही गया है, क्योकि अभी तक लिचलिचा हो रहा है, फिर भी बाँधने के काबिल जरूर हो गया है। अखबार पर जहाँ-जहाँ रग गिरा था वह कैसा सिकुड गया है और कई खबरे तो पिघल गयी-सी लग रही है। सुबह के वक्त जिस अखबार और टाइम टेबल को लेकर मैं शान से कानपुर के स्टेशन पर घूम रहा था, वही इस समय घिनौना लग रहा है, लेकिन टाइम टेबल

पर मेरे आफिस की मोहर जो लगी हुई है और आफिस की चीज को यो ही फेका नही जा सकता, दूसरी चीजो की तरह। फिर किसी चीज पर रग गिर जाने से क्या हो जाता है ? ऐसे तो मेरे चेहरे पर, बालो पर—सब पर रग होगा, मगर क्या मै इन्हे फेक दूँगा ? नही !

यह सिनेमा 'केपीटल' है, जहाँ दिन मे मक्खियाँ भिनभिना रही है मगर रात में चमकती हुई सलवारे, नीली फ्राँके, रेशमी साडियाँ और खुशबू की लहरे दौडती होगी। और वह पोस्टर की औरत, जिसके नीचे लिखा है—'मेरी गेट युवर गन'—अपनी बदूक ताने जाने किस का दूर पर निशाना ताक रही है, उसकी बन्दूक की नली के सामने मेरी आँख अब आ गयी होगी—और फिर फायर ! ! पोस्टर की औरत और पोस्टर की बन्दूक ! !

मुझे ऐसा लग रहा है कि अब यह लम्बी सडक जरूर ही खत्म होगी और मुझे तब बहुत भारी प्रसन्नता होगी। मै इस पर अगर पैदल चलता होता तो चलता-चलता जरूर ही थक जाता। मुझे पैट्रोल की ये लाल, पीली टकियाँ बहुत खूबसूरत लगती रही है,—बडी ही स्मार्ट किस्म की छोटी-छोटी दूकाने होती है इनकी, एकदम अप-टू-डेट, बिलकुल टाई की नाट की तरह चुस्त ! मेरे दाहिने हाथ पर एक लम्बी मगर बहुत खूबसूरत सडक,—जिस पर बडी-बडी दूकाने है, जो कि इस समय बद है, गुजर रही है। ताँगेवाला इस बार आती-जाती हुई मोटरो मे उलझा था और वह अपनी सवारी को यह बताना भूला था कि इस बाजार का क्या नाम है ! मैने जब उससे पूछा तो उसने 'हजरत गज' कहकर फिर बड-बडाना शुरू कर दिया। मगर इस बार वह बहुत झुँझलाया-सा लग रहा था क्योकि अब वह बहुत बेरहमी से अपने घोडे को चाबुक से मार रहा था।

दूर होते हुए पार्क की उस सगमरमर की छत्री के ऊपर के उस ताज को मै देखने मे लगा हूँ जो कि आसमान के बादलो के पास दिखायी दे रहा है। बादल, अपने पार की रोशनी मे बहुत तेज उजले वैसे ही लग रहे थे जैसे ग्राउन्डग्लास आसमान मे किसी फोटोग्राफर ने लगा रखे हो। एक-एक साइन बोर्ड पढते-पढते मेरा दिमाग इतना चकराया-सा हो रहा है कि मै बिजली का तार तक पकड सकता हूँ, और बार-बार ताँगे की पीतल की छड कस लेता हूँ अपनी मुट्ठियो मे। 'बेनबो' के साइन बोर्ड मे बिस्कुट कितने अच्छे बने हुए है—कदाचित् सोधे भी हो।

ट्रैक्टर कम्पनी का एक बहुत बडा-सा ट्रैक्टर लाल रग का पुता हुआ बाहर दालान मे 'शो' के लिए रक्खा है, जिस पर एक गदा-सा लडका बैठा रो रहा है, जो बीच-बीच मे रुक भी जाता है। मै इस तरह के बच्चो को बहुत शैतान मानता हूँ क्योकि वे रोते इसलिए नही है कि उन्हे किसी बात से या मार से पीडा पहुँची है, बल्कि वे देखनेवालो की या घरवालो की सहानुभूति उपजा ले अपने लिए, इसलिए रोते है। जब यह सब नही होता तो, तो वे रह-रहकर बीच मे देखने लगते है कि कोई सहानुभूति के लिए आ भी रहा है या नही और उसी आधार पर वे रोने को लम्बा और छोटा, तथा इन्टरवल के साथ जारी रखने मे विश्वास करते है।

मै देख रहा हूँ कि तॉगे ने मोड लिया है—अरे, यह तो नॉर्थ एवेन्यू ही आ गयी और अब मुझे एक क्षण भी इस मरियल तॉगे मे बैठना अच्छा नही लग रहा है। अब दो-तीन मिनट की बात और रह गयी है, मै अपने बचपन के गहरे दोस्त के साथ बैठा हूँगा थोडी देर में—गर्म कॉफी होगी और होगा मेरा दोस्त अपनी पत्नी के साथ , उस दोस्त की पत्नी की वे धुली-धुली सीप जैसी ऑखे, जिन्हे मै अपनी कॉफी के कप मे अवश्य देखना चाहूँगा। पत्नी बन जाने पर औरतो की ऑखो मे रहस्य का नीलापन आ जाता है। दोनो ओर के बॅगलो के सामने आदमी और औरते हॅसते हुए उजले कपडो मे खडे हुए है। उन लोगो के कुत्ते लॉन की घास मे अपनी नाक से सूँघते हुए घूम रहे है। यह पॉच नम्बर का बॅगला है, वहॉ किसी सरकारी रीजनल आफिस का बोर्ड टॅगा हुआ है । मोटर सर्विस कम्पनी का कितना बडा अहाता है जो अभी तक खत्म ही नही हुआ है । यह सामने इडियन टैरी-टोरियल आर्मी का बहुत बडा-सा बोर्ड टॅगा हुआ है जिस पर नीले शब्दो मे 'जॉइन दि आर्मी' लिखा है, और मुझे बगलोर, उटकमड याद आ रहे है। बोर्ड मे बने हुए इस आर्मी मैन की मूॅछे कितनी काली और घनी लग रही है। मगर मै जानता हूँ कि यह सब उस नेशनल गवर्नमेट का प्रोपैगन्डा है, बडी थकान की जिदगी आर्मी की होती है ।

और तॉगेवाला एक बॅगले के सामने आकर रुका है । मै समझ रहा हूँ कि ग्यारह नम्बर नॉर्थ एवेन्यू ही है, क्योकि यह बगलवाला नौ नम्बर का बॅगला है, इस नौ के सामने दस होगा ही। बॅगले के अहाते का दरवाजा खोलकर अब मेरा तॉगा अदर आ गया है। लकडी के इस दरवाजे पर पुरी की नेम-प्लेट जरूर है, मगर पीतल की नही—काली दफ्ती पर सफेदी से लिखा हुआ नाम, जो कि बहुत पुराना पड चुका है। अहाते का दरवाजा जरूर ही पुराना है हालॉकि तारकोल पोतकर चमचमा दिया गया है । लेकिन खुलते वक्त 'चूॅ-चूॅ' की आवाज की थी ।

मै अहाते मे लगी चमेली के सफेद फूलो के पास कल्पना कर रहा हूँ अपने दोस्त पुरी और उसकी पत्नी की, कि वे लोग खडे हुए मेरी प्रतीक्षा कर रहे है। स्त्रियो की पतली लम्बी उॅगलियो की तरह कनेर की पत्तियो पर पीली केसरिया तितलियॉ उड रही है। मेरा दोस्त लाहौर का है और उसे नरगिस के फूलो से मुहब्बत है । शायद पुरी की पत्नी को भी नरगिस ही प्रिय हो। तॉगे के पहिये के रबड के पास रॅग-बिरगे फूलो की क्यारियॉ लहरा रही है—और मै हिल रहा हूँ।

मै बॅगले की बरसाती मे आ गया हूँ। बरसाती पर बेगमबेलिया के लाल फूलो की लताएँ खूब सारी घनी हरी होकर फैली हुई है, किन्तु मुझे इस अहाते मे जो सबसे ज्यादा नफरत पैदा कर देनेवाली चीज लग रही है वह है—इसकी गजी सडक। सोच रहा हूँ कि गिट्टियो की तेज नोके पैरो मे, जब कि विशेष कर वे नगे हो, कितनी बेरहमी से चुभ सकती है, इसका अदाजा लगाया जा सकता है । मै ज्यामिति की थ्योरम की तरह मानकर चल सकता हूँ कि मेरे दोस्त की पत्नी कभी इच्छा हो आने पर भी नगे कदमो से

इस लॉन पर न आती होगी, इस गजी सडक के कारण। मेरे दिमाग मे यह शक्ल बिलकुल फैलती ही जा रही है—एक नहाया हुआ, एकदम गोरा, नर्म, रबर की तरह मुलायम और सॉप की तरह फैल जानेवाला, बच्चो के पैरो से बहुत कुछ मिलता-जुलता उजला चरण और उसके ठीक नीचे चाकू की धार की तरह दो गिट्टियॉ—पैर यदि जल्दी से नही हटाया गया तो—मे आगे भी सोच सकता हूँ, मगर सोचूँगा नही, क्योकि ऐसा सोचकर मै अपने दोस्त की उस बीबी का वह खूबसूरत पैर बिगाड दूँगा कि जिसकी ऑखे सीप जैसी धुली हुई होगी।

मै तॉगे से उतरकर सीढियॉ चढ चुका हूँ। तॉगेवाला पैसा लेकर कान मे खुँसी हुई बीडी निकालकर सुलगाने मे लगा है। कुछ ही देर मे यह तॉगेवाला इस अहाते से निकलकर इस नॉर्थ एवेन्यू से होता हुआ पहले तो बडी सडको पर और फिर जाने कहॉ आदमियो के समुद्र मे खो जायेगा, और तब मै चाहूँगा तो भी यह चेहरा मुझे देखने को नही मिलेगा। दो-चार चिडियो की चहचहाट के अलावा बँगले मे शाति है। मगर अब तॉगे के जाते हुए पहियो और घोडे की ढीली नालो की आवाजे शुरू हो गयी है। किन्तु इस तॉगे के चले जाने के बाद तो फिर चिडियॉ होगी, मै हूँगा, और होगा मेरा दोस्त तथा उसकी वह पत्नी जिसे मैने अभी नही देखा है।

मै उम्मीद कर रहा हूँ कि मेरे दोस्त को मेरे आने की सूचना हो गयी होगी औरअभी वह हँसता हुआ आ रहा होगा। आप सच माने, मै अपने इस दोस्त को बहुत प्यार करता हूँ। इस प्यार के पीछे हमारे बचपन की बेवकूफियॉ ज्यादा है। मै समझता हूँ कि यदि बेवकूफियॉ प्यार को जन्म देती है, तो मूर्खता प्रेम को।—हम दोनो आज चाहे तो कॉफी की चुस्कियॉ लेते हुए इन बेवकूफियो को याद करते हुए बहुत सारा हँस भी सकते है मगर उन दिनो हमने ये बेवकूफियॉ कितनी लगन और ईमानदारी से की थी। मगर अब मै ज्यादा देर बिना आवाज दिये खडा नही रह सकूँगा। आखिर मेरा दोस्त अन्दर होगा ही, उसे क्या मालूम हो पायेगा कि उसका दोस्त, मै आगया हूँ और उसके बँगले की छत के नीचे रग मे नहाया हुआ खडा हूँ। मैने आवाज देने की पूरी तैयारी कर ली है, गले मे दो-तीन बार थूक घोटकर उसे गीला भी कर लिया है और मैने नाक से सॉस लेकर यह भी देख लिया है कि मै पूरी तरह बहुत ही शरीफाना तौर से आवाज लगा सकूँगा। हो सकता है मेरा दोस्त किसी ज़रूरी काम से कही गया हो, तो उसकी पत्नी इस आवाज को सुनकर बाहर आये तो मेरे पुकारने के ढग पर यह समझ सके कि मै ही वह दोस्त हूँ जिसका रास्ता उसका पति देख रहा है और उसके पति ने उससे जरूर ही चर्चा की होगी। मगर मै देख रहा हूँ कि दरवाजे सब अदर से बद किये हुए लग रहे है। दरवाजो के शीशे हल्के चमक रहे है। बीच-बीच मे लकडियो के टुकडे आ जाने से उन दरवाजो के शीशो मे अहाते का लॉन, चमेली, कनेर, लताएँ—सबकी छायाएँ गिर रही है। मगर शीशे मे वे छायाएँ टूटे बेंत की तरह लग रही है।

नही, मैं निश्चय कर रहा हूँ कि आवाज नही दूँगा। क्योकि इन बद शीशो के दरवाजो के पार बैठा हुआ मेरा दोस्त आवाज सुनने के बाद समझ जायगा कि मै आ गया हूँ, और मेरा पुकारना उसकी प्रतीक्षा या उत्सुकता पर पानी फेर देगा। मैं इन दो हरे-हरे पुते हुए बेत के मोढो मे से किसी एक पर टॉग पर टॉग रखकर चुपचाप बैठ जाऊँगा। और बाहर की सडक, सामने के बॅगले के उन चमकते हुए पीतल के गमलो को देखते हुए प्रतीक्षा करूँगा कि मेरा दोस्त बाहर आये और मुझे बैठा देखकर एकदम चीख पडे—अरे, तुम कब आये ? अजीब आदमी हो ! ! कब से राह देख रहे है हम, चलो, चलो, अदर चलो—और फिर वह अपनी पत्नी को पुकारेगा—क्या नाम होगा उसका?—यही कोई अमृत, सतोष !—और मैं सचमुच एक हरे मोढे पर बैठा हूँ। मोढा, जब मैं बैठा हल्की चड-चड की आवाज कर रहा था और मैं अब दोस्त के बॅगले के मोढे पर बैठा सामने के लॉन, कनेर, चमेली और पानी की तरह मीठी हरी दूब, मेहदी की झाडियाँ देख रहा हूँ।

तीन-चार पीली-पीली कागज की तरह हल्की तितलियाँ फूलो पर उड रही है। एक खूबसूरत कुत्ता उन तितलियो को मुँह मे भर लेने के लिए क्यारियो मे गिरता-पडता दौड रहा है । आज के इस उत्सव की दोपहरी मे भी दूर मे आती हुई किसी कौवे की फटी हुई आवाज़ एक अजीब उदासी-सी भर रही है । मगर मै इस तरह चुप बैठकर अधिक बेवकूफ नही बन सकूँगा। मै अब अपनी गीली चप्पलो की भद्दी आवाज दालान मे करता हुआ बरसाती मे खडा होकर फिर मे किसी नये निर्णय को कर लेना चाहने लगा हूँ। मामने के उस बॅगले मे कोई बगालिन मुझे घूर-घूरकर देख रही है । उसके लम्बे बाल पीठ पर फैले हुए सूख रहे है, शायद वह बहुत देर पहले के नहाये बालो की नमी अतिम रूप से दूर कर लेना चाह रही होगी ताकि फिर उनमे तेल डालकर जूडा बाँधा जा सके । मगर मुझे किसी दूसरे के जूडे से कोई मतलब नही।

मेरे सामने इस समय एक आदमी क्यारियो की ओर मुँह करके मिट्टी खोद रहा है। जरूर ही यह माली होगा, क्यारियो मे गड्ढा करता हुआ फिर रहा है । मै जिस समय बॅगले मे आया था यह आदमी तब पीछे रहा होगा। बॅगले के पीछे जरूर ही टमाटर, गोभी लगी होगी और यह उधर का काम समाप्त कर अब इधर आया है।

जब मैंने माली को पुकारा, वह अपने हाथवाली खुर्पी जिसमे मिट्टी लगी हुई थी कमर मे खोसता हुआ बोला कि 'मालिक आज सुबह तार पाकर बरेली चले गये है।' मैं बहुत अधिक झुँझला गया हूँ। मै इस दो पैसे पानेवाले माली का जरूर ही गला घोट सकता हूँ जो झूठ बोल रहा है । मगर मै फिर सोचता हूँ कि वह क्यो झूठ बोलेगा ?—तो, मुझे यहाँ से एकदम चल देना होगा ? मुझे अपनी धुँधली पडी हुई दृष्टि मे ताँगेवाला याद आ रहा है जिससे थोडी जान-पहचान हुई थी और किसी कदर अब तो मै इस पूरे लखनऊ मे उसी को जान-पहिचानी कह सकता हूँ। वह चला गया है और मुझे भी अब चल देना होगा। टाइम टेबल पर सिकुडन पडी हुई साड़ियो के इश्तहारवाली औरत इस समय

बहुत बुरी लग रही है, क्योकि उसके हँसते हुए चेहरे को मूर्खतावश मान रहा हूँ कि वह मेरी परेशानी पर हँस रही है । जल्दी से एक उँगली को ओठ से थोडा गीला कर टाइम टेबल के पन्ने पर पन्ने पलटता जा रहा हूँ। मै एकबारगी ही जान लेना चाहता हूँ कि वह कौन सी गाडी है जो मुझे कानपुर के लिए इस समय मिल सकती है । मै दिन भर चुप रहा हूँ, अब मेरी तबियत चीख पडने को हो रही है । लौटते मे इस बार खिडकी के बाहर सर निकालकर जरूर गाऊँगा, चाहे मेरी आँखो मे कितनी ही बार रेल का कोयला गिरे। इस चुप रहने से ज्यादा कडवा अनुभव वह नही होगा।

मै अब बरसाती के बाहर निकल आया हूँ। पुरी के बँगले की यह बाहर निकली बडी-सी फ्रेंच खिडकी जो कि बद है, मै समझ सकता हूँ कि इसी खिडकी के पास दोपहरी मे पुरी की पत्नी खडी रहती होगी और यही कमरा इस दम्पति का ड्राइग रूम होगा। इसी ड्राइग रूम मे फ्रेम किया हुआ वह हँसता हुआ फोटोग्राफ भी होगा जो कि ठीक विवाह के समय लिया गया होगा। शादी के बाद फोटो लेना भी एक प्रथा है। . कुर्सियाँ होगी, सोफा होगा और पुरी का सबसे प्रिय वह अखबार 'माडर्न रिव्यू' भी कई फाइल्स मे होगा, जिसके बल पर उसके जैसा व्यापारी आदमी भी कला और साहित्य पर बोल-बोलकर क्लबो मे रौब झाडा करता है । मगर मै अब इस अहाते के बाहर के दरवाजे पर पहुँच रहा हूँ। रेलवे टाइम टेबल ने मुझे कोरा जवाब दे दिया है कि चाहे कुछ भी हो, ६ बजे के पहले कोई गाडी नही मिल सकती है। और मै पाँच घटे तक अपने ये बदतमीज कपडे और रगो-भरा बदसूरत चेहरा लिये लखनऊ की इन साफ-सुथरी सडको पर मारा-मारा फिरूँगा। मै बहुत थक चुका हूँ। किसी पार्क मे पैर फैलाकर सोने का इरादा मै करना चाहता हूँ। और इस भीगी उदास दोपहरी की नीद मे मै ज़रूर ही धोबियो को स्वप्न मे देखना पसद करूँगा कि वे एक साथ हजारो पाजामे, बनियाने सुखा रहे है—साथ ही मेरे चारो ओर साबुन की सफेद खूबसूरत टिकियाएँ होगी। दो फर्लांग लम्बी रस्सी पर बरेठे बहुत सारे उजले धुले कपडे सुखा रहे होगे, हवा मे जो कि उल्टी टँगी हुई फूली बतखो जैसे लगेगे। मेरे चारो ओर स्वप्न मे तब उजले कपडो का वरदान होगा।

मै अब बहुत तमीज के साथ दोस्त के इस अहाते के दरवाजे को बद करूँगा पहले और फिर सोच सकूँगा कि किधर चलना शुरू करूँ जिसमे पहले किसी म्युनिसिपेलिटी के बम्बे से पेट भर पानी पी सकूँ, और तब पार्क की किसी ऊँची बैंच पर पैर हिलाते हुए शाम तक के लम्बे-लम्बे खाली घटो का हिसाब लगा सकूँ। दरवाजा मै खुला भी छोड सकता हूँ, मगर कोई गाय घुमकर इन नरगिस के फूलो को खा भी तो जा सकती है, जब कि बहुत से आदमियो को नही मालूम कि इतने सुन्दर फूलो का क्या उपयोग है, तो फिर गाय तो जानवर ठहरी। गाय को हालाँकि माली अदर नही घुसने देगा, मगर मै इस समय ही जैसे देख रहा हूँ कि वह माली मुझसे बात करने के बाद पीछे की ओर जाने क्यो चला गया है।

मैं दरवाजा बद भी कर चुका हूँ और अब मेरा पहला कदम उठेगा, उसके बाद दूसरा तथा उसके बाद तो इस अजनबी शहर मे मेरे जाने कितने कदम उटने ही चले जायेंगे ।

मगर मै देख रहा हूँ कि माली दौडता हुआ आ रहा है और वह अपना दाहिना हाथ मुझे ठहरने के लिए ऊँचा करके शायद मुझे पुकार भी रहा है । मेरा पहला कदम जो कि दिमाग मे तो उठ चुका है लेकिन मुझे उसे रोक देना पडा है और मैं इस माली की बात को बहुत रोब से सुनना चाहता हूँ, इसलिए गोल किये हुए अखबार को बराबर पाजामे पर बजा रहा हूँ—जैसे मैं दोस्त के न होने की बात को सुनकर किसी भी तरह की दिमागी उजलत मे नही हूँ, जैसे मेरे लिए इस तरह की बातो मे कोई भी परेशानी नही है, क्योकि अगर कही मेरी हालत पर इस माली को तरस आ गया तो मैं सचमुच कही का न रहूँगा ।

"चलिए, आपको बीबी जी बुला रही है"—खीसे निपोरते हुए माली ने कहा ।

तो क्या पुरी तार पाकर अकेला ही गया है ? मैं बहुत उजलत मे और जल्दी मे हमेशा ही जाने क्या-क्या सोच जाया करता हूँ । यही देखिए, बात कितनी साफ होगयी है अब । पुरी को जो तार मिला है सुबह, वह जरूर ही दूसरी तरह का तार होगा, तभी तो वह अकेला गया है, क्योकि उसे मालूम है कि मैं आनेवाला हूँ । साथ ही बीबी से भी कह गया है कि मैं आनेवाला हूँ । और अब मैं बहुत प्रसन्न हूँ । मैं चाहता हूँ कि लम्बे-लम्बे डग मारकर जल्दी से अपने दोस्त की बीबी के पास पहुँचकर हँसता हुआ कहूँ कि,

मैं आगया हूँ ।

वापस मेरे कदम उठ रहे है—क्यारियाँ, रग-रग के फूल मेरी नीची नजरो के नीचे से गुजर रहे है । लता की मोटी जड और खुरदरी सडक पर मेरे भद्दे मोटे पैर-जिन पर रग जमकर चीठा हो गया है—मैं चल रहा हूँ । वे ही तीनो सीढियाँ—और माली ने मुझे बाये हाथवाले कमरे की ओर इशारा किया है, जहाँ एक परदा हिल रहा है । परदे और दरवाजे के नीचे की चौखट के बीच जो दरार है वहाँ ऊँट की खाल के रग का पाँवपोश, जिस पर लाल अक्षरो मे 'वेलकम' दिखायी दे रहा है । दरवाजे पर एक सुनहरी नेम-प्लेट लगी हुई है—'मिसेज रजना—', और आगे मेरे दिमाग ने आँख बद करके पूरा पढ लिया है—'मिसेज रजना पुरी' और अब मैंने बहुत धीमे से तमीज के साथ परदा ऊँचा कर दिया है ।

मेरे सामने हरी साडी, जो कि खास किस्म की है और जिसे दक्षिणी औरते पहनती है, पहने हुए, बॉफकट मे घुँघराले बाल, हँसती हुई आँखे, गोरा रग और प्रणाम करते हुए दोनो हाथ—तो यही मेरे दोस्त की पत्नी रजना है ।

"आइये, शायद अभी आ रहे होगे आप कानपुर से ?

"जी हाँ, इसी साढे बारह की गाडी से आया हूँ ।"

मगर, मैं यह विश्वास क्यो कर रहा हूँ कि यह औरत पजाबी भी है और बगालिन भी ? लेकिन मुझे इस समय दूसरा और कुछ न सोचकर यह कहना है कि अजीब परिस्थिति

है जो कि पुरी आज चला गया सुबह ही।

"देखिए, पुरी ने आपके बारे मे इतना सारा पत्रो मे लिखा है कि बस देखने भर की ही देर थी।"

मुझे लग रहा है कि मै बहुत अच्छे तरीके के साथ व्यावहारिक बाते कर सकता हूँ। मेरे दोस्त की बीबी रजना बहुत जोरो से हँसती हुई बगल के सोफे पर बैठ रही है। मुझे अपने बारे मे इतने जल्द धारणा बदलनी पड जायगी, इसकी मै कल्पना नही कर रहा था। मुझे अपने दोस्त को बधाई देनी होगी कि वह इतनी हँसमुख बीबी पा गया है, नही तो पत्नी के नाम पर मुझे जाने क्यो गूँगे व्यक्तियो का ही स्मरण आता है, या फिर बडे-बडे अस्पतालो मे जो अस्थिपजर खडे रहते है—उन्हे आप कपडे पहना दीजिए, जूडा बाँध दीजिए, पाउडर लगा दीजिए—और आप चाहे तो उसे पत्नी की सज्ञा भी दे सकते है। मगर मेरे दोस्त की यह पत्नी वैसी सब कुछ नही है। मेरा दोस्त भी कितना मूर्ख है कि इस 'रजना' सरीखे खूबसूरत नाम को वह मुझे पत्रो मे 'तुम्हारी भाभी' 'तुम्हारी भाभी' कहकर लिखता रहा है। रजना ने दो-तीन बार मेरी ओर देखकर अब अपनी पलके नीची कर ली है, मै जान रहा हूँ कि वह जरूर ही कुछ बोलना चाहती है।

"पुरी कल तक तो आ ही जायगा रजना जी —"

वह फिर हँसी—

मुझे इस बार यह हँसी उतनी नही भायी। नही जी, साफ बात यह है कि बिलकुल ही अच्छी नही लगी। अब समझा, मेरे दोस्त की पत्नी को मेरी शक्ल पर हँसी आ रही होगी। ठीक है, खराब और उजबक शक्ल देखकर सबको हँसी आती ही है, मगर मेरी इस समय की शक्ल को देखकर हँसना तो मेरे ऊपर सरेआम ज्यादती है। लोगो ने रग इस बुरी तरह से डाल दिया है कि कोई दूसरा ही क्यो, मै खुद अपने को पसद नही कर सकता हूँ। मगर फिर भी क्या रजना को ऐसे हँसना चाहिए ?

"आपके दोस्त आज सुबह तार पाकर घर बरेली चले गये है—"

अब की बार हल्के हँसते हुए रजना कह रही थी।

"जब वह आपको यहाँ छोड गया है तो इसका मतलब हुआ कि वह एक-दो दिन मे आ ही जायगा।"

और फिर हँसी।

मुझे यह नही मालूम था कि कभी मुझे ज्यादा हँसनेवालो पर यह धारणा बनानी होगी कि मै ऐसो से नफरत करता हूँ, जब कि हँसना हमारा राष्ट्रीय गुण नही है। हम भारतवासी वैसे ही गम्भीर हुआ करते है, तब हमारी महिलाओ का इस प्रकार हँसना क्या स्त्रियोचित है ?—क्या मै सचमुच बराबर बेवकूफी की बात कर रहा हूँ जो यह रजना इस इतने बडे कमरे को अपने सफेद दाँतोवाली हँसी से भर रही है ? मै अब अपनी घडी निकालकर सामने बैठा हुआ रजना पर यह प्रदर्शित कर देना चाहता हूँ कि मै चलकर आया

हूँ और थक भी तो सकता हूँ। जिस समय मैंने घडी अदर की जेब से निकाली—(मुझे याद नही पडता कि कब उसे कलाई से छोडकर अदर की जेब मे रख लिया था)—एक बजकर पच्चीस मिनट हुए थे, और मै स्पष्ट रूप से यह सोच भी चुका हूँ कि या तो सब घडियाँ खराब हो गयी है या फिर मेरा दिमाग। घडियाँ गैरन्टीड होती है, किन्तु आदमी का दिमाग नही।

अब की बार उसने एक अलमारी का पल्ला खोलते हुए कहा—

"क्या सोच रहे है आप ?"

हालाँकि हँसी का पुट इस बात मे भी था मगर मै इस बार हँसी को बात मे से काटकर गम्भीर कथन मान सकता हूँ। यह औरत बहुत खुले और मीठे स्वभाव की है, खूबसूरत पति की सुन्दर पत्नी है और पैसे की चिन्ता के नाम पर शायद यह रहती होगी कि बाकी का पैसा कहाँ और कैसे खर्च किया जाये।

उसने 'थ्री केसल्स' का हरा टिन काटते हुए लाइटर के साथ मेरे सामने की छोटी-सी टेबल पर रख दिया जिस पर मीने की एक राखदानी पहले से ही रखी हुई थी।

"आप सिगरेट पीजिए, तब तक प्रबन्ध हुआ जाता है।"

तम्बाकू की कीमती गध मे मेरा दिमाग खुशबू बनता जा रहा है और मैंने लाइटर कितने स्मार्ट तरीके पर जीवन मे पहली बार जलाया है कि मेरी तबियत एकदम खुश हो गयी है।

पहला कश, गध भरा कश ! !

और फिर तो पूरी सिगरेट ! कमरे मे तम्बाकू के गध वाले छल्ले ही छल्ले तैरने लगे है। मेरे दोस्त का कमरा और सुगधित सिगरेट। मेरा दोस्त भी आज सुबह तक कमरे मे बैठा होगा सिगरेट के छल्ले छोडता हुआ, और इसी तरह हँसती हुई यह रजना, मेरे दोस्त की पत्नी, बस हँसती रही होगी उसके साथ।

दोनो कितने अच्छे है—इन्हे कदाचित् किसी तीसरे की कोई आवश्यकता अनुभव नही होती होगी।

मैंने कितनी फुर्ती के साथ उस बडे छल्ले मे से दूसरा छल्ला निकाला है।

सिगरेट की खुशबू, दोस्त का कमरा ! !

रजना की हँसती हुई आँखे—धूएँ के गोल गोल छोटे-बडे छल्ले कमरे मे तैर रहे है।

रजना शायद कमरे मे अभी थोडी देर के लिए नही थी। वह फिर लौट आयी है, मगर हँसती हुई—

"सुनिये, अब आप गुसल ले ले—मगर एक बात कह दूँ कि मै आपके दोस्त की पत्नी नही हूँ।"

और फिर हँसी—

मेरे गले मे खुशबूवाले धूएँ के गोल-गोल छल्ले घूम रहे है। मुझे सचमुच चक्कर आ जायगा। मै महसूस कर रहा हूँ कि आज मेरे साथ कोई बहुत बडा मजाक करने पर तुला हुआ है। माली ने जिस समय कहा था कि पुरी नही है, मुझे अपनी गीली चप्पलो के साथ तेज कदम बढाते हुए चले जाना चाहिए था। यह रजना कहती है कि वह पुरी की पत्नी नही है। और अब मै रजना के बाल, आँखे, नाक, नीचे-ऊपर के ओठ, ठोडी, कठ सब के सब घूर-घूरकर देख लेना चाहता हूँ जिसमे मै यह स्पष्ट कर लूँ कि यह औरत--जो केवल हँसना जानती है, मेरे दोस्त की पत्नी कदापि नही है।

जलती सिगरेट अगर मै फेक नही दूँगा तो वह उँगली को अवश्य जला देगी। मगर मै इस समय सिगरेट के बारे मे सोचने से ज्यादा महत्व का काम कर रहा हूँ कि दूसरी बार सामने बैठी हुई रजना को ऊपर से नीचे तक देख रहा हूँ। यह कौन है? यह हरा ब्लाउज पहने है जिसके अदर उसका शरीर गुसल किया हुआ, किसी खुशबू वाले साबुन से धुला और मुलायम तौलिये से पुँछा हुआ बद है। केले की तरह चिकनी बाँहो मे यह ब्लाउज कैसा फँसा-फँसा-सा लग रहा है। गले मे सफेद रग की माला पडी हुई है। कलाइयाँ--मै मानता हूँ कि इतनी खूबसूरत दक्षिणी महिलाओ की भी नही होती है, उनमे एक तरफ लेडीज रिस्ट वाच के नाम पर सोने की एकदम छोटी घडी बँधी हुई है और दूसरी कलाई मे सोने की एक चूडी। रजना के उजले पैरो मे बहुत हल्की उम्दा-सी चप्पले है और नाखूनो पर क्यूटेक्स सूखकर जम गयी है जो कि अब इस समय छोटे-छोटे लाल रग के दस शीशो की शक्ल ले बैठी है। ऊपर चलता हुआ पखा पैरो के इन दस लाल शीशो मे चलता हुआ दिखायी दे रहा है। मै बेवकूफो की तरह जाने क्यो परी की कहानी वाली बात सोचने लगा हूँ कि रजना के पैरो मे लाल रग के ये क्यूटेक्सी शीशे जैसे दस लाल पख है, ओर मै इस समय अपने विजगापट्टम वाले सीलन भरे मकान मे बॉस की कुर्सी पर बैठा हुआ सिगरेट पी रहा हूँ, और यह रजना अपने लाल पखो को फैलाती हुई मेरे नजदीक उतर आयी है, जब कि मै जानता हूँ कि ये कल्पना के छोटे-छोटे लाल पख कुछ नही है, जो कि पैरो के धुल जाने पर कही नही रहेगे। कमरे मे पखा चल रहा है और मुझे ऐसा लग रहा है कि मेरी बनियान अभी तक गीली है और मुझे हल्का जाडा लग रहा है। मै चाहता हूँ कि पखा बद कर दिया जाये।

"क्या देख रहे है आप इतने गौर से?"

रजना यह कहते हुए उठी है। मै अपने दिमाग को एक बार पूरी तरह उसी भाँति झकझोर लेना चाहता हूँ जैसे मिट्टी मे लोट लगा लेने के बाद गधा उठकर पूरी तरह अपने शरीर को झकझोर लेता है।

तो, रजना मेरे दोस्त की पत्नी नही है, यह कोई और है, जिसे मै नही जानता। इसकी इस हँसी का कारण अब मेरी समझ मे साफ आ रहा है कि यह दिल मे किस कदर बेवकूफ समझ रही होगी। मगर मै अपनी गलती कही से भी नही समझ पा रहा हूँ। बस, एक जगह मै जरूर चूका हूँ कि जब रजना की मै नेम-प्लेट पढ रहा था, कितने विश्वास

के साथ आँखे बद करके रजना के नाम के साथ 'पुरी' और जोड गया था। मुझे अब स्वय पर कितना तरस आ रहा है कि जब मै चला जाऊँगा और यह रजना नाम की तेज औरत, पुरी और पुरी की वास्तविक पत्नी के सामने कितना सारा हँस-हँसकर मेरा मजाक बनाएगी, और तब मेरे दोस्त की वह बीबी शायद यह धारणा बना ले कि पुरी का दोस्त सचमुच ही कोई मूर्ख व्यक्ति है। यह ओरत तो मुझे कही का भी रहने नही देगी। कितने बेलाग तरीके पर हँसती है। दूसरो की पत्नियो के सामने बेवकूफ सिद्ध हो जाने से बढकर दयनीय अवस्था कोई और नही हो सकती।

मुझे अब अपने आप पर से विश्वास उठता जा रहा है। गुस्से के साथ जो सिगरेट 'एश-ट्रे' मे बुझायी थी वह अभी तक धूआँ दे रही है। धूएँ की एक पतली-सी डोरी छत की ओर उठती है मगर पखे की हवा धूएँ की डोरी को और अधिक ऊपर न आने देने के लिए फैला दे रही है। यह मै क्या सोच रहा हूँ, बिलकुल ही फिजूल की बात दिमाग मे जाने कहाँ से आ रही है! मुझे इस औरत का आतिथ्य स्वीकार न कर यह प्रदर्शित करना होगा कि नही, तुम जिस व्यक्ति को इतना असहाय और दयनीय माने बेठी हो वह वैसा नही है। बनियानो का विज्ञापन कितने तरीको से और किस-किस तरह से किया जाना चाहिए, इस पर वह पूरे व्यापारी वर्ग मे मशहूर है, और तो और, तुम्हारे सामने बैठा हुआ यह व्यक्ति, बनियानो के विज्ञापन के सम्बन्ध मे किताब लिखने तक की कई बार सोच चुका है। मेरी पीठ-पीछे के दरवाजे पर जो परदा है उसके पार से रजना की आवाज आ रही है। मै अब समझ पा रहा हूँ कि मै क्यो चुप हूँ—क्योकि उसके आने का रास्ता जो देख रहा हूँ। उसके आते ही मै उसे हँसते हुए धन्यवाद दूँगा और 'कोई आवश्यकता नही' कहकर और अपने दोनो हाथो को उठाकर नमस्कार करके यहाँ से चल दूँगा—इस ड्राइंग रूम से दूर, परदे के पार, बरसाती, लॉन, अहाते का दरवाजा और फिर तो यह नॉर्थ एवेन्यू जल्दी से पार करने पर ही सोचूँगा कि कहाँ और किधर जाना होगा। खैर, अब मै महसूस कर रहा हूँ कि अगर तेजी से सोचता रहूँ तो काफी ठीक सोच सकता हूँ। जब इस औरत से मेरा कोई सम्पर्क नही, तब क्यो उपकार लूँ? न तो यह मेरी मित्र है, और न मित्र की पत्नी ही।

रजना को देखते ही मै खडे होने की सोच चुका हूँ और खडा हो भी गया हूँ। मै एक साँस मे बोल जाऊँगा ताकि वह फिर कही हँसकर मुझे चिढा न दे। मै फिर विचारो मे वैसे ही नही उलझना चाहता हूँ जैसे कपडा बेर की डालियो मे उलझ जाता है—कपडे को इधर से निकालो तो उधर अटक जाए, और बस कपडा फटता चला जा रहा है—बेर और काँटो का क्या नुकसान इसमे ?

"तो मै अब आज्ञा लूँ.."

और मैने आज से दस साल पहले उदयशकर को जिस नाटकीय, कलात्मक ढंग के साथ हाथ जोडते हुए मद्रास के आर्ट स्कूल मे देखा था ठीक वैसे ही व्यावहारिक मुस्कान

के साथ अपने हाथ जोड लिये है । अब यह जरूर मुझसे कहेगी कि—"अच्छा, तो फिर ?" "कहाँ ?" "क्या नहाइयेगा नही ?"

मै मन ही मन बहुत खुश हो रहा हूँ कि यह औरत उतनी समझदार नही है जितनी कि मै इसे थोडी देर पहले समझ रहा था । क्योकि यह अभी भी विश्वास कर रही है कि मै ठहरूँगा, मगर अबकी बार मै इतनी सरलता के साथ नही कहूँगा—कुछ कडा पड सकता हूँ।

"देखिए अधिक कष्ट की कोई जरूरत नही है, क्योकि आपसे कोई परिचय तक नही और "

"ओह ! तो आप मेरा परिचय न मिलने के कारण गुस्सा होकर जाने की बात सोच चुके है ?"

अवकी वार वह हँसी नही वरन् गम्भीर होकर पास के एक सोफे पर बेठकर अपने दोनो हाथो की कलाइयो को फँसाकर उस पर ठोडी टिकाकर बोलने लगी है—

"इसके पहले कि मे अपना परिचय दूँ—हो सका तो आप आज शाम की गाडी से चले जायेगे, इस बात का विश्वास दे तो मै अपना परिचय दूँगी—और फिर आपको तो परिचय देना ही होगा—" कहती हुई वह अनायास ही बहुत गम्भीर हो गयी है ।

मुझे अपने कानो पर विश्वास नही हो रहा है कि मै क्या सुन रहा हूँ । मुझे लग रहा है कि मेरे दिमाग मे हजारो चीटियाँ, बालो के-से बारीक कदमो के साथ दौड रही है और अब मै कभी भी ठीक तरह नही सोच सकूँगा । कोई अपने अतिथि से इस तरह कहता है ? मै जरूर ही गलत सुन रहा हूँ । रजना सरीखी हँसमुख औरत, एक अपरिचित व्यक्ति से जो थोडी देर पहले कही से आया है (कम से कम उसके लिए जरूर ही) ओर थोडी देर वाद अपने आप ही चला जानेवाला है—बल्कि सच तो यह है कि वह जा ही चुका था, बस कदम उठ जाते तो अब तक तो जाने वह किस पार्क मे सोता रहता, इस रजना को यह सब कहना ही न पडता । किन्तु प्रश्न इस समय यह नही है कि इसने ऐसा क्यो कहा मुझसे, बल्कि यह ऐसा अपनी ओर से इस तरह कहकर मेरी दृष्टि मे क्यो छोटा बन रही है ? क्या यह न समझेगी कि इसके इस वाक्य से पूरा चरित्र, जो कि मुझे तो कम से कम रहस्यमय—जाने कैसा लग रहा है, कोई गलत भी तो सोच सकता है !

"आपने कुछ कहा नही मेरी बात के जबाव मे—शायद आप बहुत थक गये है ।" रजना कितनी बनावट की हँसी के साथ यह बात कह रही है इसे मै तक समझ रहा हूँ ।

"देखिए, मेरी बात आपको बुरी लगी है और अपनी इस बात का प्रभाव नही जानती थी सो भी नही—किन्तु . "

मै यह समझ रहा हूँ कि बोलकर इस समय ठीक नही होगा, क्योकि जिस सीमा तक मै इस नारी को देख पा रहा था अभी थोडी ही देर पहले, यह नारी उससे कही ज्यादा गहरी है ।

"ठीक है, आप उठकर नहा लीजिए, मगर मुझे मालूम नही था कि पुरी के दोस्त के रूप मे आप आयेगे ! !"

मै बिल्कुल सच कहना चाहूँगा कि यह वाक्य मेरे सर पर से निकल गया है, कुछ भी समझ मे नही आया। मगर मै इतना अवश्य समझ सका हूँ कि मुझे वाक्य के आखिरी अश का विरोध करना है और मै कर रहा हूँ।

"क्या ? मे समझा नही ! !"

"यह मे पहली बार तुम्हारे मुँह से नही सुन रही हूँ।"

रजना यह कहकर उठी, और आसमान मे शायद बादलो के ग्राउन्डग्लास काले हो गये थे इसलिए कमरे मे अँधेरा घुप हुआ जा रहा था। वह खिडकियो के पल्ले खोलने मे लग गयी।

खुली खिडकी से आते हुए भीगे प्रकाश मे रजना को खडा देखना चाह रहा हूँ जो मेरे इस सहज कथन पर अपना निचला ओठ सफ़ेद दाँतो मे दबाकर मन का सहज अविश्वास कितने दर्प के साथ व्यक्त कर रही है। बचपन के इतिहास मे देखी मेरी 'क्वीन ऑफ स्काट्स', नूरजहाँ, रजिया आदि के चेहरो से लेकर गलियो मे तरकारी बेचनेवालियो तक के चेहरे मेरी आँखो के सामने इस तेजी से गुजर-गुजरकर कह रहे थे—"कही हम मे से तो कोई नही है ?—सोचो, शायद मै ही होऊँ, कल की वह—आज की यह रजना ! !—

"तुम पहले से दुबले हो गये, ऐसा क्यो ?"

गुसलखाने के परदे के पार नौकर धुले हुए कपडे, तौलिया और शायद साबुन वगैरह रख चुका है। रजना यह वाक्य कहकर मेरी आँखो की ओर देखने लगी है। मुझे अपनी बढी हुई दाढी के बाल बहुत बुरे लग रहे है। मेरी हथेली उन बालो पर धीरे-धीरे फिर रही है जिससे मुझे सोचने मे सहायता मिल सकती है। मगर जो बात मै अतिम रूप से सोच चुका हूँ, वह है कि मुझे अब नहाना है और टब के ठडे पानी मे खूब सारा उन्मुक्त सोच डालना होगा। उस समय यह औरत मेरे सामने न होगी और न होगे इसके ये मेकलिन किये हुए सफेद सीप की तरह चमकते हुए दाँत, जो कि मुझे हाथीदाँत के मोह के बधन मे बाँध लेना चाहते है। यह चमेली के फूलो की तरह खूबसूरत टॉप्स भी न होगे, जो काले घुँघराले बालो मे और भी सफेद हो जाते है, नक्षत्रो की तरह।

मै अब उठकर कैसे अपराधी की भाँति चलकर इस बाथ-रूम मे आया हूँ। मैने अपनी घडी बाथ-रूम की खिडकी मे रख दी है, जो आज जाने किस मनहूस की तरह चल रही है।

पानी की धारा सफेद चीनी के इस टब मे गिर-गिरकर पिघली हुई चीनी की तरह लग रही है। मै कल्पना कर रहा हूँ कि अभी थोडी ही देर मे साबुन के झाग से भरे इस टब मे रहूँगा और मेरे सिर पर शॉवर की ठडी बूँदे होगी और मेरा पूरा बदन जो कि रग की चिपचिपाहट से भर गया है—जिसके कारण मुझे अपने आप से घृणा तो नही

फिर भी कुछ अच्छा नही लग रहा है—वर्षा-धुले चीड-सा चिकना निकल आयगा। बाथ-रूम की खूँटियो पर भट्टी के धुले हुए कपडो को देखकर एक बार फिर मेरा दिमाग वैसे ही तेजी से सोच जाना चाहता है जैसे कि प्रदर्शनियो मे जो आतिशबाजी के लिए चकरियाँ चलायी जाती है—कैसी रग-बिरगी चलती हुई घूमने लगती है। मै यह मानकर चला हूँ कि यह जो शेविग सेट और ब्लेड है, सब के सब इसके पति के है।

मै कितनी तेजी के साथ अपनी डाढी पर एक तरफ साबुन लगा चुका हूँ। मेरा साहस नही हो पा रहा है कि इस सामने के खूबसूरत शीशे मे झाँककर अपनी यह शक्ल देखूँ, जो कि मनहूस लग रही है। ठीक इसी शीशे मे यह औरत अपना रूप देखती होगी। वह रूप जो पूरे भवन को मोह सकता है, पागल कर सकता है। उसके बालो की वे धुली हुई नील लहरे, दर्पण की इस नीली झील को पूरा भर लेती होगी। कहाँ तो इस शीशे मे वर्षा-श्री की तरह इस नारी के लहर कुन्तलो का रगमडल और कहाँ इस समय शीशे मे मिलिटरी टॉमीज की तरह कटे-छँटे बाल और साबुन से भरे मुँह को लेकर मै हँसना चाह रहा हूँ! रेजर पर साबुन, बाल और रँग तीनो एक साथ देखकर मै खूब प्रसन्न हूँ कि नही, अब थोडी देर की बात और है, तब मै अपने गालो पर हाथ फेरूँगा और जब उन्हे चिकना पाऊँगा तो मुझे गहरी प्रसन्नता होगी, और जाने क्यो मै जब प्रसन्न होता हूँ तो मेरी आँखे छोटी हो जाती है जैसे कोई पुतलियो पर फूँक मार रहा हो और मै उन्हे मिचमिचाने लगता हूँ। मेरी पुतलियाँ प्रसन्नता मे उसी तरह गोल-गोल घूमती है जिस प्रकार माता के स्तनो को चूसते समय बच्चे अपनी पुतलियाँ घुमाते है और खुश होते है।

मगर यह मुझे क्या सचमुच कोई परिचित समझ रही है या फिर मुझे ही भ्रम हो रहा है? मुझे नेम प्लेट वाले अपने भ्रम का एक बार फिर स्मरण हो रहा है कि किस प्रकार मैने आँखे बद करके इसे अपने दोस्त की बीवी मान लिया था। मै दाढी बना चुका हूँ, बस कलम जरा साफ तरीके पर काटनी बाकी है, मगर मेरा मन हमेशा की भाँति फिर कडवा हो रहा है कि अपनी इन्ही कुछ गदी आदतो के कारण, प्रेम या रोमास नाम की गम्भीर बातो मे कभी सफल नही हो सका। मुझे फिर वह अपने आफिस की स्टेनो याद आ रही है जिसके साथ मै कितने गहरे तरीके पर प्रेम मे था, जिसे मेरी कुछ छोटी-छोटी बाते नापसन्द थी। उनमे से एक तो इतनी हल्की और और छोटी बात थी कि प्रेम जैसी गम्भीर बात मात्र उस बात को लेकर टूट सकती है, इसकी कल्पना करना भी मूर्खता है—जैसे खाना खाते वक्त मुँह से 'चप' 'चप' की आवाज' का होना, वह उसे नापसद थी और वह कई बार 'अनसिवीलाइज्ड' कहकर तौलिये से अपना मुँह छुलाकर खडी हो जाती थी। किसी के बारे मे मान कर चलना भी एक वैसी ही गदी आदत थी, जो कि मुझमे अभी भी बाकी है, जिसके कारण अभी तक बिजनेस मे धोखा खाया है, मगर वह बात दूसरी है। किन्तु मुझे यह कभी बर्दाश्त नही कि कोई स्त्री, फिर सुन्दर, मेरे बारे में छोटी-छोटी धारणाएँ बनाकर मुँह बिचकाना शुरू कर दे।

तौलिये से अपना मुँह पोछकर अपने चिकने गालो पर हाथ फेरकर खुद ही खुश हो रहा हूँ। मगर यह औरत कही मुझे बेवकूफ तो नही बना रही है ? मै इस दरवाजे की चीर मे से झाँककर देखना चाहने लगा हूँ कि वह क्या कर रही है ?

पतली-सी चीर मे से उसका आधा चेहरा, जिसके आगे निकली हुई तीखी गोरी नाक, दो बारीक तराशे हुए ओठ, गाल, चिकनी ठोडी––उसके बाद तो कुछ भी नही दिखायी दे रहा है––बस, उसके बाद तो टेबिल पर राइटिंग पैड पर कुछ लिखते हुए एक मोती के रगवाला हाथ तेजी मे चलता हुआ दिखायी दे रहा है ।

मै जान रहा हूँ कि आँखो मे साबुन घुस जाने के कारण हल्की जलन और कडवाहट भर गयी है । मगर यह है कौन ? मुझे इस अपरिचित का अतिथि कभी नही बनना चाहिए था। भला यह क्या सोचती होगी कि यह व्यक्ति भी अजीब तरीके से सीधा है––

"मैने कहा, ठहर जाओ, और ठहर गया––मैने कहा, नहा लो, और नहा रहा है।"

मुझे अब निश्चय हो जाना चाहिए कि वह मुझे खासा बेवकूफ बना रही है। मगर वह ऐसा क्यो कर सकती है ? इसका कारण मुझे नही मिल पा रहा है और मै तेजी के साथ अपना सिर मल रहा हूँ। ओह ! पानी कितना ठडा लग रहा है । मझे अपनी जलती हुई इन आँखो मे यह औरत अब बहुत सुन्दर लग रही है । मेरा मन कर रहा है कि जल्द से जल्द उसके सामने पहुँचकर कहूँ मगर क्या कहूँगा ? बिना कुछ कहे भी तो रह सकता हूँ। और मै अब साफ पानी मे नहाकर बिल्कुल तय कर चुका हूँ कि कुछ नही कहूँगा, उसे जो कहना हो कहे। चाहे जिस व्यक्ति के भी ये कपडे हो किन्तु मुझ पर एक-दम फिट है। मगर खद्दर का कुर्ता और यह सुन्दर स्त्री ? दो समानान्तर रेखाएँ !! तब क्या इसका पति राजनीति से सबधित है ?

मै जिस समय बाथ-रूम से बाहर आया वह खिडकी के पास परदा पकडे बाहर बरसती हुई बूँदो को देख रही थी। पानी भीगी हवा मे उसके कधे से झूलता हुआ रेशमी साडी का पल्ला, जो कि जरी का था और देखनेवाला कह सकता था कि यह मैसूरी साडी है, हिल रहा था। उस ड्राइग रूम के सूनेपन को मेरी चट-चट की आवाज करती चप्पले भर रही थी, जो कि मेरे कानो को खुद बुरी लग रही थी।

"तो तुम आ गये––ओह, फ्रॉम बीस्ट टू मैन।"––यह कहते हुए वह कितने जोरो से हँस रही है ।

प्रत्युत्तर मे मै कितने सलीके की मुस्कान देना चाह रहा हूँ जिससे उसे पता लग जाये कि मै अब पहले से बदल चुका हूँ। मुझे उसका 'बीस्ट' कहना बिल्कुल नही सुहाया। वह इस समय उस राइटिंग पैड को वापस सागौन की उस लम्बी आलमारी मे रख रही है जिस पर पानी का बहुत बडा शीशे का जग रखा हुआ है, जिसमे रग-बिरगी छोटी-छोटी मछलियाँ तैर रही है। मछलियो के गोल-गोल छोटे-छोटे मुँह, पानी की पारे जैसी चमकती हुई गोलियाँ ऊपर पानी की सतह पर फेक रहे है।

"मै देख रही हूँ कि नहाने के बाद तुम्हारी आँखे कितनी साफ हो गयी है। और तो और, उनमे के प्रश्न भी एकदम धुले-से लग रहे है, कोई भी उन्हे पढ सकता है"—

और वह यह कहती हुई आलमारी मे लगे शीशे के सामने खडी होकर कितने मोहक ढग से हँस रही है।

मुझे उत्तर देना होगा, मगर मै अनुभव कर रहा हूँ कि मुझे भूख बहुत ही ज्यादा लग रही है। सामने का परदा ऊँचा करके बैरा ने सलाम किया।

"चलो, आज फिर बरसो के बाद हम लोग साथ-साथ खाना खायेगे।"

"क्या मतलब ?"—और मै उसके लाल स्लीपरो मे चमकती हुई गोरी चिकनी एडियो को देखते हुए चल रहा हूँ। दिमाग पर फिर जोर देना चाहता हूँ कि क्या यह सच है कि मै रजना नाम की किसी स्त्री से पहले कभी मिला हूँ ? पर डाइनिग टेबल की उजली शीट पर रक्खी हुई उजली तश्तरियो मे खूशबूदार चीजो की कल्पना करने लगा हूँ—क्योकि मै भूखा हूँ।

"क्या सोच रहे हो ?—अच्छा यह बताओ अब पहले जैसी मै नही लगती क्या ?"

और वह यह कहती हुई डाइनिग टेबल की उस कुर्सी पर बैठ गयी जिधर से शीशे की हरी रोशनी आ रही है।

"रजना जी! आप अत्यत मधुर स्वभाव की है।"—

"बस!!"—और इतने जोरो से हँस पडी है कि खिडकी के पास बाहर लगी हुई बेर पर जो गोरैया अभी आकर बैठी थी, वह घबराकर अपने छोटे-छोटे परो को फडफडाती हुई उड गयी और बेर की वह पतली डाली धीरे-धीरे हिलने लगी है। जाने क्यो, मेरा मन इस नारी को होली के रग मे डुबो देने को कर रहा है।

"आज तो होली है रजना जी!"—और मै उसकी आँखो को पढ जाने के लिए कितना सतर्क एव तत्पर होकर उसकी ओर एकटक देख रहा हूँ।

"हाँ, है तो,"—और यह कहते उसने मेरी आँखो मे अपनी आँखे डाल दी है, जैसे दो पानी मिल रहे हो। रजना का यह प्रश्न 'है तो' कदाचित् मेरे पूरे मन को जान लेने की चेष्टा थी। मुझे अब क्या कह देना होगा वह सब कुछ जो मेरे मन मे उसी भाँति ऋतुहीन घिर आया-सा लग रहा है जैसे मार्च का यह मानसून ? मैं देख रहा हूँ, हथेलियो के बीच मे उसकी गोरी चिकनी ठोडी कैसी लाल होती जा रही है!

बैरा प्लेट्स पर प्लेटस लाता जा रहा है और टेबल पर थोडी ही देर मे, ऐसा लगता है, बिल्कुल भी जगह बाकी न रहेगी।

"तुमने कही नही वह होली वाली बात जो तुम्हे परेशान कर रही है ?"—और रजना ने यह कहते-कहते मेरी प्लेट मे मछली का एक टुकडा शोरबे मे सना रखा।

"कौन सी बात ?"—और यह कहते हुए मैंने मछली के टुकडे को अपने चम्मच से काटा। मछली अदर से गुलाबी सफ़ेद लग रही है।

"अकलक ! मै तुम्हे न जानती हूँ सो तो नही है।"—रजना ने रोटी का कौर बात खत्म करते हुए खाना शुरू कर दिया ।

"रजना जी ! मेरा नाम अकलक तो नही है।"—और मै उसकी आँखो मे इस नये रहस्यमय सम्बोधन को जान पाने के लिए अपने उसी पुराने कौर को चबाता हुआ रजना को देखने लगा—नही, घूरने लगा हूँ।

"अकलक ! मुझे खाना खा लेने दो, इतना न हँसाओ, वरना मछली का कोई काँटा पेट मे उतर सकता है।"—और वह जोरो से हँस रही है ।

"देखिये रजना जी ! ?"

"अकलक ! मैंने अपनी बगालिन माँ से चाहे और कुछ न सीखा हो किन्तु तीन बात निश्चय ही सीखी है—एक तो गान, दूसरे हँसी और तीसरे मछली को खूब सम्हल कर खाना—समझे ?"

वह बोलती चली जा रही है और मेरा सिर ऊपर नही उठ पा रहा है। मछली के इस पीले हल्दी डले शोरवे मे उसकी चमकती हुई आँखे मुझे दिखायी दे रही है—केसरिया झील मे हलदिया नयन ! !

"देखो, इस समय मै दो काम कर रही हूँ, खाना और हँसना—तुम कहोगे तो खाने के बाद मे गाना भी सुना दूँगी, किन्तु इस समय मुझे बेवकूफ बनाने की चेष्टा छोडकर कुछ तुम भी खाओ ओर मुझे भी खाने दो !"

"खाने के बाद तुम आराम करोगे ?"—रजना सामने के सोफे पर बैठती हुई बोली। भोजनोपरात की वेशभूषा मे भी वह सुन्दर लगती है ।

"नही , ऐसी तो कोई जरूरत मुझे अभी तक नही लग रही है।"—अपनी सिगरेट का धूआँ छोडते हुए मैंने कहा।

"नही, आवश्यकताएँ तो व्यक्ति के मन पर निर्भर होती है—यही देखो न, तुम्हारे आने के पहले तक तुम मेरी आवश्यकता की सीमा से पार हो गये थे कभी के, और शाम की गाडी से चले जाकर फिर मुझे मानना होगा कि तुम मेरी आवश्यकता के आकाश मे नही हो, परन्तु इस समय, इस क्षण तो तुम सबसे ज्यादा जरूरी हो। क्योकि जानते हो अकलक ! प्रत्यक क्षण का सत्य ही सत्य है, और पूरा जीवन इन छोटे-छोटे सम्पूर्ण खड-सत्यो का यौगिक विस्तार—फैलाव —और क्या ??"—और कहते हुए वह दूसरे कमरे मे चली गयी।

बादलो मे साँवलापन घिरता जा रहा है । आज खूब सारा पानी गिरकर रहेगा, यह कोई भी सोच सकता है । हवा के बहाव मे लताएँ धुली हुई झूल रही है। यह रजना का ड्राइग रूम है, मगर रजना का पति कौन है ? और वह मेरे आने के पहले ऐसा कहाँ चला गया जो अभी तक नही लौटा ? किन्तु यह मुझे मान लेना चाहिए कि वह या तो और कही रहता है या फिर कही बाहर गया है, तभी तो रजना ने खाती बेला भी, पति के लिए रास्ता देख लिया जाये—का भी भाव प्रदर्शित नही किया।

रजना को सुररिएलिस्टिक या फिर इम्प्रैशनिस्टिक चित्र ही पसद है । मै जहाँ बैठा हूँ, ठीक सामने चित्र मे एक बहुत बडा सिर बना है, जो एकदम कुरूप, काला-सा लग रहा है । मोटे-मोटे ओठ, चपटी-सी नाक, अपराधियो की-सी आँखे, मोटी काली भवे, छोटा सिर, घने घुँघराले भेडो की तरह बाल, चपटे आकार का सिर, ऊँचे भरे जबडे —देखकर एकदम डर महसूस होने वाला यह चित्र जिसके नीचे अग्रेजी मे 'ही-मैन' लिखा हुआ है । मै अब उठकर उस 'ही-मैन' को पास से देख लेना चाहता हूँ जो कि मुझे एकदम भेडिये की तरह घूर रहा है । उसके गालो के पास जो ताँबे के रग की रेखाएँ आँखो की ओर जाती हुई दिखायी पड रही है, वे उस चेहरे को और भी भयानक बना रही है। उसके मोटे ओठो मे से आगे के दो गदे दाँत पीले से दिखायी पड रहे है—जिनसे मुझे कच्चे गोश्त की बदबू तक आती हुई-सी लग रही है । आँखो के पास जो करौदे की झाडियो-सा कालापन दिखायी दे रहा है, मै उसे हाथ फेरकर देखना चाह ही रहा हूँ कि मुझे रजना की हँसी सुनायी पड़ रही है ।

"क्या देख रहे हो, अकलक ?"

"कुछ नही, इस 'ही-मैन' वाले चित्र को।"—

"क्यो, कैसा है ?"— रजना ने ताने से पूछा है यह ।

"हाँ, एक भाव-विशेष का है, किन्तु चित्रकार के मन की सारी कुरूपता इसमे अभिव्यक्त हुई है।"—उस चित्र के मुँह पर अपनी सिगरेट का धूआँ छोडते हुए मैने जवाब दिया।

"जानते हो, जिस आर्टिस्ट से मैने यह लिया था, तो उसने क्या कहा था ?"

"हाँ, अवश्य ही कोई छोटी-सी बात को बडे रहस्यमय ढग से कहा होगा।"—और मैंने यह बात कहकर अनुभव किया कि मैने खासा गहरा व्यग, चित्र के आर्टिस्ट और इसके खरीददार दोनो पर किया है ।

"व्यग छोडो, और बात सुनो—वह कह रहा था कि नारी के द्वारा तिरस्कृत कर दिये जाने पर पुरुष के अदर का पशु खूँख्वार हो जाता है, उसी भाव को इसमे चित्रित किया है और जानते हो, नारी आदर्श भले ही न हो पर नारी की भावना ही आदर्श है, कला है।"

ओर रजना फिर हँसी ।

मै देख रहा हूँ उस चित्र को, जो कि गुर्राते हुए जगली भैंसे की तरह मुँह से झाग डालता हुआ जैसे मेरी ओर बेतहाशा दौडता हुआ चला आ रहा है । वह उस दीवाल पर से अभी एक क्षण मे कूदकर मेरी ओर झपट सकता है और साथ ही उसके पुरुष को तिरस्कृत करनेवाली इस नारी को किसी भी क्षण फाख्ता के परो की तरह नोच फेंक सकता है—जिसे अपने आदर्श होने की चेतना है, प्रज्ञा है, ओर इस प्रज्ञा को हँसकर अभिव्यक्त कर देने का साहस भी जिसके पास है, भले ही वह प्रज्ञा मिथ्या क्यो न हो ! कितने ही ऐसे है जो मिथ्या की अभिव्यक्ति को भी अपना साहस मानते है।

"मेरे पति को यह चित्र बिल्कुल भी पसद नही है, अकलक !"—

"देखिए, मै अकलक नही हूँ "

और मैने देखा कि वह इस वेशभूषा मे मेरे सामने एकदम हिरन की तरह भुवन-मोहिनी बनी खडी हुई है। ताम्र-वर्ण का उसका कुर्ता एव सलवार तथा झीनी-सी उसी रग की ओढनी—ओर मेरा मन अनचाही बात के लिए लालायित होने लगा है ।

"तुम कहते हो, तुम अकलक नही हो, और मै कहती हूँ कि तुम हो। मेरे विश्वास को हरा ले जाओगे ऐसा शक्ति-सम्पन्न तुम्हे कभी माना था, पर आज नही। मुझसे अब छिपाने से क्या फायदा—मै कहती हूँ कि अकलक ! मै अब विवाहिता हूँ—मेरे पति फौज मे कर्नल है, मैने उस मराठे युवक से विवाह कर लिया है—जानते हो, अपने चारो ओर कटीले तारो की बाड लगा ली है, घबराओ नही।"

अभी हम लोग सोफे पर बैठे ही है कि बैरा ने ड्रिक्स लाकर रख दिये । मैने दो एक बार ही ड्रिक किया है पर आसानी के साथ कह सकता हूँ कि मै ड्रिक नही करता।

"रजना जी ! मुझे आदत नही है ड्रिंक की।"

रजना ने फिर अपनी पुरानी हँसी हँस दी है, जिससे मुझे चिढ हो गयी है ।

"मै भी आदत नही डलवाना चाहती, किन्तु मै तो आज के तुम्हारे इस अनायास आने के क्षण को उत्सव मे परिणत करना चाह रही हूँ । केवल साथ दूँगी और साथ चाहूँगी, —लो "

ओर यह कहते हुए स्नारस की तरह पतले शीशे के पेग मे रजना ने ड्रिंक बढाया।

रजना के पतले ओठो से मदिरा उसके चमकते हुए दाँतो को छूती हुई गले के नीचे उतर रही होगी और मै उसकी आँखो की ओर देख रहा हूँ जिनमे सेब की-सी लाली है। वे आँखे मेरे दाहिने हाथ की ओर रखी हुई ताँबे की मूर्ति को देख रही है। फायर प्लेस की पीतल की अँगीठी की छडे इस समय चमक रही हे। फायर प्लेस के ऊपर रक्खी हुई ताँबे की वह 'लैकून्सक्राइ' की बडी-सी मूर्ति मेरे दिमाग पर छाती चली जा रही है ।

"जानते हो अकलक ! तुम्हारे जाने के बाद मैंने इस मूर्ति को खरीदा था।"

"रजना जी ! मै कुछ स्पष्ट कर देना चाहता हूँ "—और मैने पेग टेबल पर रख दिया।

"अकलक ! क्या स्पष्ट करने को कहते हो ? देखो, तुम अपना विश्वास स्पष्ट क्यो करना चाहते हो ? इसीलिए न कि अपने लिए मै तुम से तुम्हारा विश्वास, ऋण के रूप मे ग्रहण कर लूँ और अपने विश्वास को थोथा या अनदेखा कर ले जाऊँ ? ऐसा आग्रह न भी करो तो समझौता सम्भव है। क्योकि रजना के लिए न तब न अब, समझौता मन को चुभनेवाला रहा हो, सो नही, और अब तो कुछ भी नही । हम चाहे तो अपना-अपना विश्वास समानान्तर भी चला सकते है। किसी का विश्वास किसी मे समाहित न होगा, इसका जिम्मा कहो तो म ले सकती हूँ। वह देखो, मूर्तिवाले दार्शनिक की अपने पुत्रो के साथ कराह सुन रहे हो जो कि उस ताम्र-मूर्ति मे से उठ रही है ? कराह कितनी स्पष्ट हे, पर मौन ! ! ओह ! कितनी वेदना, नरक की मशाले जैसे अनगिनत, अगगिनत जल रही हो, परन्तु उसकी आँच तुम और हम तक नही आ पा रही है, जल रहा है तो बेचारा वह दार्शनिक, और वे उसके दोनो बच्चे ! ! बचाओ अकलक ! साँप की वे विषैली भुजाएँ उन सबको अपने केचुल मे चूर-चूर कर देगी।"

"क्या कहूँ रजना जी !"

मै बहुत घबराकर बोल रहा हूँ। मेरी पेशानी पर ओस की बूँदो की तरह पसीना जरूर आ गया होगा, जिसे मै कायरता के कारण पोछना भी पसद नही कर रहा हूँ। क्योकि मै कायर हूँ, तभी तो समानान्तर पर भी समझौता करने को अदर से उत्सुक हूँ।

"तुम नही सुन पा रहे हो उस मूर्ति के दार्शनिक की चीखे, ओह, कितनी

'एगॉनी' है जिदगी मे अकलक ! तुम गये मेरे आकाशो के पार और मै, मै कुछ नही "

"रजना ! क्या कहना चाहती हो, सच कहता हूँ मै अकलक नही हूँ, मै इस मूर्ति की उपमा से सचमुच डर गया हूँ।"

"तुम इसे उपमा कहकर डर सकते हो, मगर मेरे निकट यह सत्य बनकर मुझे प्रतिक्षण जला रही है । मै जल रही हूँ अकलक !"

और रजना ने यह कहते-कहते पेग समाप्त किया। वह अन्य पेग भरते हुए बोली—"तुम अगर अकलक नही हो तो फिर मै तुम्हे अकलक क्यो मान रही हूँ ? मुझे सब धोखा दे सकते है मगर मेरी ऑखे कभी भी नही। तुम्हारा यह दाहिना पेर क्यो लॅगडाता है, बोलो ? कह दो, कही गिर पडा था।"

रजना ने मेरी ओर पीडित नेत्रो से देखते हुए कहा। और मैंने देखा कि मेरा दाहिना पैर, जो कि सचमुच लॅगडाता है, मुझे जाने किन-किन मुश्किलो मे डालेगा। कभी बचपन मे कम्बख्त उस इंग्लिश मास्टर ने कितने जोरो से कूल्हे पर लात मारी थी कि जन्म भर के लिए मुझे लॅगडा कर दिया। इसके कारण मे मिलिट्री मे जाना चाहते हुए भी नही जा सका और आज हौजरी मे काम करना पड रहा है। तव, क्या वह अकलक नाम का व्यक्ति भी मेरी ही भॉति लॅगडाकर चलता था ?

"अकलक ! मे ऐसी कोई वात नही कहनेवाली हूँ कि तुम्हे किसी सोच मे डाल दूँ। तुम घबराओ नही, वह वक्त बीत गया—ऑधी बीत गयी, अव व्यक्तित्व की खिडकियाँ खोल दो, साफ और तेज हवा के आने की वेला है।"

और यह कहते-कहते रजना गम्भीर हो उठी। मेरा दूसरा पेग जाने कब रजना ने भरा और वह मेरे गले के नीचे भी उतर गया, मुझे नही मालूम। मगर जो मुझे इस समय मालूम है वह यह है कि रजना सुन्दर हे और मै इसके बहुत निकट बैठा हुआ हूँ। खिडकी के बाहर मार्च के मानसून गहरे हो-होकर बरस पडने पर तुले हुए है। बरसाती हवा की तरह ठडी हवा, बाहर बहती हुई खिडकियो के पल्लो को छूती हुई, रजना के ड्राइग रूम के भारी रेशमी परदो को हिलाती हुई पूरे हॉल को ठडा कर रही हे । बॅगले के अहाते मे लगे हुए यूकेलिप्टिस और अशोको की लम्बी-लम्बी पत्तियाँ वायु मे कॉप-कॉपकर आवाज कर रही है। कभी किसी मोटर का हॉर्न दोपहरी के सूनेपन को भरता हुआ तेजी से चला जाता है। वह तॉगेवाला मुझे यहाँ छोडकर अब जाने कहाँ पर होगा—या तो घोडे को पानी पिलाता हुआ बीडियाँ धौक रहा होगा, या फिर अपनी बहुत बोलनेवाली गदी आदत से किसी सवारी को परेशान करता हुआ सडक पर तॉगा ले जा रहा होगा। मेरी समझ मे खाक भी नही आ रहा है कि मुझमे उस अकलक नामक व्यक्ति के साथ ऐसी कहाँ और कौनसी समानता है जो यह नारी भ्रम पैदा कर देना चाह रही है ।

"जानते हो अकलंक, लाहौर मैने कब छोडा ?"—रजना ने पूछा।

जिस लाहौर को मैने कभी देखा नही और जहाँ कि इस रजना से मेरा दो घटे के

पूर्व कोई परिचय नही, मै क्या जान सकता हूँ कि इसने क्यो और कब लाहौर छोडा। हो सकता है, अकलक भी एक कारण उस छोडने मे रहा हो। परन्तु मै तो वह नही हूँ। किन्तु यह मुझसे अपनी बातो के द्वारा स्वय को क्यो रहस्यमय बनाये रखना चाहती है ?

"रजना जी ! यह आपकी बडी ज्यादती है कि मुझे "

"सुनो अकलक ! ज्यादती की कभी कोई बात नही हुआ करती हे। मै जानती हूँ कि तुमने यहाँ आने के पूर्व काफी चेष्टा की है कि मै तुम्हे पहचान न पाऊँ। जिन मिलिट्री के टामियो से नफरत रही है, उन्ही के से बाल कटवाकर अपने बालो के घुँघरालेपन के साथ जो ज्यादती तुमने की है वह तुम नेही जानते। तुम्हे यह ऐक्ट्रो की तरह मूँछो का शौक कब से सवार हुआ है ? अकलक क्या राजनीति छोड दी ? जेल की यातना ने तुम्हे निराश कर दिया, ढा दिया ? क्या हुए तुम्हारे वे नेतागिरी के स्वप्न !! और कदाचित् यहाँ के पहले तुम्हे अपना पैर लँगडानेवाली घटना का स्मरण नही रहा, नही तो इसकी भी कुछ दवा जरूर करते, क्यो है न ?"

और यह कहते-कहते रजना ने अपनी आँखे बद कर ली जिनमे हल्की बूँदे वैसी ही आ गयी है जैसे शीशे के ग्लास की दीवारो पर पानी की दो-एक बूँदे।

तब क्या मुझे मान लेना चाहिए कि इस रजना नाम की महिला से आज पहली बार नही मिल रहा हूँ ? बल्कि लाहौर मे आज के इस व्यावहारिक मिलन के पहले व्यक्तिगत रूप से हम बहुत निकट से भी मिले है——कितनी मूर्खतापूर्ण बात होगी यह दूसरी बात मान लेना, मगर

"मै जानती हूँ अकलक, तुमने लाहौर क्यो छोडा, मगर, तुम्हे इस तरह नही छोडना चाहिए था।"

मै देख रहा हूँ, रजना की आँखो मे बहुत सी पारे की-सी चमक ही चमक भर गयी है।

"तुम्हे याद है, हम लोग एक दिन रावी पर घूमने गये थे नोका लेकर, और रावी की तेज धार मे हाथ डालते हुए गोल-गोल पानी के बन्धन बनाते हुए मैने क्या कहा था अकलक——कि कोई कुछ भी क्यो न कहे, मै तुम्हे नही छोड सकती——हाँ, नही छोड सकती——मगर तुम उसके वाद जाने कहाँ चले गये, पिता जी तुम्हारी तलाश मे घूमते ही रहे।"

"क्यो रजना ! तुम्हारे पिता जी मेरी तलाश मे, मेरा मतलब है कि अकलक की तलाश मे क्यो घूमते रहे ?"

मुझे प्रसन्नता है कि ड्रिक्स के बाद भी मेरी चेतना बनी हुई है कि रजना जिसे "तुम, तुम्हारी" की अभिव्यक्ति दे रही है वह मै नही हूँ, बल्कि वह अकलक है। और मै इस पृथक्त्व को समझकर उचित समय पर प्रकट भी कर पा रहा हूँ।

"तुम्हारी तलाश मे पिता जी बदूक ताने हुए घूमते रहे कि तुम मिल जाओ तो गोली मार दे।"

और यह कहते-कहते रजना ने अपना पेग समाप्त किया। उसकी आँखे वैसी ही चमक रही हे जेसे किसी ने उन आँखो मे तेज रोशनी वाली टार्च का प्रकाश डाला हो। उसकी यह ताम्र-वर्णी वेशभूषा और गोरा रग किसी को भी पागल करने के लिए पर्याप्त हे। जाने कितनी आधी साँसे उसके उभरे हुए वक्षस्थल मे भर गयी है और वह चीख पडी है ।

"बेरा, बैरा "

"हुजूर "

परदे के पार मे तेज मगर तमीज के साथ दौडनवाले कदमो की आहट तथा सलाम करके एडियो पर ऐठ जानेवाले इस आदमीनुमा बैरा को देखकर मै जाने क्यो ऐसा मान रहा हूँ कि यह आदमी अपनी इस मालकिन को खूब पहचानता है कि कब क्या करना है। यह बैरा इस समय इस तरह खडा हुआ है कि बात मालकिन के मुँह से निकले नही और वह जल्द-से-जल्द पूरा कर अपनी अनिवार्यता सिद्ध कर दे । नौकरी बिना अनिवार्यता सिद्ध किये नही टिकती। और शायद यही अनिवार्यता सरकारी दफ्तरो मे लोगो से जाने क्या-क्या करवाती है ।

"खडे क्या हो, दरवाजे खिडकियाँ सब खोल दो। देखते नही, कितनी गर्मी हो रही हे ?"

कहते हुए रजना ने अपनी गर्दन सोफे की पीठ पर टिका दी । उसकी पेशानी पर हल्की ओस की भाँति पसीने की बूँदे चमक रही है।

"हुजूर ! पानी तिरछा गिर रहा है, कमरे मे बारिश घुस सकती है ।"

"चुप रहो, सब खिडकियाँ खोल दो ।"

ओर रजना मेरे सामने के सोफे पर विचारो की अस्त-व्यस्तता मे खोयी हुई बैठी है । धीरे-धीरे कमरे मे बरसाती हवा का-सा ठडापन भरने लगा है । हवा मे उसके घुँघराले बालो की लटे उड-उडकर उसके चिकने गालो पर गिर रही हे। उसकी दोनो गोरी साँप जैसी चिकनी बाहे सोफे के दोनो ओर झूल रही है। मेरे मन मे मोह की वर्षा तो नही किन्तु आकर्षण की बदली मे हल्की परते ज़रूर शुरू हो गयी है और मै चाह रहा हूँ कि रजना बोले ।

बाहर तिरछी वर्षा हो रही है और लॉन, बेले, पेड, फूल, सडक, बिजली के तार, मकान सब नहा रहे है।

"रजना जी !"—मैंने उसे जगा देना उचित समझा है।

"क्या है अकलक ! तुम समझते हो कि मै सो गयी हूँ, है न ?"—उसने उसी तरह आँखे बद किये हुए कहा।

"नही तो "—मुझे लगा कि रजना मुझे बच्चा समझकर तर्क और तथ्य की आड़ मे व्यग द्वारा अपनी उच्चता प्रमाणित कर देना चाहती है; और मै 'नही तो' जैसे छोटे

उत्तर को देकर सिद्ध कर देना चाहता हूँ कि तुम कैसी भी बात क्यो न करो, पहेली न बन सकोगी ।

"अकलक ! आज की घटना के साथ तुम उस माल रोड की शाम का विश्लेषण कर सकते हो ?"

यह कहते हुए रजना ने अपनी तेज लाल आँखे मेरी आँखो मे वैसे ही डाल दी जैसे पानी भरे टम्बलर मे लाल रग की पोटेशियम परमैगनेट, जो पानी मे पहले तो धीमे-धीमे घुलती है और फिर पूरे पानी को सम्पूर्ण रूप से लाल रग का बना देती है ।

यह रजना आज के इस मिलन को घटना कहती है। क्यो ? घटनाओ के लम्बे-लम्बे कदम भले ही न होते हो, वे चीटी के-से बारीक कदमोवाली भी क्यो न हो, या फिर टिड्डियो के-से छोटे पखोवाली ही क्यो न हो, पूरी धरती, पूरे आकाश को ढाँकने की अपरिमित शक्ति उनमे होती है । यह कल्पना करके मेरा मन काँप रहा है कि पूरी धरती पर छोटी-छोटी चीटियाँ ही चीटियाँ है, या पूरे आकाश मे केवल टिड्डियाँ ही टिड्डियाँ ! ऐसे मे क्या फसले उग सकती है ? नदियो का क्या हो ? सूरज के प्रकाश का भी ! अगर जीवन मे घटना ही घटना हो तो क्या मनुष्य अपना जीना जी सकता है ? जबकि एक घटना सम्पूर्ण जीवन को 'ताशेर घर' की तरह उजाड सकती है तो फिर यह रजना तो माल रोड की जाने कौन सी घटना और आज के मेरे इस आगमन को लेकर विश्लेपण करने के लिए कहती है। मुझे बहुत ज्यादा और ऊँचा हँसकर यह स्पष्ट जता देना चाहिए कि रजना, तुम कितना ही प्रयास जाने या अनजाने मे क्यो न कर रही हो——मुझे अकलक बनाने का प्रयास व्यर्थ है। और जब व्यर्थ है, तो तुम्हारे जीवन की कोई भी घटना, जिसे मैने नही देखा है, कैसे उसके आधार पर आज की बात सगत या असगत रूप मे लूँ ?

साधारण रूप से चलते हुए जीवन मे घटनाएँ आकर सहस्रबाहु की तरह बाँध या रुकावट पैदा कर देती है, और हम मान लिया करते है कि यह यदि पूर्ण सत्य नही तो सत्य के बहुत निकट है। इसके होने या न होने को हम महत्त्वपूर्ण मानकर जीवन मे परिवर्तन खडे करते है। हम, तब नही समझ पाते कि इस घटना का वास्तविक रूप क्या है और हमे क्या करना था। क्योकि प्रश्न लगाकर किसी घटना की यथार्थता जानना नही चाहते, वस्तुत हम डरते है कि प्रश्न उसे या तो नग्न रूप मे हमारे सामने खडा कर देगा, या फिर हम हमेशा के लिए उस बात, व्यक्ति या घटना से हाथ धो बैठेगे। चिन्तन करनेवाला वर्ग इसे पलायन की सज्ञा देता है । जब कि वह स्वय चिन्तना जैसे रेशमी परदे की आड मे पलायनवाले कछुए की जिदगी जीता है। अपने-अपने तरीके होते है पलायन करने के। कोई वग्घियो और मोटरो पर बैठकर ही पलायन कर पाता है, तो कोई इसकी भी अपेक्षा नही रखता। किन्तु होता सब पलायन ही है । किसी के लिए वह निर्वार्यता है और कोई उसे माध्यमो के आवरणो मे सँजोकर स्नक्ति बना लेता है। इस शहर की सडक पर अभी मै थोडी ही देर पहले रग जैसी खूबसूरत चीज से पलायन करना चाह रहा था। यह बात दूसरी

थी कि मे नही कर पाया। चवन्नी के धुले हुए कपडो से मोह इस सीमा तक होता है कि अगर हम कवि या लेखक हो तो सिवाय रगो के कोई दूसरी बात ही नही करेगे, किन्तु धुले हुए कपडो पर फिर भी ऑच नही आने देगे—यही तो हम है। हम सब सॉप की ही भाँति तो है चिकने, मुलायम, चितकबरे, काले पीले ! ! किन्तु ज्यो ही हमारी वस्तु-स्थिति की केचुल पर ऑच आती है, हमारे व्यक्तित्व का फन, समस्त कडवाहट लिये, फुँफकारने लगता है। कुडली मारकर बैठे हुए सॉप ! !. सभी ऐसे व्यक्ति ! ऐसा ही है पूरा समाज ! ! काले, भूरे, चितकबरे सॉप—व्यक्ति और समाज के वस्त्रो मे छिपे बैठे हे।

मुझे लग रहा है कि मेरा वह दावा जो थोडी देर पूर्व किया गया था कि मै ड्रिक्स के बाद मे भी होश मे हूँ, व्यर्थ है, प्रवचना है। मेरे सामने बैठी हुई यह नारी कुछ समय पूर्व की अपरिचिता अपने आकाशो मे किस तेजी से घसीट लेना चाह रही है। क्या अपने स्वार्थ के लिए—नही, अपने कडवे यथार्थ से पलायन करने के लिए। क्या सच, क्या झूठ माध्यम का आवरण, चाहे कुरूप हो या सुन्दर, वह मुखोश ही है, सत्य नही। आवरण, निष्ठा की कमजोरी के कारण अपेक्षित हुआ करता है।

मै देख रहा हूँ इसके उरोज, जो कि उसके स्मार्ट सिले हुए कुर्ते मे से रेशमी ऊँचाइयो मे कितने सुन्दर लग रहे है। शरीर को निस्सार कहनेवाले यदि इस तरह बँधे हुए उरोज देख पाते तो मेरा निश्चय है कि वे मगर मे महसूस करता हूँ कि मुझे तो उन लोगो से कुछ नही कहना है। यह रजना अवश्य मुझे पहले कही मिली हे और केवल मिली ही नही है बल्कि इसने मुझे अपने व्यक्तित्व का बहुत कुछ दे डालना भी चाहा है, किन्तु मेरी स्मृति की शकुन्तला, समय के दुर्वासा की शापग्रस्ता हे।

"अकलक ! ऐसा क्या सोच रहे हो ? माल रोड की उस शाम मे बहुत कुछ रहा हो किन्तु ऐसा तो नही कि तुम उसी मे खो जाओ। देखती हूँ तुम "

"रजना ! मेरे लिए पहेलियाँ असम्भव हे।"—मै बहुत उत्तेजित हो गया हूँ। मुझे रजना की ऑखो मे मार्च की फगुआ शाम अपनी समस्त गुलाबी लिये हुए घिरती दिखायी दे रही हे।

"अकलक ! किस पहेली के बारे मे कहते हो ? क्या सम्भव और क्या असम्भव, इसका निर्णय किसी के पास नही हुआ करता, और न ही हम इस प्रकार की घोषणाओ से पहचान सकते है इन्हे। ये कलैन्डर की तारीखे शायद हम लोगो से अधिक व्यवस्थित है, जो यह तो जानती है कि कल कौन सी तारीख आने को है। क्या तुम जानते हो कल इस समय कहाँ होगे, मै कल इस समय तक रहूँगी भी या नही, या और कुछ हम अपने बारे मे निश्चित रूप से जानते है ?

और मै गोरे हाथो मे लाल चूडियाँ गिन रहा हूँ · · · एक, दो, तीन · · जो दोनो ओर से एक एक सोने की चूडी से घिरी हुई है।

मुझे कितनी नफरत रही है उन लोगो से जो जीवन को एक बहुत बडा भारी बोझ

बनाकर सिर पर लिये परेशान घूमते है—कदमो मे मार सजीदगी ही सजीदगी ! बोलेंगे तो दर्शन ! ! आदमियो की भाषा जैसे कभी सीखी ही नही। जब कभी उनसे मिलिए तो यही कहते पाइयेगा कि जो क्षण वे अभी तक जी चुके है वे घटनाओ से भरे हुए थे। जो वह जी रहे है—वह हाहाकार की प्रतिध्वनि से भरा हुआ है और आनेवाला तूफानो की तरह गुर्राहट से भरा उनकी ओर जगली जानवर की तरह घूर रहा है। जैसे ससार का हर प्राणी उनके विरुद्ध विद्रोह करता हुआ घूम रहा है। चाहे दूसरा व्यक्ति बेचारा राशन की दूकान से ही क्यो न चला आ रहा हो या फिर अपनी बीबी की अचानक बीमारी के कारण पैसो की परेशानी मे ही क्यो न उलझा हो !

"कल के बारे मे तो नही जानता रजना ! और जानकर भी क्या लूँगा यदि नियतिवाद ठीक भी हो तो, किन्तु आज के इस क्षण को जो कि मेरे सम्मुख उतना ही नग्न है जितनी की अन्य चीज़े—मै अपने मे तिरोहित कर लेना चाहता हूँ, कम से कम आज भर के लिए कह सकता हूँ कि मै क्षणवादी हूँ !"

मै जानता हूँ कि मेरा यह उत्तर स्वय से पलायन है, किन्तु मुझे स्पष्ट ही लग रहा है कि यह नारी मेरे निकट लीलामयी है। इसे कदाचित् ऐसी ही बाते करना सुहाता है। और ठीक भी तो है, यदि इसे इस तरह की आदत न हो तो इतना सारा भोग भोगते अरुचि न हो जाये ? भोग भोगने के लिए भी विशेष प्रकार की आदत को जन्म देना होता है।

"देखती हूँ, तुम्हे अभी भी बहुत कुछ सीखना है। किन्तु क्या यह सीखना तुम पर अब छोडा जा सकता है ? नही, क्योकि इतने दिनो अपने मन की भी कर आये फिर भी कुछ नही सीख सके,—न जेल की दीवारे ही सिखा सकी और न पर्यटन की ठोकरे ही।"

और यह कहते-कहते रजना उठ खडी हुई। कालीन पर बने बारहसिघे के पेट, गर्दन, मुँह, आँख सब पर उसके स्लीपर पडते हुए अब वह खिडकी के पास पहुँच गयी है।

खिडकी से वर्षा की धूँए सी नीली फुहारे और दूर तक बिछा, नहाता हुआ आसमान, गाछो की लम्बी-लम्बी कतारे एकदम धुलकर हरे आशीर्वाद के बडे-बडे फूलो जैसी लग रही है। बिदा होती हुई सर्दी के हल्के चिन्ह आज दिन भर पानी गिरने के कारण साफ दिखायी दे रहे है, किन्तु गर्मियो का प्रारम्भ भी दूब के पीले-पीले सिरो से स्पष्ट है। सामने कोई पुराना मकबरा पानी मे भीग रहा है। उसकी दीवारो मे छोटी-छोटी घास उग गयी है जो इस समय हवा मे उड रही है—जैसे मकवरा हरी घास के धूएँवाला हुक्का पी रहा है। आज रास्ते मे मुझे इतने मकबरे मिले और उस ताँगेवाले ने और भी दूसरे कितने ही मकवरो के बारे में बताया कि मेरी समझ मे यह नही आ रहा है कि लखनऊ जिदो का शहर है या मकबरो का !

"यहाँ आओ, अकलक !"

और मै रजना के बहुत पास जाकर खडा होगया हूँ। उसके बालो से बहुत ही मीठी गध आ रही है जिसमे मेरा मन और तन दोनो डूब जाना चाहते है। इससे कभी नही

इन्कार किया जा सकता कि मानव-शरीर मे, खासकर युवा शरीर मे, एक गध होती है और गध के साथ ही साथ आकर्षण भी—जैसे हरे चम्पे की गध, जिसे मैने बचपन मे शिव की मूर्तियो पर से काफी चुराया है। रजना मेरे इतने पास खडी है कि मै उस शरीर की गध को अपनी दोनो हथेलियो मे सप्तपर्णी जलफूलो की तरह भरकर अपनी आँखो से छुलाकर स्वय को एकदम खो देना चाहता हूँ। किन्तु क्या मै ऐसा कर भी सकूँगा ?

"अकलक ! या तो सब कुछ सोचना ही छोड दो, या फिर जो भी सोचते हो उसे कर डालने का साहस भी रक्खो। जो कार्य नही बन सकता उसे न विचारना।"

और रजना कितने जोरो से हँस पडी है कि बरसता पानी तक चौकन्ना होगया है। तो रजना ने यह कैसे जान लिया है कि मै उसके ही बारे मे सोच रहा हूँ। उस सोचने मे का एक अश भी कभी कह दिया जाये तो कोई भी परायी नारी सुनकर सहन नही कर सकती, भले ही वह सुनना मन को कितना ही मीठा क्यो न लगे। कई बाते कही नही जाती। उन्हे कहना, भोडा करना है, क्योकि कुछ करने के लिए ही बना है और कुछ कहने के लिए ही। इस अतर को न समझ कर कई बार हम अपने चारो ओर मकडी का जाला बुन लिया करते है। रजना ने कितनी चतुराई से इसे भाँप भी लियाा है और पकडायी मे न आनेवाली अभिव्यक्ति से कह तक डाला है।

"मै समझा नही, रजना !"

और वह अपनी लाल हथेलियाँ बाहर की बूदो के साथ खेलने के लिए खिडकी से आगे बढा रही है।

"माल रोड वाली शाम को भी तुमने यही कहा था।"—

वर्षा-श्री का रसवर्षण जिसमे भीगता हुआ बाँह—नाल का अरुण हथेली-कमल ! !

किन्तु मेरे दिमाग मे ठडी हवा के झोको के साथ वह माल रोड वाली शाम की भी बात झोका बन जाना चाह रही है। जो इस नारी को पिछले सारे जीवन मे किये हुओं मे से आज अचानक ही और वह भी इतने जोरो से स्मरण आ रही है कि मुझे कहना चाह कर भी, किस प्रकार मुझे बाध्य कर रही है कि मै पूछूँ !

"रजना जी, वह माल रोड

"हाँ, माल रोड। क्या लाहौर को इतना भूल गये कि माल रोड, रजना, वह शाम कुछ भी स्मरण नही ?"

नही, कोई व्यक्ति इस सीमा तक किसी को भ्रम मे नही रख सकता है। यह निश्चित ही धोखे मे है कि मै उसका अकलक हूँ। वह अकलक, जो रजना के जीवन मे जाने कितनी तरह की कडवाहट भर गया है, और माल रोड वाली शाम को तो शायद. . होगा ; किन्तु निश्चय ही वह कोई भी व्यक्ति हो, कभी भी अच्छा नही रहा है। क्योकि रजना के जीवन मे वह विष की ऐसी रेखाएँ खीच गया है कि विवाह का अमृत भी उनको नही मिटा पा रहा है, और यह रजना उसकी आग मे फुँकी जा रही है। कदाचित् उस ज्वाला को शात करने

के लिए इसने क्या कुछ न किया हो, और बहुत कुछ वह बुझ भी गयी होती जो आज मै न आया होता तो । आज मैने आकर वही किया जो बुझती हुई जगली आग के लिए हल्की हवा का एक झोका करता है । हम दोनो ही जानते है कि इस क्षण हम साथ है, शाम को मै कानपुर के रास्ते अनजान शहर मे, अनजानो के बीच खो जाऊँगा । आज शाम के बाद से तो फिर हम एक दूसरे को खो देगे, किन्तु रजना जैसे पागल होगयी है । कोई घटना धूएँ की भाँति घुट रही है इसके मन मे और जिसे कुछ शब्दो से अभिव्यक्त करना भी चाह रही है । मै दिल मे तय कर चुका हूँ कि इसकी इस पीठ पर सान्त्वना और प्यार का हाथ फेरूँगा । मेरा हाथ सिल्क मे लिपटे हुए गोरे गरम कधे को छुएगा और रजना के इस जलते जीवन को एक क्षण के लिए ठडक अनुभव होगी । तब इसके चेहरे पर कैसी सतोष की परछाई फैल जायगी, जैसे जलते हुए रेगिस्तान पर खजूर की पखदार छायाएँ उतर आती है और उस छाया तले रेगिस्तान की आत्मा कैसी हरी-हरी शाति का अनुभव करती है ! रजना के चेहरे पर परछाई को देखकर मेरी आँखे प्रसन्न हो उठेगी, और प्रसन्नता मे मेरी आँखे छोटी हो जाती है ।

"रजना ! क्या तुम सचमुच ही दु खी हो ?"

शराब पी हुई गोल लाल छोटी आँखे देखकर मुझे वीर-बहूटी हमेशा याद आती रही है और मेरी पत्नी इस बात पर बहुत चिढती है । कहा करती है कि यदि फिर पीकर आये तो वह इमली का केवल खट्टा पानी ही पीने को देगी ।

"अकलक ! तुम सशय और अविश्वास के मात्र कीडे हो । जाओ, चले जाओ यहाँ से"—

और वह चीख पडी है । मुझे इस बात की आशका न थी, ऐसी बात नही है । किन्तु इतनी शीघ्र और वह भी रजना जैसी नारी से जो नारी होने के पहले चतुर और मिष्टभाषी भी है—क्या आशा थी ?

मैं उसकी ओर अब केवल मूर्खो की तरह देखने का कार्य कर रहा हूँ । उस दिन चाहकर तुमने अपने आपको मेरी दृष्टि मे गिरा लिया था, तब मेरे मन मे कुछ भी साफ नही था, किन्तु आज तुमने न चाहकर अपने आपको गिरा लिया है, जब कि सब कुछ मेरी समझ की बाँहो के बीच बँधा घिरा है । किन्तु मूर्ख तुम ही बने अकलक ! मै नही ! ! क्या सच ही तुम कुछ भी याद नही कर पा रहे हो ? तो फिर सुनकर बता सकोगे कि तुम्हे याद है अथवा नही ?

"रजना ! तुम गलत समझकर मुझे मूर्ख कह सकती हो, क्योकि यह आवेश है; किन्तु . . ।"

"यदि यह तुम्हारे मन का भाव है, तो मुझे दु ख है ।"

"अच्छा, आओ लॉन मे चलकर बातचीत करेगे ।—बैरा ! . . . . ."

और रजना ने कितनी सफाई से गर्मी का बहाना बनाकर, आँखो के तटो के पास जो

पानी आ गया था अपने सालू के छोर से पोछ लिया।

बैरा ने मालकिन से बिना पूछे ही लॉन मे दो कुर्सिया और छोटी मेज फुहारो बरसते पानी मे लगा दी है। धुली चिकनी कदली, लॉन के चारो ओर कैसे कायदे से लगी हुई है! उसके वे लम्बे पीले केसरिया लाल बुँदकियो वाले फूल सुहाने लग रहे है। ऊपर आसमान मे कई रगो की चिडियाँ, तोते इस हल्के पानी मे भीग-भीगकर खुश होते हुए उड रहे है। मुझे याद आ रहा है कि अब छोटे गड्ढो मे पानी भर गया होगा और बहुत सारी चिडियाँ उन गड्ढो मे पजो के बल धँमकर अपने पैरो से पानी उछाल-उछालकर नहा रही होगी, जैसे गाँव के पोखर मे स्त्रियाँ नहाती है।

हम लोग इस समय तक बरामदे मे पहुँच चुके है। पीतल के गमलो से भरे बरामदे के खम्भो पर झूलती हुई बेले हरिया उठी है। सीमेट के इन खम्भो की मोटी गोलाइयो को अपने पतले नरम कच्चे हरे अगो से ये बेले घेरे हुए है। लोहे के तारो की उँगलियाँ थामे ये बेले, कुछ दिनो मे पूरे दरवाजे की मेहराब की तरह हो जायेगी। . सीमेटी खम्भो पर बेलो की मेहराबे!! फिर तो एक दिन किसी सुहानी साँझ मे कुद कलियो के रग ओर गध से ये बेले, भरे अगोवाली वधू जैसी लगेगी और पूरा बँगला रग-कलियो एव गध-फूलो से भर जायगा—महोत्सव की भाँति! सीमेट के ऋतु-पुरुष को हरी बाँहो मे गूँथे हुए बेलो की ऋतुवधुएँ!!

रजना के दोनो छोटे कुत्ते जाने कहाँ से इस समय आ गये है और रजना की हवा मे लहराती हुई सलवार के साथ गिरते पडते खेलते हुए दौड रहे है। मै सोच नही पा रहा हूँ कि रजना का यह पाउडरयुक्त बाह्य सत्य है या लुहार की भट्टी सा वह अतर सत्य है। आज सुबह के बाद मे सचमुच ही होश मे हूँ कि नही, इसका निर्णय मै कई बार कर चुका हूँ। मैने नहाया है, खाना खाया है, होली के रग मे भीगा भी था आर इस समय बरसात की हल्की बूँदो के ठीक नीचे खडा हुआ रजना के साथ हल्के भीगने का सुख ले रहा हूं। किन्तु फिर भी कही कोई एक ऐसी कडी इस शृ खला से गायब है जो इसे असत्य किये हुए है, और जिसे मे समझकर भले ही नाम न दे पा रहा हूँ किन्तु उसके न होने का अनुभव अवश्य कर रहा हूँ।

"अकलक! मुझे आश्चर्य है कि तुमने वह प्रश्न अभी तक नही पूछा जो भारतवर्ष मे बहुत ही सहज है किन्तु मूर्खतापूर्ण भी है।"

और वह अपना हाथ घुटनो के बीच दाबे हुए कुत्तो को प्यार से देख रही है। आसमान से बरसकर बूँदे उसके चन्द्राकार केशो से खेलती चली जा रही है। उसके गोरे लाल चिकने गालो पर बूँदे फिसल रही है और मेरा मन तथा तन दोनो भीग रहे है।

"कौन-सा प्रश्न रजना! जो हर भारतीय पूछता है और मैने मूर्खता की, वह राष्ट्रीय रस्म पूरी नही की?"

मेरे इस उत्तर से पहली बार हम दोनो साथ-साथ हँस रहे है। मुझे तो कम-से-कम

बहुत ही अच्छा लगा और प्याज की तरह चमकदार दाँतो की हँसीवाली रजना के भावो से भी लग रहा है कि इस अवसर पर दोनो को खूब सारा हँस लेना चाहिए। यह क्षण सुख का है, आगे की कौन जानता है !

"मूर्खता की रस्म ! ! अकलक ! यही कि मेरे पति कहाँ है । तुमने उन्हे इतनी देर से नही देखा, और कइयो ने कदाचित् इस लखनऊ मे सुना ही सुना है कि कुलकर्णी, मिलिटरी मे कर्नल है और उन्हे यहाँ आने की कभी फुर्सत नही होती । तुम्हारा क्या ख्याल है ?"—

बैरा ने कॉफी की ट्रे लाकर रख दी है ।

"देखिए, जिस मामले मे मै मात्र द्रष्टा या श्रोता हुआ करता हूँ उसमे विश्लेषण कभी नही करता, क्योकि विश्लेषण, अविश्वास माना जा सकता है । सामनेवाला यदि घटना का अर्ध सत्य ही बताकर आपको परिचय की सीमा से किसी भी कारणवश दूर रखना चाहता है, और अगर हम "क्यो' और 'कैसे' द्वारा विश्लेषण करने लगते है तो हम उस सामनेवाले पर यह प्रकट कर देते है कि वह जो कुछ कह रहा है वह झूठ है और हम उसकी सचाई जानकर ही रहेगे। इसलिए मै मानता हूँ कि सामनेवाले को या तो कुछ न कहा जाये, या फिर इतने स्पष्ट तरीके से कह डाला जाये कि उसकी आँखे विस्मय से फट जाये कि—"ऐ, कोई ऐसा पूछ सकता है ?"

और मै देख रहा हूँ कि वह तन्मय होकर कॉफी बना रही है । शायद इसी तन्मयता का दूसरा अश मेरी बात को सुनने-समझने मे भी जरूर लग रहा होगा ; अन्यथा केवल अपनी बात कहने की आदी रजना, इतना सुनकर भी किस मनोयोग से कॉफी मे चीनी और क्रीम मिला रही है ।

"हूँ, तो तुम मुझसे ऐसी कौन सी बात पूछना चाह रहे हो या यो कहा जाये कि ऐसी वह कौन सी बात हो सकती है जिसे सुनकर तुम सच और झूठ का विश्लेषण छोडकर, विस्मय मे आँखे फाड सको कि ऐ , ऐसा भी क्या रजना नाम की स्त्री से सम्भव है ? लो, कॉफी पियो !"

और बरसात की बूँदो से काँपता हुआ मन, कॉफी की गर्मी पाकर बेहद खुश हो उठेगा, यह मै अपने मन के बारे मे भलीभाँति जानता हूँ ।

"यह आप क्या सोचती है ? मैने कोई वाक्य आपकी किसी बात को जानने के लोभ से सिद्धान्त की आड लेकर नही कहा है, रजना जी !

और मै देख रहा हूँ कि वह आत्मस्थ है, तन्मय है । उसकी पलके उसकी आँखो को ढँके हुए है । वे आँखे नीचे कॉफी के कप मे देख रही होगी, कदाचित् बहुत कुछ छिप-कर सोच भी रही हो—जाने कितने चेहरे, कितनी सडके, घटना-स्थल, सब देश, काल, परिस्थिति को पार करते हुए आ रहे होगे। हमे जीवन को एक क्षण मे पर्यवेक्षण कर जाने मे कोई असुविधा नही हुआ करती और हमारा आज का मन—कल तक की घटनाओ पर कभी 'छि, छि' या कभी 'आहे' भरता हुआ तटस्थ होने का प्रयत्न करता है किन्तु हमारा

मन उस समय यह भूल जाता है कि कल तक की 'छि, छि' पूर्ण घटनाओ से ही तो हमारा आज का मन बना हुआ है । और जब कोई इन घटनाओ की ओर सकेत भर कर देखता है, तो हम कैसे बीमार जैसे लगने लगते है और चाहने लगते है कि लोग हमारे इस पीप और सडाँध भरे मन को शाति की अँगुलियो से सहला दे ।

"देखती हूँ कि माल रोड वाली शाम और आज के इस दूसरे पहर मे बहुत साम्यता है ।"

काफी का सिप समाप्त करते हुए वह फिर बोल रही है—

"अकलक ! तुमने उस दिन भी कुछ पूछा था और तुम ऐसा पूछकर भूल सकते हो, किन्तु मै भूलकर कहाँ जा पाऊँगी ? हम घूमने जा रहे थे । तुमने किसी बँगले के गुलमुहर के फूलो का गुच्छा उठाते हुए मुझे देकर पूछा था कि रजना ! क्या मुझसे विवाह करोगी ?"

और मै अनुभव कर रहा हूँ कि वाक्य का अतिम भाग सुनकर गरम-गरम कॉफी से मैने अपना निचला ओठ, पूरा हलक तक जला लिया है और दिमाग पर गरम कॉफी के साथ ही यह तेज व कडवी बात दोनो ही जला देने वाला प्रभाव उत्पन्न कर रही है। मैने ऐसा क्यो कहा था ? मेरी आँखो के आगे अधकार की काली चीटियाँ, लाइन मे अपने बारीक कदमो को रखकर गुजरने लगी, और मेरा मन अपनी बात पर 'छि, छि' कर उठा है । किन्तु दूसरे ही क्षण इस विचार ने मुझे कितना सुख दिया कि नही, मै तो मात्र श्रोता हूँ और इस समय मै दूसरे क्षण मे से गुजर रहा हूँ। मुझे कॉफी मे बेहद मजा आ रहा है ।

"अकलक ! यह नही कि मै नही जानती थी कि तुम मुझसे ऐसा क्यो पूछ रहे हो। मुझे मालूम था कि तुम्हे यह ज्ञात है कि मै विवाह करना चाहती भी तो नही कर सकती थी ।"

बारिश पहले से कुछ फिर तेज होगयी है । कॉफी मे बूँदे बराबर गिर रही है और हम दोनो का ख्याल इस ओर बिलकुल भी नही है ।

"कदाचित् कोई रहस्य रहा हो इसमे !!"

मैने कितनी सफाई से चतुर एव नादानी का परिचय देते हुए उसके मन की तह मे छिपी गदगी या वास्तविकता को जान जाने की बात कह डाली है ।

"रहस्य !! अकलक, न तो तुम इतने भोले हो जितना कि दिखाया चाह रहे हो। दूसरे, रहस्य तभी तक तो रहस्य है जब तक वह अनकहा होता है, और कह दिये जाने पर वह दूसरी बातो की तरह हल्का फुल्का—एकदम गुब्बारे की भाँति ही हमारे लिए हो जाया करता है। और तब हम उस कही हुई बात के गुब्बारे की तरह तरह से शक्ले बनाकर खेलते है—समझते है कि हम कितने सर्वज्ञ है!! —तुम जानते हो कि मै अभी तक विवाह क्यो नही करना चाहती थी, और फिर मैने विवाह क्यो किया—और अकलक ! फिर एक नही अनेक विवाह किये और तोड फेके ! कई बार तो ऐसा भी हुआ कि लोगो के आधे नाम

का भी लेबिल लगाने की मुझे आवश्यकता न रही। और यह भी नही अकलक ! कि मुझे पिछला सारा इसलिए छुपाना पडा हो कि कही मुझे आगे कोई न मिले, बल्कि पिछला कहकर मैंने आगे का बहुत कुछ पाया। सोचती हूँ कि प्रत्येक क्रम एक सीमा पर जाकर समाप्त हो जाया करता है—सुना तो मैंने ऐसा ही है।

गोद मे खेलते हुए कुत्ते के मुलायम बालो मे रजना की फँसी हुई उँगलियाँ उसे सोचकर बोलने मे शायद बहुत कुछ सहायता दे रही है। सामने के ताडो को देखकर मुझे अपने यहाँ के नारियल याद आ रहे है जो इस समय समुद्री हवा मे इतने जोरो से हिल रहे होगे कि कोई अजनबी देखे तो समझ बैठेगा कि आज ये बेचारे पेड सब टूट जायेगे। किन्तु हम वहाँ के रहनेवाले भलीभाँति जानते है कि इतनी हवा के बोझ से कभी नारियल नही टूटा। यहाँ के ऐसे किसी पेड के बारे मे नही जानता, किन्तु मै हमेशा स्त्रियो के बारे मे नारियल की उपमा देता रहा हूँ। अपने लटकते हुए पियराते, तँबियाते रग के प्राणहीन बडे-बडे पत्तो को लेकर मुरझा जायेगे। पर मौसम बदला नही कि सबसे पहले अपने ताँबे के रग के पत्ते छोडकर नयी-नयी कोपलो से, ऐसे तो क्या पीपल, क्या बेर, मगर धरती स कितने ऊँचे नारियल—रातो रात बदल जाते है। मुझे कभी भी नारियल और नारी मे असगति नही लगी है। कल की आलिंगनवती, आज आँखो मे अपरिचय की सफेदी मे दखी जा सकती है।

मगर मै शायद गलत सोच रहा हूँ, क्योकि मुझे रजना की उन बातो मे से चर्चा को आगे बढानेवाले सूत्रो को खोज निकालना चाहिए था।

"तुमने मेरी बात का उत्तर नही दिया, अकलक !"

"कई बार हम बोलकर कुछ प्रसग को गडबडा दिया करते है, और मेरे साथ तो विशेषकर ऐसा ही होता रहा है, रजना !"

"अच्छा ?"

और रजना ने "अच्छा" इस बडप्पन के ढग से कहा है कि मुझे सचमुच ही लगा कि मेरी चतुराई इसके सामने नही चल सकती है, नही ही। और मै देख रहा हूँ कि मुझे वह पकड सकी है, तभी खुशी से वह एकदम इस बेलाग तरीके हँसती जा रही है, जैसे मशक का पानी मशक के फट जाने पर एक साथ बाहर निकल पडने की जल्दी कर रहा हो !

"तुम्हे बिलकुल भी आश्चर्य नही हुआ, अकलक ?"

और बहुत देर के बाद मै देख रहा हूँ कि उसने अपनी आँखे मुझे देखने दी है।

सामने का बगाली परिवार कही बाहर जाने की पूरी तैयारी कर चुका है और वे लोग सब एक ताँगे पर चढ रहे है। दो लडकियाँ, एक लडका, माता और पिता—बिलकुल साँचे मे ढला हुआ परिवार, कही से भी कोई भूलचूक नही। अब थोडी देर मे इस नॉर्थ-एवेन्यू की पतली नहर मे से निकलकर यह परिवार जाने कहाँ खो जायेगा ! मै इसके बाद इन सब मे से किसी को भी नही देख पाऊँगा क्योकि मुझे आज ही शाम की गाडी से

लौट जाना है । अधिकतर लोगो के लिए हम मात्र यात्री हुआ करते है। लोग हमें जो जान भी पाते है तो वह चाँद का उजला भाग हुआ करता है। चाँद के दूसरी तरफ क्या है, यह कौन जानता है ?

हम बोलकर ही शत्रु तथा मित्र बनाते है, और न बोलकर बिल्कुल अनजान बने रहते हैं। जो जितना अधिक और जितने अधिक लोगो से बोल पाता है वह उतना ही बडा मित्र या शत्रु हुआ करता है । मै अगर रजना के स्थान पर इस बगाली परिवार से मिलने आया होता तो यह परिवार इस समय कही और न जाकर मेरे साथ अपने उस लॉन मे बैठा होता कि जिस लॉन के दरवाजे को माली ने अभी-अभी बद किया है। ये दोनो बच्चे मुझे किसी सबोधन से पुकारते। किन्तु इस परिवार या शेष पूरे लखनऊ को मेरे आने का पता भी नही लगेगा।

"रजना, आश्चर्य प्रकट करके हम लोगो पर यह प्रदर्शित कर देते हैं कि आज के पूर्व हमने जो कुछ देखा, सुना था वह कितना हल्का एव छोटा—छि, एकदम क्षुद्र—था और हम इस छोटेपन को कभी भी नही चाहते कि कोई देख ले। इसलिए क्या चाहती हो कि मै कहूँ कि महान् आश्चर्य है रजना ! !—ओर मै यह कह भी दूँ, मगर किस बात पर, कि मेरे सामने एक ऐसा व्यक्ति बैठा हुआ है जिसने पिछला छोडते जाना अपना जीवन बनाया है, तथा 'और आगे' को जीवन का लक्ष्य ? किन्तु क्या तुम्हारे वाक्यों को प्रमाण मान लूँ ?"

"देखो अकलक ! तुम बिलकुल झूठ बोल रहे हो। यदि यह न होता तो उस शाम, माल रोड पर न पूछा होता। जानते हो मै तब भी विधवा थी ओर अकलक ! क्षमा करना, मुझे ऐसा लग रहा है कि मै न तो कभी सधवा ही थी और न विधवा ही—किन्तु, कदाचित्, इन सज्ञाओ से परे किसी भी नारी की कल्पना तुम न कर पाओ। यह तो अपने अपने सस्कारो, परिस्थितियो का प्रश्न है । मुझे भी इन सस्कारो के भूत और देवता सभी से युद्ध करना पडा है।"

और यह कहते-कहते अपने नगे पैरो से वह गीले लॉन पर टहलने लगी । मेरी समझ मे कुछ भी नही आ रहा कि यह रजना मेरी सहानुभूति की अपेक्षा रखती है या नही। क्योकि जलती आग को एक बूँद की सहानुभूति का अर्थ मुझे न पता हो, सो नही।

कई बार हम देखते हैं कि चुप रहना और बोलना दोनो ही अनिष्ट के कारण बन जाया करते है। मै नही जानता कि रजना मुझे अपने मनोल्लोक के किस प्रदेश मे घसीट लाना चाहती है । यह मुझे स्पष्ट ही है कि वह या तो बर्फ की भाँति प्राणहीन सज्ञाहीन कर देनेवाला लोक भी हो सकता है या फिर वह जलता हुआ सहारा का रेगिस्तान भी। किन्तु वह जीवन देनेवाला मैदान, जहाँ फसले, फूल, झरने और बगीचे हुआ करते है, कभी भी नही है । क्या मै कभी भी इसके साथ चल सकता हूँ ? जहाँ यह चल रही है वहाँ केवल यही चल सकती है, तभी तो इसे इतने व्यक्तियो को बदल-बदलकर चलना पडा है।

इसे प्रत्येक अनागत के प्रारभ का कितना मोह रहा होगा, किन्तु कुछ दिनो बाद तो एक-एक क्षण साइबेरिया की अग काट देनेवाली हवा की तरह ठडा, प्राणघातक लगता रहा होगा। क्योकि पराकाष्ठा, वह रूप की ही क्यो न हो, मशाल के केन्द्र मे जलनेवाली आग की पुजीभूत राशि से क्या कम जलनशील हुआ करती है ?

"अकलक ! न बोलना चाहो तो बात दूसरी है किन्तु तुम अनायास ऋतु की भाँति चले गये यह अच्छा नही हुआ। मैंने मन ही मन कितनी बार चाहा कि तुम एक क्षण को लौट आते, चाहे वह क्षण उधार ही होता पूरे जीवन के बदले। और आज तुम लौटे भी, तो अनजाने बनकर। आज मै तुम्हे पाकर चाह सकती थी, किन्तु आज की दशा मे पाना और खोना—दोनो ही मेरे लिए अर्थहीन से कम नही है।"

रजना कदली के एक फूल को अपनी दोनो हथेलियो से सहलाते हुए मेरी ओर देखने का उपक्रम कर रही है। पानी बरसकर आसमान के बादलो मे चुप है, जैसे वह बरसते हुए रजना को सुन न सकेगा—बिना बरसे तो रह सकता है, किन्तु बिना सुने नही। दूर दूर तक सडक धुली लग रही है। उस कोने मे बने छोटे से पार्क की चार-दीवारी मे झूलती हुई साँकल के काँटे कैसे खूबसूरत लग रहे है ! पार्क मे विशाल फव्वारे की रोमन परी के सगमरमर के पर उडते हुए बने है—धुलकर जिनमे फिर उजलापन भर गया है, लगता है, बादल परी को उडा ले जाना चाहते है और फव्वारा यह बात जानता है।

मुझे बोलना चाहिए, क्योकि रजना चाहती है कि मै बोलता रहूँ, जिसमे उसे बोलने के लिए प्रेरणा मिले और वह बोलते हुए उसी तरह चलती चले जैसे भोर की बेला, सुनसान गाडियो को जोतते हुए गाडीवाला अपने बैलो से ही बाते करता चलता है। क्योकि न बोलने से हमे चारो ओर की चुपचाप बहनेवाली नदी, पहाड, जगल सब भयावने लगने लगते है, न बोलने से हमारे अदर का ही हमे खाये जाता है।

"रजना ! मुझे सहानुभूति है।"

और मैंने देखा कि मै कितना गलत बोल गया हूँ। क्योकि रजना की दोनो हथेलियो ने उस बेचारे फूल को कुचल दिया है। जो हम सुनना नही चाहते, जब वह सुनने को मिलता है तो हमारी हथेलियाँ पत्थर की हो जाती है और जलने लगती है !

"अकलक ! मै दया, सहानुभूति या उपेक्षा की पात्र नही हूँ। तुम भूलते हो यदि मै इन सबकी अपेक्षा करती हूँ तो। बोलो, तुम क्या सुनना चाहते हो ? मै सब कह देना चाहती हूँ और कह भी दूँगी।"

और मैंने देखा कि उसकी दोनो पुतलियाँ जलती मोमबत्तियाँ हो रही थी। मुझे सहम जाना चाहिए और मै सचमुच सहम भी गया हूँ। सामने के तार पर बैठी हुई, पहली बार इस मौसम मे कोयल देखने पर भी अच्छी नही लग रही है, और खासकर जब वह अब बोलने भी लगी है तो चाह रहा हूँ कि वह उठकर चली जाये। कोयल बोल रही है और

मेरी आँखें उसे देखने से बाज नही आ रही है। मेरा मन, रजना की बातो मे जो कडवाहट, दम्भ, उपेक्षा एव उच्चता है, उसे सहन नही कर पा रहा है । किन्तु मै सिवाय सुनने के और कर ही क्या सकता हूँ ! मै पहली बार चाहने लगा हूँ कि काश ! मै अकलक होता और तब सचमुच ही उसकी उपेक्षा की होती। तब यह उपेक्षिता नारी अपनी वाछा का आँचल उसी तरह फैलाती जिस भाँति बादल अपने आँचल मे, आसमान से धरती पर गिरती हुई किरणे झेल लेता है। मुझे यह पहले मोहेगी, और तब मै कटे पीपल की भाँति गिर पड़ूँ, यह न हो सकेगा रजना! मै बनियान की फैक्ट्री मे काम करता हूँ। विज्ञापनो मे सुन्दर से सुन्दर स्त्री को भी देखकर झुकना मुझे स्वीकार नही हुआ, तब तुम क्या हो? हाँ तुम हो ही क्या? जाने कितनो की सोच नही सकूँगा, क्योकि मै रजना की ऊँचाइयो तक पहुँचने की जब कामना नही करता तो फिर उसकी पाताली नीचाइयो मे क्यो झाँकू? मुझे रजना से क्या लेना देना? मै आया हूँ, नही भी आ सकता था—और एक दिन के कुछ घटे का आना, आना थोडे ही हुआ करता है!

"मै कुछ भी नही सुनना चाहता, यह मै कितनी बार कह चुका हूँ रजना!"

"बस!!"

और उसने कनेर का लम्बा पीला फूल मेरे कुर्ते मे खोसते हुए मेरे वाक्य को तेजी से दोहरा दिया।

वह हँस रही है।

"अदर चलो। मै आज कहूँगी, और तुम सुनोगे। अगर जल्दी न कह सकी तो तुम्हारे प्रति ज्यादती होगी। इस समय ढाई हो रहा है और आज ही तुम्हे लौटना भी है, मुझे तुम्हे वापस लौटा देना है। तुम्हे लौटाने का काम मेरा है और अपने काम मे मुझे तुम कभी भी हीला-हवाला करते हुए न पाओगे, समझे? चलो भीतर, काफी पानी मे भीग लिये हो अब। भीगने की कभी आदत भी तो नही होगी? मुझे तो आदत ही नही, नेचर तक बन गयी है। ऐसा क्यो है, कभी मत पूछना। क्योकि पूछने पर बताना मेरे लिए ही नही, नारी मात्र के लिए कठिन है। न कहनेवाला व्यक्ति नारी है और कह देनेवाला पुरुष!!

कमरे मे पहुँचकर मैंने देखा कि धुध ही धुध भरी हुई है । मुझे लग ही नही रहा है कि मै यहा कुछ घटे पूर्व ही आया हूँ । मै यह मानने को कभी तैयार नही हो सकूँगा कि इन सब चीज़ो को आज पहली बार और अतिम बार के लिए देख रहा हूँ ।

बीचोबीच झाडफानूस जल रहा है । और जिसकी परिछाइयाँ दीवारो के शीशो में लकझक लकझक कर रही है । सामने की दीवार पर एक तैलचित्र बना है जिसमे साँझ की लाली बहुत ही डरावने तरीके पर बनी हुई है । चित्र मे अधकार की काली तलवार ऊपर आसमान से टूटती हुई गिर रही है—नीचे धरती पर छोटे-छोटे खूबसूरत फूल खिले हुए है, बस ! ! और मेरा मन चीख पडने को हुआ कि रजना वे फूल फट जायेगे ! ! किन्तु मुझे प्रसन्नता है कि मै चीखा नही हूँ । यह मुझ पर तब बहुत ही हँसती, क्योकि रजना ने इस चित्र को देखा ही नही होगा, बल्कि इसे प्यार भी किया होगा । भावो की कुरूपता को चित्रकार ने अभिव्यक्त कर भले ही अच्छा न किया हो, कितु रजना ने खरीद कर एक गुरुतर अपराध किया है जिसका निश्चय ही कोई दड नही है ।

"क्या देख रहे हो अकलक ! देखो, अब दूसरी ओर न देखो । मुझे कहना ही होगा । न कहकर मै अपनी दृष्टि मे ही गिर जाऊँगी और कहने पर तुम मुझे नीच, पतिता ही तो समझोगे ? मुझे दूसरा क्या कहता है, इसकी चिन्ता नही रही है । डर तो मुझे हमेशा इसका रहा है कि कही मे स्वय को नीच न कह बैठूँ । उस दिन के बारे मे मै सोच नही सकती अकलंक ! जब मुझे स्वय को ऐसा सब कुछ कहना पडेगा !"

मै देख रहा हूँ उसके उभरे वक्षस्थल मे साँसो की कई परते जमा होती जा रही है, और कितनी कठिनता से वह साँस ले रही है । दीवारो पर हरिण और शेरो के सिर निरीह एव नि सहाय ढँग पर टँगे हुए है । इस कमरे के बाहर जीवन बिलकुल भी बँधा नही है । मगर रजना ने ऐसा क्या किया है जो उसे इन दीवारो के बाहर नही जाने देता ! वह बिलकुल उस बावडी की तरह होगयी है जो किसी जमाने मे किसी राजा के द्वारा बहुत ही सुन्दर एव मोहक पत्थरो की जालियो तथा मेहराबो से सजाकर बनायी गयी थी, किन्तु आज तो उसमे पानी मरकर काई और सडे पत्तो की सडाँध से सब कुछ मृत लग रहा है—पत्थर की सुदरता मे भय भर गया है । दिन मे डर लगता है तो रात को भय के नाखून और कितने काले-काले तथा तेज़ हो जाते होगे, कह नही सकता । मुझे लग रहा है कि अब यहाँ से चल देना चाहिए, किन्तु सामने मेरी ओर आती हुई रजना कितनी सुन्दरी है ! वर्षा की समस्त गुलाबी साँझ का रूप समेटे और सिर पर जैसे इद्रधनुष का मुकुट पहने चली आ रही है—मै इससे विद्रोह कर सकूँगा ? कोई इससे विद्रोह कर सकता है ? क्या मै बिना इसके रह सकूँगा ? नही, रजना के बिना शेष रहना अब नही हो पायेगा, चाहे

वह रहना शाप ही क्यो न हो—रगमय शाप निर्जीव वरदान से श्रेष्ठ है । और मै यह रजना पर स्पष्ट भी कर दूँगा, चाहे फिर कुछ भी क्यो न हो । रजना मेरे निकट आकर बैठ रही है ।

मेरी हथेलियो को अपनी हथेलियो मे लेते हुए वह एक बार मेरी आँखो मे झाँक चुकी है और अब बोलने की चेष्टा मे है । कितने बारीक ओठ, एकदम तराशे हुए, पतले—जिनकी रक्त की लाली मेहदी-सी फूटी पड रही है ।

"कोई चिन्ता नही अकलक ! तुम्हे बाध्य नही होने दूँगी । केवल कहना चाहूँगी, इससे आगे कुछ भी नही, कुछ भी नही , समझे ?"

और उसका वह गौर आनन, मेरे वाम कधे पर एक क्षण के लिए झुक गया—पहली बार लगा कि साँझ होना किसे कहते है । जाने क्यो विचारो का व्यतिक्रम इतनी शीघ्रता से असम्बद्ध रूप मे गतिमान है कि मै किसी भी विचार को रूप एव अभिव्यक्ति नही दे पा रहा हूँ । पूरा कमरा मुझे घूमता सा लग रहा है । वह 'लेकून्स-क्राई' वाली मूर्ति, उस फायर प्लेस से उठकर बडी होती जा रही है, ठीक उसी तरह जिस तरह समुद्र किनारे किसी को एक बद शीशी मिली थी, और उसमे का बद राक्षस फिर किस प्रकार धूएँ के सहारे पूरे आसमान मे फैल कर बडा होगया था—दार्शनिक और उसके बच्चे तथा उनकी चीखे सब मेरे सामने उस राक्षस की तरह बडी, बहुत बडी होती जा रही है । रजना का सिर मेरे कधे पर—मेरी कुछ भी समझ मे नही आ रहा है, जो समझ पा रहा हूँ वह है कि साँझ होना किसे कहते है—किसी का कधे पर झुका हुआ सिर, साँझ है ।

"सुनो, क्या तुम अपनी उँगलियाँ मेरे बालो मे नही फेर सकते ? तुम नादान हो अकलक ! बिल्कुल बच्चो की तरह तुम कुछ नही समझते हाँ, कुछ नही समझते ।"

और अब मेरी उँगलियाँ उसके घुँघराले बालो मे घूम रही है, जैसे काले लहराते कँटीले तारो मे जिनमे कि बिजली गुजर रही हो । मैने छू ही नही लिया है, बल्कि उन तारो ने मेरी उँगलियो को ठीक वैसे ही घेर लिया है जैसे सोने की पत्ती की तरह दीपशिखा को अधकार चारो ओर से जगली नीग्रो की तरह घेर लेता है—बिजलियो के काले कँटीले तार ! !

"जानते हो अकलक ! सीमाप्रात मे जहाँ मै पैदा हुई थी, वहाँ से हम लोग क्यो चले आये थे ? तुमने तो मुझे लाहौर मे ही देखा था ।"

अब वह मेरे कुर्ते के बटन से ठीक उसी तरह खेल रही है जिस तरह मेरी बच्ची मुझसे पैसे लेने के लिए मेरी खुशामद करते हुए मेरे कोट या कमीज के बटन से खेलती होती है । चूडियो से भरा गोरा हाथ, मेरे वक्षस्थल के आसमान मे मोतिया मेघ की तरह घूम रहा है—एकदम चिकना ! !

"वहाँ सीमाप्रात मे मेरे पिता रुपये का लेन-देन करते थे—और बाबा रे बाबा, कितना भयानक होता है वहाँ के लोगो से एक-एक रुपया वसूलना !"

और अपनी पलको को ऊँचा करते हुए कितने भोले से देख रही है, जिसमे मै मान लूँ कि सचमुच ही उन सीमाप्रात के लोगो से रुपया उगाहना या तो अग्रेज बहादुर का ही काम था या फिर रजना के पिता का ।

"पिता जी दिन भर कारतूस की पेटी बाँधे हुए कधे पर बदूक लटकाये अपनी साडनी (डाची) पर सवार उन ऊँची नीची घाटियो और दर्रो मे चक्कर काटा करते थे। मेरी माता दिन-दिन भर खाना नही खाती थी, उन्हे खटका ही लगा रहता था कि पता नही किस समय क्या हो जाये ।"

उसकी गरम गरम हथेलियो के नीचे मेरी हथेलियाँ गुमसुम चुपचाप लेटी हुई है। वह अपने लम्बे-लम्बे क्यूटैक्स रँगे नाखूनो से कभी-कभी मेरे हाथो पर कुछ लिख भी देती है। कभी इन्ही नाखूनो से आदिमकाल की नारी फाड भी डाल सकती थी, पर आज तो ये नाखून नारी की शोभा है, बनारसी बाग के शेर की भाँति ही।

मै बार-बार 'हाँ, हूँ' करता जा रहा हूँ। मानसून के कारण ठडी हवा पूरे कमरे मे भरती जा रही है और झाडफानूस मद तरीके पर हिल रहा है । इन्ही परदो के पार स्वस्थ वायु बह रही है और इन रगीन परदो के भीतर बैठी रजना, अपनी पलको मे जाने क्या-क्या कडवा भरे हुए है। ये रगीन परदे, बिलकुल हाथी के दाँतो की तरह धोखा देनेवाले है। मै उसके बालो को कितने पास से देख रहा हूँ। माँग, एकदम बीच मे—बालो की लहरे कैसी अलग अलग कर दी गयी है, और मेरा मन सहज चाहने लगा है कि उन लहरो को एक बार ओठो से चूम लूँ। ये बाल मेरी आँखो पर, पलको पर, गालो पर, ओठो पर काली घटा की तरह फैल जाये, बस, फैल जाये।

"उस गाँव का सरदार एक पठान था—महमूद। और उसका जवान, गोरा चिट्टा, घोडो के से कँधेवाला लडका था सैयद। जानते हो अकलक! मै जब तेरह वर्ष की रही हूँगी, वह बहुत घूर घूर कर मुझे देखता था। उसकी वह घने घेरवाली सलवार और लम्बा कुर्ता, जिस पर वह काली जैकट, जिसमे सस्ता हरे सिल्क का एकदम झीना—लाल बूँदकियो भरा रूमाल कँधे के पास खुँसा रहता था। अपने बडे से चाकू से हमेशा वह अपने दाँतो मे लगा गोश्त कुरेदता रहता था। गजब की तेज धार उसके उस चाकू की हुआ करती थी। अपनी कलमे तक वह उसी से बनाया करता था और गुलेलो के लिए लकडी भी वह उसीसे काटा करता था। जब वह अपने घोडे पर बैठकर रात मे पडोस के कबीले वालो को लूटने जाता था तब उसकी आँखे कितनी शरारतभरी होती थी कि गाँव की हरएक लडकी उस समय डर जाती थी! सुबह जब वारदात की शोहरत फैल जाया करती थी, और दूसरे कबीलेवाले आकर चिल्लाने लगते थे, तब वह कितना निडर होकर अपने घोडे की जीन पर निस्पृह बैठा हुआ बासी रोटियो के साथ कच्चा गोश्त चबाता रहता था।"

रजना ने यह कहते-कहते मेरे दोनो कधो को झकझोर दिया, जैसे मै निश्चय ही बात सुनते-सुनते सो गया हूँ और मुझे नही सोना चाहिए था।

"जानते हो अकलक ! वह मुझे अत्यत प्यार करता था और मै भी शायद प्यार करती थी। कैसी मूर्ख थी, कि जिस उम्र मे लडकियाँ गुड्डे-गुड्डियो का ब्याह रचाती है, मैने अपना ब्याह उसी सैयद से रचाया।"

मैने किस बुरी जगह उसे 'क्या' कहकर टोका ! मै जान रहा हूँ कि ऐसी भावुकता मुझमे पहले कभी नही रही है, किन्तु आज ही जाने कहाँ से यह आ गयी है ! हो सकता है, शाम तक यह भावुकता न भी रहे, क्योकि व्यापारियो से मुझे काम पडता है । व्यापारी लोग रजना की भाँति कधे पर सिर रखकर बनियानो के आर्डर नही देते है । मुझे ठीक तरह याद है कि मेरी पत्नी ने भी कई बार इसी कधे पर सिर रखा है, किन्तु मेरी भावुकता का सदा यह रूप रहा है कि या तो मैने उसे खूब कसकर चूम लिया है या फिर हँसकर दूर कर दिया है ।

किसी का सिर कधे पर हो और एक लम्बी कहानी का प्रारभ आपके कधे का सहारा लेकर हो जाये, साथ ही आपको इतना भी स्मरण न रहे कि आप बिलकुल अजनबी व्यक्ति है, किसी दूसरे के अतिथि होकर आये थे, और आज शाम को आप जा भी रहे है—सचमुच ही बात बडी अजीब लगती है । अजीब इसलिए नही कि स्त्री और पुरुष आज के पहले इस तरह कभी न मिले हो, बल्कि इस तरह की परिस्थितियो मे यह सब—और ऐसा सब कुछ ! !

"रोको मत अकलक ! जो भी तुम्हे कहना हो वह बाद मे कह लेना। कहना न चाहो तो कोई आग्रह भी नही है, लिख भेजना,—किन्तु इस वेग को मत रोको । रोकोगे, मैं टूट जाऊँगी, तुम टूट जाओगे इस वेग के सामने । उचित तो यही है कि चुपचाप मुझे कहते रहने दो और तुम सुनते चलो। तो, मैने सैयद से विवाह किया। उसे मैने, अपने अदर की प्रथम अछूती नारी के सबसे पहले ताजे कुँआरे फूल जैसे मन से प्यार किया। वह पहली रात मै कभी नही भूल सकती, जिसे सैयद 'शबे-जश्न' कहा करता था। मैने अपने माता-पिता से छुपाकर सैयद से निकाह पढा था। जश्न की रात को हम दोनो ने काफी शराब पी थी ओर उसने मुझे सिर पर बाँधा जानेवाला बुँदकियो भरा एक रेशमी हरा रूमाल, जिसमे सलमे सितारे भी टँके हुए थे, उपहार मे दिया था—शबे-जश्न का उपहार ! !"

और वह एकदम झटका देकर खडी होगयी । वह हाँप रही है। वह हाँपती हुई सामने की आलमारी की तरफ बढी और तेजी से उसने आलमारी का पल्ला खोला। बहुत सारे कपडो के ढेर मे से एक हरा रूमाल निकाला। वह चीखती हुई बोली—

"यह है अकलक ! उस सैयद का रूमाल ! शबे-जश्न की सौगात ! ! मेरी पहली नारी को जो उसके उत्सर्ग मे सैयद ने दिया वह है यही रूमाल। उस सैयद का यह प्रतीक है, जिसे मैने जाने कितना प्यार किया था !—माँ-बाप से झूठ बोलकर मै उसके साथ एक साँझ उसके घोडे पर घर से भागी। उसने मुझे कहा था कि उसे पेशावर मे फौज मे काम मिल गया है और हम दोनो वहाँ सुख से रहेगे। मगर जब वह मुझे लेकर एक पहाडी दर्रे मे पहुचा,

उसने साफ साफ मुझ से कहा कि वह मुझे अफगानियो के हाथ बेच चुका है, और सैयद स्त्रियो को बेचने का व्यापार करता है । मैंने उससे कितनी विनती की अकलक ! जानते हो ? नही। और किस बात की विनती थी मेरी ? यही कि उसे जो उधार अफगानियो को देना है वह मै चुका दूँगी, मगर वह अपनी उस बीबी को जिसका कि वह शौहर है, न बेचे । किन्तु उसने बताया कि उसकी और भी चार बीबियाँ है, वह पाँचवी बीबी धर्म की वजह से नही रख सकता। और अकलक ! मैंने तब आधी रात मे गाफिल सोये हुए सैयद को दूसरे अफगानियो के साथ उसकी ही दुनाली से खत्म कर दिया।"

रजना की आँखो मे उस हब्शी के तैलचित्र वाली आँखो की प्रतिच्छाया मुझे लगी। मेरे पास इस बात का निर्णय करने का समय और मन दोनो ही नही कि रजना को क्या करना था और जो कुछ किया वह ठीक ही किया।

"सुबह जब मै घर पहुँची और घरवालो को सारी बाते मालूम हुई तब मुझे ठीक याद है कि हम लोग कितनी जल्दी वहाँ से भागे थे—क्योकि सरदार के लडके की कोई हत्या करदे तो क्या वह बच सकता है ? और मैंने देखा था कि हमारे घोडो का पीछा करते हुए सरदार और उसके साथियो ने बहुत कोशिश की थी कि हमे पकड सके। सैयद के पिता की एक गोली मेरे पिता के पाँव मे लगी थी और मेरे पिता उस पैर से हमेशा के लिए मजबूर होगये थे । मेरी माता ने ज़ोर डालकर लाहौर मे ही रहने के लिए कहा और तब से हम लोग वही रहने लगे थे । मै तब सचमुच विधवा थी। मेरे विधवा होने की बात ओठो तक भी न आये, यह माता का कडा आदेश था। मै कारण जानती थी और अनागत के बारे मे कभी कभी सोचकर सिहर उठती थी। क्योकि उस उम्र की लडकियो की भाँति मेरे लिए वह अनागत सुनहला नही बल्कि केवल अधकार से भरा हुआ होता था जो कि मुझे स्कूल मे, खेलते समय, पिकनिक मे सब जगह खाये जाता था। अकलक ! कहो, चाय पीयोगे ? थक गये होगे । मैंने तुम्हे बहुत थका दिया। ऐसा करने का मुझे कभी अधिकार रहा होगा, किन्तु आज तो वह मेरे पास नही है। किन्तु तुम चाय पीयोगे ही। बैरा ! बैरा !!"

आसमान जो कि थोडी देर पहले मेघाच्छन्न था इस समय एकदम साफ, गहरा नीला लग रहा था, जैसे साबुन से धोकर किसी ने आसमान की छत को बादलो की रुई से पोछकर कैसा चमकीला बना दिया है, एकदम नई कच्ची हल्की पीली धूप पेडो पर, मकानो पर, गदे पानी के पाइपो जो कि दीवारो से लगे हुए है उन पर, अहातो की मेहदियो की झाडियो पर, एक एक फूल पर और लॉन की दूब पर बरस रही है। घरो से निकलकर बच्चे, धुले हाफपैन्ट और सफेद रगीन कमीजे पहने, फ्रॉक पहने उस सिरे वाले मैदान मे खेलने के लिए इकट्ठा होगये है । बरसात मे जिदगी, घरो मे बन्द थी, मगर धूप निकलते ही नये-नये उजले उमदा कपडो मे जिदगी, घरो से बाहर निकल आयी है । बिजली के खम्भो पर लगे सारे पोस्टर गीले होगये है। बिजली के तार मे उल्टी लटकी

हुई मरी चमगादड गीली होकर अब धूप खा रही है । छोटी-छोटी चिडियॉ तारो पर एक साथ कतारो मे बीसियो की सख्या मे बैठी हुई शोर कर रही है । सामने के मकवरे मे देखने को गये हुए कई लोग उसके टूटे गुम्बदो मे खडे धूप की ओर मुँह किये हँस रहे है । दूर की सडक पर किसी सिनेमा के बहुत सारे पोस्टर, रिक्शो पर लगे हुए या लडके अपने कधो पर उठाये हुए बैंड वजाते हुए चले जा रहे हे । सडक की आधी जली बीडियो को उठाकर धौंकनेवाले शैतान लडके सडक पर गिरे हुए हैंडबिलो को उठा-उठाकर उनकी गोल गोल नलियॉ बनाकर बैंडवालो की नकले करते जा रहे है । रजना ने वताया था कि यह जो अशोको से घिरा हुआ अहाता है, प्रान्तीय राज्यपाल के राज-भवन का पिछला भाग है ——जहॉ कि उनके अहाते मे 'अधिक अन्न उपजाओ आदोलन' के जमाने मे शौकिया गेहूँ बोया गया था और जिसके लिए दो ट्रैक्टर दिन रात काम करते है, जहॉ कागजो पर फमले उगा करती है, उन्ही ट्रैक्टरो की आवाजे इस समय आ रही है । 'कॉन्सिल हाउस' का वह ऊँचा गुम्बद इस ममय गीला धूप खा रहा है ——जहॉ की चारदीवारी मे पीली फाइले लाल फीतो मे बॅधी सड रही होगी। आज छुट्टी है और भद्रलोक उस बैंकवाली सडक पर धुले सफेद कपडो मे अपने सॉचे मे ढले परिवार लिये घर से निकल पडे है । इनका परिवार सुखी है, बाजारो की सडको के दोनो ओर खडे हुए आलू-टिकिया बेचनेवालो के डेढ दो आने के बिल मे । लोगो के कधो से लडभिडकर, या फिर कोई सस्ती सी आइसक्रीम खाकर, किसी सडे-गले सिनेमा के धार्मिक कृष्ण की उछल कूद देखने के लिए ये भेडो की तरह सिनेमा-घरो मे घुस जायेंगे——बिना सोचे, निरर्थक, और इस तरह पूरी होगी इनकी मध्यमवर्गी उत्सव की भावना। दूसरा दिन——फिर वही आफिस की फाइले, अफसरो की बदमाशियाँ, झिडकियॉ, सरकारी कमीनापन यहॉ से वहॉ तक, चद चॉदी के रुपयो मे वेश्याओ से भी गया बीता यह मध्य-वर्ग ओर उमसे भी अधिक सडॉध भरा बूर्जुआ-वर्ग, जो एकदम काजी हाउस मे बद कर देने के काबिल, अपनी मोटरे धुलवा-पुछवाकर पाउडर पोते हुए इस समय घरो से निकलने को है।

मे खिडकी के पास खडा हुआ इतना मारा क्यो सोच गया हूँ, इस पर जब मै मोचने लगा हूँ तो कारण मेरी समझ मे स्पप्ट होगया है कि रजना उधर दूसरे कमरे मे कभी की जा चुकी है ओर मुझे बेलगाम घोडे की तरह सोचने की छूट मिली हुई है कि मै खूब सोच डालूँ ओर अजीब सा सोचकर चाहूँ तो दिमाग मे भारीपन भी भर सकता हूँ, रोकने के लिए इस समय मेरे पास मे कोई नही है । मुझे यह मानने के लिए बाध्य होना पडता है कि रजना मे सभी कुछ 'अति' रूप मे है और यही इसे इस धरती के किसी छोर पर भी साधारण बनने नही देगा । सुख की बात तो दूर की वात है । मुझे यह मानने मे सकोच नही हे कि रजना के प्रति मै बहुत ही आकर्षित हूँ, और मै इस आकर्षण को उचित भी ठहरा सकता हूँ, क्योकि मेरे पास प्रमाण है । किन्तु रजना से कभी स्पष्ट नही कहा कि यदि मै अकलक नही हूँ तो वह मेरे प्रति रुझान रखेगी कि नही ? अकलक के कधों पर सिर रखकर वह कई वार रावी की लहरो पर, कूलो पर बैठी होगी, तभी तो उसने थोडी देर

पहले कितने नि सकोच भाव से मेरे कधे पर सिर झुकाया था। किन्तु अलग से उसके इस व्यक्तित्व मे मेरी आवश्यकता है या नही, इसका स्पष्टीकरण मै चाहते हुए नही चाहूँगा, क्योकि वह खतरे से खाली नही है, वह सशय की गहराई है। वह कहती है कि मैने यह नही पूछा कि मिस्टर कुलकर्णी कौन है ? इस नाम का व्यक्ति हो भी सकता है और नही भी । क्योकि न तो मैने देखा है और यहाँ भी लोग व्यक्ति की चर्चा भर करते है, व्यक्ति को देखा किसी ने नही है, । ठीक है, वह मिलिट्री मे है, मगर इससे क्या ! मिलिट्री मे औरो के भी पति हुआ करते है, पर रहस्य बनकर तो नही न ? तो फिर मिस्टर कुलकर्णी को यह रहस्यमय क्यो बनाये हुए है ?

और सामने का परदा ऊँचा करते हुए रजना बोली——

"आओ अकलक ! इस पीछेवाले बरामदे मे चलकर चाय पीयेगे। देखते हो, मिस्टर कुलकर्णी को बागबानी और सब्जियो से कितना प्रेम है !"

कितनी सफाई से समझ मे आ जानेवाला झूठ बोलकर भी कोई व्यक्ति चेहरे को कितना गम्भीर बनाये रख सकता है, इसका प्रमाण मेरे साथ चलती हुई यह नारी है । मिस्टर कुलकर्णी जो यहाँ कभी आये भी नही है और उनकी प्रशसा के लिए यहाँ सब्जियाँ उगायी जाती है। ये लोग समझते है कि सामनेवाला व्यक्ति एकदम मूर्ख है। जी मे आये उतना झूठ बोलते चले जाओ, और शायद सोचते हो कि समझ भी जाने दो, सभ्यता मे कुछ कहना नही हो पाता ।

"जी हाँ, इसमे क्या शक है ।"

"हाँ अकलक ! यहाँ की सब्जियाँ खूब उम्दा किस्म की होती है, पर ये यूपीयन लोग बिलकुल भी पकाना नही जानते । हमारे पजाब मे घी-दूध के अलावा ऐसी सब्जियाँ नही मिलती। मेरे पति लिखा करते है कि उनके महाराष्ट्र मे ऐसी सब्जियाँ नही होती।

और रजना ने माली के हाथ से खुर्पी लेकर शौकिया ढग मे छोटी-छोटी नालियाँ बनानी शुरू की।

पश्चिम का आकाश अब धीरे-धीरे गुलाबी रग से भरता जा रहा है. और साँझ के पतले झीने बादल रगीन चॅवरो की भाँति पेडो के ऊपर उड रहे है । ढेर सारी चिडियाँ झुड की झुड मे 'ची-ची' करके उड रही है। मुझे मेरे गाँव के पास की साँझ याद आ रही है। इससे भी अधिक जब साँझ हो जायगी तब ऊँची नीची छोटी-छोटी पहाडियो से लोग अपने हलो को लेकर लौटेगे । कच्चे रास्तो की धूल पर हलो के चपटे लकडी के घिसटते हुए डडे चौडी मोटी रेखाएँ बना देगे, वैसे ही जैसे कोई अजगर इधर से गया हो। गाँव के पास के खेतो के करीब के पेडो पर चिडियाँ मार शोर करती हुई कुछ भी नही सुनने देगी और इसी शोर को चीरता हुआ किसी मोर का शब्द सुनायी देगा। जगलो से लौटे हुए बैल गाँव के पास के छोटे से नाले मे ढेर सारा पानी, अपनी काली थूँथो को गीला करते हुए पी लेगे । धीमे-धीमे बहते हुए उस नाले के काले-उजले किन्तु एकदम सतह तक साफ़

दिखायी पडनेवाले पानी की छाती पर छोटे-छोटे पानी पर उडनेवाले भुनगे, जल पर तेज तेज रेखाएँ बनाते होगे । नाले के करीब कही-कही उगी हुई किसी खजूर या सुपारी या फिर ताड पर बया का घोमला भूरा-भूरा सा एकदम निर्जीव रग मे टँगा हुआ होगा। अचार की छोटी-छोटी झाडियो मे मकडी के सफेद जाले, साँप के बिल, सब वैसे के वैसे अभी तक होगे । गाँव के करीब के उस शिवाले के भगवे झडे की छाया लेकर नाले का पानी बराबर बहता होगा। गाडियो के ऊँचे नीचे रास्तो मे इस समय आने-जानेवाली गाडियो मे धूल ही धूल भरी होगी। गाँव के पास बने हुए खलिहान गोबर से लिपे-पुते इम पियराती साँझ मे खूबसूरत लग रहे होगे । गाँव के भगियो के वे सूअर अपनी लम्बी-लम्बी थूँथे लिये हुए गाँव के घरो को सूँघते फिर रहे होगे ।

मै बहुत बहक गया हूँ, रजना मेरी ओर बराबर घूरती हुई देख रही है । मुझे हल्की झेप का अनुभव हो रहा है कि यह मुझे क्या समझ रही होगी कि यह भी कैसा अतिथि है, आज ही दोपहर आया है और कैसा निश्चिन्त, जैसे जाने कब से रजना के साथ रहता आया है और आज इसके जाने का प्रश्न ही नही उठता है, कौन जाने कब तक इसे यहाँ बैठे रहना है!

"अकलक! मै देखती हूँ, उस रूमाल के देखने के बाद तुम्हारे मन मे कही से भी कोई उत्साह, जिज्ञासा, प्रश्न, तूफान, कुछ नही उठा।"

और वह मेरे सामने की कुर्सी पर बैठ गयी है । सँझाते 'काश मे उसके बॉफकट बालो ने बहुत सारी जगह घेर ली है। ललाती पश्चिम मे उसका चेहरा कितना बडा होकर उसमे बिछ गया है और उसके कानो की वे बालियाँ क्षितिज मे एकदम टँक सी गयी है। उसकी गर्दन भर आसमान मे है और बाकी फिर तो नीचे से दूर का क्षितिज आ जाता है । मै एक क्षण के लिए सोच जाना चाहता हूँ कि काश रजना! तुम ऐसे ही आसमान मे घिर जानेवाली नारी होती तो मै—मै ही क्या कोई भी तुम्हारी पूजा करता। किन्तु आज, इस आज के बारे मे मै नही जानता कि तुम्हे प्यार ही करूँगा यदि तुम मेरी चाह की सीमा मे आ भी जाओ तो । क्योकि तुम्हे घृणा करना कदाचित् सरल है, किन्तु तुम्हे चाहने के लिए क्या कुछ न चाहिए? यही एक प्रश्न अनेक रूप मे तुम खडा कर रही हो। तुम आसमान मे नही हो, तुम ठीक कमजोरियो और तथाकथित रूप की उपमाओ से मडित इस सामने की कुर्सी पर बैठी हो। आकाश मे साँझ, मात्र लाल होगी, तुम यहाँ पर ठीक सामने की कुर्सी पर बैठी हुई थोडी ही देर मे चाय पियोगी और अपने जलते कडवे जीवन की कुछ चिनगारियाँ जो बतानी उचित होगी, बताओगी, शेष सब तुम्हारे मन के तिलिस्म मे अनकही बनकर जाने कब तक के लिए दुर्गन्ध देती रहेगी। तुम उस दुर्गन्ध को दूर करने के लिए कि कही कोई समझ न जाये, अधिक से अधिक रग-पोतकर छुपाओगी, और एक दिन वह आयेगा रंजना, जब तुम बिना कहे रह नही पाओगी किन्तु उस दिन कोई होगा भी सुननेवाला? यह भी तो तुम्हे सोचना चाहिए। क्योकि तुम

तो आज तलक 'एक के बाद दूसरा' के क्रम मे विश्वास करती आयी हो, किसी कारण से ही—कारण कोई नही देखता। किसे इतनी फुर्सत जो तुम्हारे जीवन के बद दरवाजो को खटखटा कर देखने की चेष्टा करे कि तुम क्या हो! तुम तो वह हो जो रँगे पुते हुए सडक पर हो। घर सबके बद हुआ करते है। समाज घर की चौखट नही पार करता।

"रजना! तूफान और उत्साह मै नही जानता, किन्तु प्रश्नहीन नही हूँ। पर यह जानता हूँ कि सैयद की रजना ने प्रारभ अतिमानव के रूप मे किया है और उस अतिमानव..... "

मेरा वाक्य भी उसने पूरा नही होने दिया और बडी जोरो से टेबल पर झल्लाकर हाथ पटकते हुए उसने बोलना प्रारम्भ किया है—

"फिर वही बात अकलक! मैने तुमसे पूछा था कि कोई जिज्ञासा, प्रश्न, तूफान कुछ नही उठा? और तुम मुझे अतिमानव के रूप मे समझकर यथार्थ से विलग कर देना चाहते हो। क्या अतिमानव के सुख-दु ख अन्य जनो से भिन्न होते है? क्या जिज्ञासा द्वारा उत्पन्न हुई वेदना, प्रश्नो के अगारे और तूफान के थपेडे—उस अतिमानव को नही छू पाते? शायद तुम जो कहना चाहते हो वह यह कि अतिमानव सहता तो अन्य जनो की भाँति ही है, पर सहने की पीडा, अनुभूति वह अपने मे अनुस्यूत कर लेता है। और अपनी अनुभूति को व्यक्तित्व मे समाहित कर बिलकुल चट्टान की भाँति निर्मम हो जाता है—है न? पर यह तुम्हारा भ्रम है। अतिमानव के अहम् पर चोट करो वह चूर हो जायगा। अकलक! मै कुछ नही मानती, क्योकि मै जिज्ञासा नही करती। प्रश्न अब मन मे नही उठते और तर्क की बात न चलाओ, क्योकि मैने असाधारण अस्वीकृति से अपने निकट इनका अस्तित्व ही नही, 'सज्ञा' तक मिटा डाली है। सुनहली धूप, ध्रुव का अडिग तारा, सप्तऋषि का अनादि प्रश्न-चिन्ह, एक क्रम और इस क्रम का भी व्यतिक्रम, यही तो है जिसे तुम सब ज्ञान कहकर अपने अपने 'अहम्' की परिधियाँ खीचकर उसमे अपने को प्रतिष्ठित कर नियन्ता बने हुए हो। समाजहीन इन अतिमानवो की दुर्गन्ध मे, देखते नही, इतिहास गँधियाता है। तुम कहते हो, प्रश्नहीन नही हूँ—मुझसे कैसा प्रश्न तुम्हारा? मुझसे सत्य, समाज, सत्ता किस सम्बन्ध मे प्रश्न करोगे? नारी के पास सब प्रश्नो का एक ही उत्तर होता है अकलक! ठोस उत्तर!! वह है उसका शरीर!! इस उत्तर के पाते ही तुम प्रश्नहीन हो उठते हो। मिथ्या परिभाषाएँ देकर तुम सब ठग सकते हो—परम्परा की दुहाई देकर, चरित्र के यश: श्लोक उच्चारित करते हुए तुम सब कुछ कर सकते हो, किन्तु हमारे मन की पीडा, मर्मान्तक पीडा—तुम्हारे सारे विश्वासो का खडन करने के लिए प्रहार है। तुम्हारे इन सब कल्पना-रूपी आदर्शो से ऊँची है वह, अकलक! क्योकि हमारे व्यक्तित्व पत्रहीन साईप्रेस की तरह नगे खडे पुकारने लगते है कि "देखो, हम दिगम्बर है!!" पीडा हमे मोहहीन कर देती है, यन्त्रणा निर्विकार करती है और तब हमारी सारी केचुल छिन जाती है और हम चिकने बने सरकने लगते है। अपने आप का विश्वास आ जाता है। जो हमे कमजोर बनाता है

वह है मृत्यु का भय। हम परम्परा का पालन, नीति की झूठन खाने के लिए दौडते है क्योकि हमें अपने आप पर अविश्वास करना सिखाया जाता है, जब कि हम आशा करते है कि समार का सब कुछ उचित, अनुचित मात्रा मे हमारे पास हमारे बिना चले ही आयेगा। तुम कहोगे कि मैने जो पाया वह अनोचित्य था, अननुपातिक था। किन्तु यह मै नही जानती क्योकि जानने की इच्छा ही नही है। न मुझको अपेक्षा ही है और न उपेक्षा ही। तटस्थ इसलिए नही रही क्योकि वह जड की भावना है। वही इसलिए कि कौतूहल मात्र नही था इसमे, वरन् स्थैर्य कही मुझे मिट्टी न बना दे इसलिए धावमान रही। इसमे मुझे कुछ भी प्राप्त हुआ हो—कडवा या मीठा—वह मेरा अपना अर्जन था, गुणात्मकता थी, स्वत्व था। अर्जन इसलिए किया कि नारी का शरीर तुम्हारा ऋण है, और ऋण चुकाने मे मेरा विश्वास चाहे प्रारम्भ मे न रहा हो, असहमति तो कभी नही थी।—जिस समय तुम मुझे पहली बार अनारकली के उस मोड पर मिले थे अपनी मौसी के साथ, मुझे खूब याद है कि तुम्हारी आँखे देखकर मुझे जानते हो किसकी याद आयी थी? कह दो नही मालूम! कितनी बार तब कहा था, और कितनी बार कहलाना चाहोगे अकलक! वे थी सैयद की आँखे!! वैसी ही तुम्हारी आँखे आज तक उनमे कही कोई बदलाव नही आया। उन आँखो मे केवल एक बात थी और वह थी, मेरे शरीर को चबा जानेवाली तीव्रता, और उसने इसे उस 'शबे-जश्न' को स्वीकारा भी था।"

रजना ने अपनी दोनो हथेलियो मे अपनी आँखो को ढँक लिया है। इस बार मैने ही चाय बनाना उचित समझा, क्योकि रजना अपने आप को स्वस्थ बनाने मे लगी हुई थी। मुझे यह सोचकर अपने आप से हल्की घृणा भी हो रही है कि मै जाने क्या सोचकर रजना पर अविश्वास करने की बात तक मन मे ला सका हूँ। छि. छि, हम दूसरे के सहज विश्वास मे कहे गये यथातथ्य पर मन ही मन नाक-भौह सिकोडकर कितने छोटे बन जाया करते है। हमसे तो वह कहनेवाला कदाचित् महान हुआ करता है जो सामनेवाले के विश्वास के आधार पर अनकहा कहने मे भी हिचक नही अनुभव करता। और एक हम है, बिलकुल सहानुभूतिहीन, साथ ही साहस की कमी मे भरपूर दब्बू, डरपोक!

चाय मे चीनी मिलाते हुए रजना के प्रति मेरा कितना प्रेम उमड आया है, यह चीनी के लिए हिलते हुए चम्मच से कोई भी समझ सकता है। क्योकि इस समय रंजना मेरी दया के पात्र मे कम बिलकुल नही है। इतनी नि सहाय देखकर मेरा मन चीख पडने क लिए हो रहा है और मै ऐतिहासिक किसी अतिमानव पात्र की भाँति दाहिना हाथ थोडा ऊँचे उठाकर स्वर्गिक ऊँचाइयो मे बोलने के ढग पर कह सकता हूँ कि "रजना! मै जो हूँ तुम्हे किस बात की चिन्ता!!"—किन्तु मै अपनी पहुँच की सीमा न जानता हूँ सो नही है, और यही विवेक मुझे रोके हुए है, क्योकि मुझे ठीक दो घंटे बाद की कानपुर की गाडी से बनियानो का सौदा ठीक करने के लिए लौट जाना है। मेरा मित्र पुरी क्या समझेगा कि उसके ठीक बग़ल मे रहनेवाली रजना को मैने किस सीमा तक पाया है और वह कदाचित्

जानना चाहेगा भी नही क्योकि उसे बैक की डाइरेक्टरी से अवकाश ही नही होगा। अवकाश ऐसे किसी को कभी नही हुआ करता, मुझे ही कब मिला है ?

चाय के दो–तीन घूँट पीते हुए रजना के मुँह पर कितनी लम्बी मुस्कान ओठ के एक छोर से दूसरे छोर तक दौड गयी है । नारी-सुलभ लज्जा रजना मे मैंने बहुत पायी है जो अच्छी लगती है, विशेषकर उसका दाँतो से ऊँगली को काटना । पर इस समय वह और अधिक सुन्दर शायद इसलिए भी लग रही है क्योंकि भावो का तूफान एक बार बरस चुका है।

"अकलक ! जब मुझे यह मालूम हुआ कि तुम अनारकली मे ही अपनी मौसी के सग रहते हो तो मैंने उस दिन के बाद से तुम्हारे मकान को खोज निकालने की कितनी चेष्टा की थी, शायद तब तुम नही जान सके थे। लेकिन जब वह चेष्टा मैंने बतायी थी तब दरिया के किनारे बैठे तुम और मै अखरोट खाते हुए कितना हँसे थे कि पेट मे दर्द तक हो आया था।"

मै जानता हूँ कि मैंने अखरोट कभी नही खाये हैं, पर मै यह नही समझ पा रहा हूँ कि मेरी वह कौन सी मौसी थी जो अनारकली मे रहने गयी थी और मुझे भी तब जाकर वहाँ रहना पडा था जिसके कारण लाहौर जैसी जगह मे फिर अखरोट भी खाने पडे। ओफ रजना ! मुझे कितनी सहानुभूति है तुमसे। तुम किस सीमा तक, किस अकलक के स्थान पर मुझे समझ रही हो, तुम क्यो नही मानती कि मै अकलक नही, और तुम्हारे साथ कभी अखरोट नही खाये है। मगर वह बोल रही है—

"जानते हो उन दिनो मैंने दो आदमियो को एक साथ चाहा, हालाँकि उन दिनो तुम पर भी यह अभिव्यक्त नही होने दिया, किन्तु आज जब कि तुम इस सीमा तक दूर जा चुके हो कि जैसे हम और तुम कभी मिले ही नही थे और यदि मिले भी हो तो मुझे याद होने से ही क्या होता है, तुम तो बिलकुल ही भूल चुके हो। पुरुष, समय का व्यवधान पडने पर, देखा गया है कि दुष्यत बन जाने मे ही सारा कौशल समझता है। मै कालिदास की प्रशसा किये बिना नही रह सकती, जिसने पुरुष मात्र का प्रतीक लम्पट राजा के रूप मे चुना, कला के लिए उसने उस लम्पटता को धो डालने के उपाय क्यो न खोज निकाले हो, और फिर अकलक ! उपाय कौन नही खोज निकालता ? वह जो दूसरा व्यक्ति था, वह टेनिस का बहुत अच्छा खिलाडी था। मैंने उसे कालेज-ग्राउन्ड पर पहली बार देखा था और यह नही हुआ कि देखकर एकदम मोह होगया हो । नही, मुझे उसमे आकर्षण खोज-खोजकर बिठलाने पडे। किन्तु मै मजबूर थी, मन किसी को बिना चाहे अब नही रह सकता था। तुम आये अवश्य, किन्तु उस समय तक मै टेनिसवाले उस नदलाल को चाह की सीमा मे ला चुकी थी। वह नन्दलाल तो मुझे पाकर जैसे निहाल हो उठा। बिना मेरे वह कोई मैच नही खेल सकता था। खेलता और जीतता था वह अपनी मेहनत से, और शोहरत मेरी होती थी। रावी के किनारे कितनी बार उस मूर्ख ने मेरी कसमे खायी

थी। मै उसे मात्र चाहती थी और वह चाहकर बहुत कुछ पाना चाहता था, जब कि मै बिना पाने की इच्छा किये हुए ही चाहने का निश्चय किये हुए थी। क्योकि एक बार बल्कि पहली बार का पाना मुझे जब आज तक गरम सलाखो की तरह याद है, तब तुम आये। नन्दलाल दूर होते हुए क्षितिज की तरह तब लगा। किन्तु अकलक! नन्दलाल प्रत्येक क्षण मेरे लिए अपनी अनिवार्यता सिद्ध करना चाह रहा था और मै अकलक के जीवन मे अपनी आवश्यकता सिद्ध करने पर लगी हुई थी। तुम नदलाल को कदाचित् भूल गये होगे, और उचित भी है, क्योकि विगत को न भूलनेवाला या तो पागल हो जाता है या फिर आत्महत्या कर लेता है। मैने अपने साथ यह दोनो ही किया है, तभी तो न मै पूरी पागल ही हुई हूँ और न आत्महत्या की तरह अपने को सबसे विलग ही कर सकी जीवन भर के लिए। सबकी सहानुभूतियो से दूर, उपेक्षा और घृणा की पात्र!! किन्तु मै दूसरे के भावो पर रोक नही लगा सकती, वे सोचे जो भी मन मे आये। मेरे पति कुलकर्णी है, उन्हे मुझसे कोई भी शिकायत नही, किन्तु हम साथ नही रह सकते। मै यह उनसे कह चुकी हूँ कि किसी भी सीमा तक मुझे झुकना पडे, मै झुकूँगी, क्योकि मुझे पत्नी कहलाना जरूरी है। क्यो मै ऐसा चाहती हूँ, यह कही मत पूछ बैठना अकलक! क्योकि यही तो रजना है। ओर सब कुछ दे सकती हूँ किन्तु रजना की अब ओर दे सकने की सामर्थ्य एव शक्ति स्वय रजना मे भी नही है। यही तो वह बात है अकलक! जो मेरे पति नही समझ पाते है। मेरे पति ही क्या, कोई भी नही। शायद अकेले सैयद को ही मैने पूरी तरह रजना सौपी थी। शायद नही, नारी केवल एक ही पुरुष को सब कुछ दे पाती है। बार बार उससे आशा करोगे तो, विश्वास रक्खो, वह जुठलाहट से अधिक कुछ भी नही होगा। पहला पुरुष, अच्छा हो या बुरा, सब कुछ ले सकता है, किन्तु बाद मे तो वह दया, करुणा या कोई एक चीज ही दे पाती है। तुम उसका शरीर पा जाते हो तो समझते हो कि उसका मन भी ठीक उसी तरह पा गये जैसे आठ रुपये मे एक मुर्गी खरीद ली है—जो तुम्हे अडे भी देगी ओर वक्त पडने पर गोश्त भी। अडे या गोश्त जैसी कही भी कोई चीज नारी का मन या सचमुच की नारी नही हुआ करती। क्योकि तुम सच मानो कि रजना के पास वह नारी जो मैने सैयद को उस जश्न की रात को दी थी होती, तो मे तुम्हे इस नियम मे अपवाद करके भी दे डालती। किन्तु हुआ क्या, रजना की मात्र लोथ की दुर्दशा हुई। तुम सच मानो मुझे अपने से घिन होगयी। अपने ये लहराते हुए बाल काटने लगे जिनके कारण मै अपने कालेज मे प्रसिद्ध थी। नारी के व्यक्तित्व का बाहरी रूप तो कभी भी, कही भी मिल सकता है। तुमने देखा होगा, हर शहर मे तरकारियो के मोलभाव पर कोठो पर शरीर, गोभियो के फूल की तरह, सजाये जाते है। कदाचित् नन्दलाल को यह मालूम नही था और अगर होता भी तो पाप करने के लिए तो बहुत ही अधिक साहस चाहिए—पैसा देने के लिए साहस नही, बल्कि पैसा छीनने के लिए हाथो मे बल की आवश्यकता है। तुम कहोगे कि मै इसे पाप कह रही हूँ—किसी चीज की व्याख्या करो तुम, मै बात करती हूँ, व्याख्या नही।

और पाप इसीलिए कह रही हूँ क्योकि आज तक ऐसी ही भाषा पढी है । किन्तु फिर एक बात कहे देती हूँ कि अकलक ! दयावश छि छि न कर बैठना, क्योकि जो मुझे सबसे अधिक खलती है वह है दया और सहानुभूति ! ।"

मै देख रहा हूँ कि आसमान एकदम अँगीठी की आँच की तरह लाल होकर सुलग रहा है । कितना गरम होगया होगा आसमान !! अब बहुत दूर गये बडे-बडे पछी भी लौटने लगे है । हवा का चलना एकदम बद है । यूकेलिप्टिस के सफेद तने भूरी धरती पर ऊपर से रख दिये गये हो, ऐसे लग रहे है । आस्त्रेलिया निवासी ऊँचे हुआ करते है, इसके प्रमाण मे शुतुर्मुर्ग और ये यूकेलिप्टिस मुझे याद आ रहे है । उधर पुरी की तरफ के बगीचे मे नरगिस ज्यादा सख्या मे फूली हुई है । क्यारियो के आसपास कितने खूबसूरत तरीके से माली पालियाँ बनाता जा रहा है, जिसमे से छोटा-छोटा पानी खूबसूरती से बहता हुआ आये और गुलाब, नरगिस, चम्पा आदि बनकर मालिको को रग और गध से प्रसन्न कर दे । पहले पानी, फिर फूल !! मुझे नरगिस और गुलाब के रग और गध आकर्षित करने लगे है ।

रजना कहती है कि उसे दया और सहानुभूति की अपेक्षा ही नही बल्कि उसे इनसे चिढ है । वह शायद इतनी कडवाहट लिये जिदगी जीती चली आयी है कि कोई उसकी ओर उँगली से टोक दे तो वह झल्ला उठेगी । उसे साथ ही कितना दर्प भी है उस सब पर जो अनागत से वर्तमान और वर्तमान से विगत बनकर हमेशा के लिए बर्फ की तरह जमकर बैठ गया है और पीछे खसकने का नाम ही नही लेता । सैयद ने उसके अदर की नारी के टुकडे-टुकडे करके हमेशा के लिए कुरूप कर दिया । रजना कहती है कि वह लाचार थी अपने मन से । कदाचित् सहज है, मै मान सकता हूँ कि क्योकि पढा है ऐसा, किन्तु व्यवहार मे ऐसा देखने और सुनने को मिले तो मेरी आँखे जरूर ही फट जायेगी । किन्तु यह भी मात्र धारणा है, क्योकि ऐसा सब कुछ करने और कहनेवाले भी तो मेरी ही तरह के हाड-मास के हुआ करते है । किंतु कोई ऐसा अपना मन कैसे बना लेता है ?

"तुम नही जानते अकलक ! कदाचित् तुम यह सोच रहे होगे कि रजना के मन मे सहज दिखायी न पडने वाली खोट कब और कहाँ से आयी । मुझे फ्रटियर वाले दिन याद आते है । सैयद बडा शौकीन तबियत का व्यक्ति था । वह अक्सर पेशावर, क्वेटा और कभी-कभी सिध हैदराबाद या नीचे लाहौर करॉची तक धावा मारता था । जब वह शहर से लौटकर आता था तो सदा फिरगी औरतो की तस्वीरे और जो अधिकतर अधनगी औरतो की ही हुआ करती थी, ढेर सारी लाया करता था । कहा करता था कि रजना ! आओ चलो तुम मेरे साथ और चलकर देखो ज़िदगी कितनी खूबसूरत चीज है । व्यर्थ मे यहाँ दर्रो मे पडे-पडे सडते है हम । मै उन तस्वीरो की तरह अपने भी केश सँवारती थी । एकान्त मे फोटोवाली औरतो की तरह मै भी अपनी टाँगे और जाँघे खोलकर चलने की चेष्टाएँ करती थी । पहले तो मुझे खुद शर्म लगती थी किन्तु बाद मे मुझे भी आदत होगयी

थी—कैसी चिकनी-चिकनी गोरी जाँघे ! ! सैयद का हाथ जब बहुत ही मुलामियत से मेरी जाँघो और मेरी कमर के पास फिरता था तब मुझे हाथी दाँत के चिकनेपन की याद आ जाती थी। मुझे सैयद के गोरे चिट्टे जिस्म से तब और आज तक अकलक ! कितनी मुहब्बत है यह मै कह नही सकूँगी। मैने सैयद से कई बार कहा कि आओ हम लोग काबुल भाग चले। मै घटो बर्फ की घाटियो की ओर देखते हुए सोचा करती थी कि ऐसा कोई दर्जी मुझे मिल जाता जो इन तस्वीरो मे पहने हुए कपडो की तरह मुझे भी कपडे बना देता तो मै भी महसूस करती कि किसी फिरगी मेम से कम थोडे ही हूँ ! जब सैयद अपनी दोनो हथेलियो के बीच मेरा मुँह दाबकर मेरी आँखो मे झाँकने लगता था तब लगता था खूब सारी बर्फ की नरगिस आसमान से झर रही है और मेरा मन किसी ठडी घाटी की तरह एकदम ठडा होगया है । मुझे लगता था कि मै सैयद के साथ एक दिन कधे पर दुनाली टाँगे फिरगियो के देश मे इन दर्रो से होकर जाऊँगी और देखूँगी कि फोटो की तरह सचमुच ही उनकी आँखे नीली होती है ! मुझे जब कभी मेरी माता तरह-तरह के बाल बनाये हुए देखती थी तो कहती थी कि 'यह तुझे क्या हुआ है राज ! तस्वीरोवाली औरतो की तरह क्यो बाल बनाती है ?' ओर मै किसी छोटी पहाडी पर चाँदनी रात मे बेठकर सोचती कि कही से कोई ऐसा आ जाता जिसकी मोटी-मोटी मासल बाँहो मे अपने को एकदम ढीला छोडकर बहुत प्रसन्न होने पाती। वह मुझे इतने पैसे, इतने बडे महल और इतने नौकरो से घेर देता कि किसी सरदार को भी देखने को नसीब न होता। तब बग्घी मे सवार होकर घूमती, प्रतिफल मे मै उसे अपने तन और मन का एक-एक रेशा तक दे डालती—फिर वह चाहे देना दिन मे कितनी ही बार क्यो न हुआ करता—अकलक ! तुम कहोगे कि मै पागल थी, है न ? और आज कदाचित् मै भी यही कहूँगी, क्योकि ऐसा कहा जाता है। लाहौर की सडको पर आने पर धीरे धीरे मुझे स्पष्ट होगया कि तस्वीरो-वाली जिन्दगी न तो कभी किसी ने जी है और और न रजना स्वय ही जी सकेगी। सैयद ने जो यन्त्रणा मुझे दी, वह मै क्या सहज भूल सकती हूँ ? जब हम घोडो पर सवार थे काबुल जाने के लिए, तब मेरा मन कितना प्रसन्न था। मै प्रत्येक क्षण सोचती जा रही थी कि मेरे स्वप्न की हर चीज मेरे घोडे की टाप के साथ कितने निकट, निकटतर होती जा रही है। पूरे रास्ते भर सैयद को चुप देख कई बार मैने उसकी चुप्पी पर टोका भी, किन्तु वह 'कुछ नही रजना !' कहकर चारो ओर शकित होकर देखता चला जा रहा था। अरब के रेगिस्तान मे, सुना था, ऐसे ही घूमते घूमते लोगबाग बादशाह और मलिका तक हो जाते है। और मुझे लग रहा था कि लाखो लोग सैयद और मेरे स्वागत मे खडे है । मै मलिका थी और दूर-दूर तक भूरी छितरी सुनसान दिखायी पडनेवाली धरती मेरी मिल्कियत सी लग रही थी। मै तस्वीर की जिदगी सैयद के साथ जी रही हूँ और तभी कही से एक गोली सन करती हुई हम लोगो के पास स निकल गयी। ईद के दूसरे दिन की बात थी वह। चाँद आसमान मे टेडा होकर निकला था। गोली की आवाज पर सैयद के चेहरे पर तव मैने पहली बार भय की छाया देखी थी। हमारे

घोडे हिनहिना रहे थे, और मै तब छुहारा खाती चली जा रही थी। सैयद की बन्दूक उसके दोनो हाथो मे घोडे पर थी। उसने जिधर से गोली आयी थी अपनी बदूक का निशाना साधकर एक गोली दागी। सुनसान धरती पर वह गोली की आवाज 'सॉय-सॉय' करती हुई हजारो मील तक दौड गयी होगी, यह मेरा अनुमान था। सामने से बहुत दूर पर कुछ गोलियो की चमक दिखायी दी और 'पिट्-पिट्' "

"चलो रजना, हमे तेजी से घोडे बढाने चाहिएँ। शायद ये अफगानी है, फिर चॉद थोडी देर मे डूब जायेगा, तब हमे रास्ता नही मिलेगा।"

"मगर मै तुम्हे झेलम के किनारो तक तो काली रातो मे भी पहुँचा सकती हूँ, मेरा चप्पा-चप्पा देखा हुआ, जाना-पहचाना है।"

"मगर हमारे घोडे तब तक ऊँची-नीची पहाडियो पर सरपट दौड़ रहे थे। मै समझ नही पा रही थी कि हम झेलम की तरफ न जाकर उल्टे बडे-बडे दर्रो मे भरी घाटियो की तरफ क्यो बढते जा रहे है। . . . चाद डूब गया था, नक्षत्रो की मदी भीगी रोशनी आसमान के काले जगलो मे से आ रही थी। अब हम दर्रो मे से बहुत धीमे-धीमे सॉस राक हुए कदम-कदम पर किसी गोली, किसी हमले की उम्मीद कर रहे थे। मै सैयद को समझ नही पा रही थी। घोडो के पैर ऊँची-नीची जमीन पर बार-बार फिसले पडते थे। बाये हाथ पर बहुत नीचे खड्ड दिखायी पड रहा था जो कि जरूर ही इस दर्रे का रास्ता होगा। जब दर्रे का रास्ता इतने पास मे ही है फिर सैयद क्यो इस बीहड रास्ते पर होकर चल रहा है? दोनो तरफ इतने ऊँचे पहाड थे कि ऊपर का आसमान अब मात्र एक काले कपडे की चिन्दी सा लग रहा था। किसी भी क्षण घोडे ठोकर खाकर हजारो फीट नीचे गिरकर जान दे सकत है और ले भी सकते है। अँधेरे मे सैयद की शक्ल नही दिखायी पड रही थी किन्तु मै अनुभव कर रही थी कि सैयद बहुत डरा हुआ है और किसी भारी खतरे की वह उम्मीद कर रहा है जिसके बारे मे वह कुछ भर ही जानता है, बाकी का उसे खुद भी पता नही। मै साफ समझ रही थी कि दर्रो मे इस तरह इन काली रातो मे आकर मैने अच्छा ही नही किया बल्कि भारी भूल की। सामने का रास्ता तो फिर भी कुछ साफ दिखलायी दे रहा था। किन्तु पीठ पीछे का रास्ता तो अधकार का गट्ठर सा लग रहा था जिसे रात का ईरानी जैसे अपनी पीठ पर लादे हुए दर्रो मे से चला जा रहा है और जिस गट्ठर मे बहुत किस्म के चाकू-छुरियॉ होगी जो छूते ही ऑत बाहर निकाल सकती है, और सारे शरीर में एक बारीक फुरेरी छा गयी।

सैयद ने बहुत ही फुसफुसाते हुए कहा—

"रजना! तुम यहॉ खडी रहो और मेरा घोडा भी सम्हाले रहना। मै कोई दो फर्लाग तक देखे आता हूँ कि रास्ता साफ है या नही। यदि डर मालूम हो रहा हो तो लो यह मेरा पिस्तौल, क्योकि कबालियो की आमद-रफ्त इधर से हुआ करती है।"

"मै सैयद से पूछना चाह रही थी कि आखिर हम लोग तो पेशावर जा रहे थे, शहर

की ओर जा रहे थे और यहाँ उल्टे किधर और क्यो जा रहे है ? मगर मुझे लगा कि सैयद से ऐसा पूछकर मै अच्छा नही करूँगी। क्योकि वह मुझे क्या समझेगा कि जब मै सैयद के साथ कही भी जाने को तैयार हूँ तो फिर इन दर्रो और काली रातो का सवाल ही कहाँ उठता है ! वह अपनी पिस्तौल देकर ओर अपने घोडे को वही छोडकर धीमे-धीमे अधकार मे खो गया।

"एक क्षण को मेरा मन काँप गया। जानते हो अकलक ! मै तब मुश्किल से तेरह चौदह की रही हूँगी। मुझे उस समय केवल माता और पिता याद आ रहे थे। उस शाम मै बिना किसी से कुछ कहे ही, वकरियो का दूध निकालकर, "हमीदा के घर से आती हूँ" कहकर घर से चली थी। सैयद तीन दिन पहले से घर से गायब था। सेयद की बहन हमीदा गाकर कुरान इतना मीठा सुनाती थी कि आसपास तक उसकी प्रसिद्धि थी। हम लोगो के घरो मे कोई खास दूरी तो नही थी, पर बीच मे एक फर्लांग का सुनसान जरूर पडता था। हमीदा से मिलकर जब लौटी तभी रास्ते मे दो घोडे लिये सेयद मुझे मिला और सोचने का वक्त भी दिये बिना मुझे तय करना पडा, और हम लोग कितनी सावधानी के साथ भागे थे। पिता और माता जाने क्या सोच रहे होगे ! शायद कहर ही होगया होगा। सैयद का अब्वा महमूद और मेरे पिता जरूर ही घोडो पर सवार होकर अडोस-पडोस के कबीलेवालो के पास गये होगे। उन्हे सपना भी नही आ सकता हे कि सैयद के साथ इन काली घाटियो मे मे अकेली आयी हूं और मेरा मन यह सोचकर रुआँसा हो उठा था अकलक कि किसी की गोली मुझे आकर लग सकती हे। कोई दो अफगानी मुझे आकर पकड सकते है और तब मुझे वे लोग मेरी मुश्के बाँधकर काबुल मे बेचने के लिए ले जा सकते है और तब मै तस्वीरो की मलिका की तरह न होकर खरीदी गयी गुलाम लोडियो की जिदगी बसर करूँगी—और मेरा मन चीखने को हो रहा था। तभी सैयद हाँपता हुआ थका सा और शायद पसीने से चूर, लौटा। हम लोग अब सम्हल कर नीचे दर्रे के रास्ते की ओर उतरने लगे।"

"सैयद ! हम लोग कहाँ जा रहे है ?" उसने दूसरी तरफ मुँह किये जवाब दिया—वह खुद ज्यादा नही जानता। सैयद के एकाएक इस तरह हो जाने का मतलब मै समझ नही पा रही थी।

"थोडी ही देर बाद हम लोग दर्रे मे उतरकर चल रहे थे। हमारे ठीक सामने ध्रुव नक्षत्र दीख रहा था और मुझे लगा कि शायद हम खैबर या कोई वैसा ही दर्रा जरूर पार कर रहे है, मगर क्यो ? और तभी तेज टार्च की रोशनी अधकार मे से चमक पडी —और कडकती आवाज भी—

"सैयद ! घोड़े वही छोड दो और ऊपर चले आओ।"

"मुझे साफ होगया कि हम लोग जरूर ही या तो कबालियो या फिर बलूचियो या अफगानियो के शिकजे मे फँस गये है। जिस समय हम लोग उन लोगो के बीच पहुँचे,

उनके साफो के कुल्ले बता रहे थे कि वे काबुली है।

"जिस समय सैयद ने कहा कि मुझे इन काबुलियो के साथ जाना होगा क्योकि उमे इन लोगो के पॉच सौ रुपये देने है, ये लोग सैयद से रुपया नही लेगे अगर ये रजना को पा जाते है तो—मेरा सिर घूम गया, मै पागल हो उठी। मै चिल्ला रही थी—

"सैयद! मै तेरी बीबी हूँ—दुनिया का कोई खाविन्द अपनी बीबी के साथ इस तरह का सलूक नही करता सैयद!"

"वह तब धर्म की आड लेकर कहने लगा कि वह चार बीबी से ज्यादह नही रख सकता है। मै उसके पैरो पडी, मगर अफसोस अकलक! उस सैयद को पता नही क्या हो गया था। मैंने रुपये का प्रबन्ध भी कर देने को कहा मगर उसका उन काबुलियो के साथ सोदा पहले ही तय हो चुका था। मुझे उन्होने सुबह होने तक के लिए घोडे की पीठ से बॉध दिया और वे लोग सभी शराब पीने मे लग गये। मेरे सामने कोई रास्ता नही था। वे लोग शराब मे औधे पडे हुए खुर्राटे भर रहे थे। मैने किस तरह अपने दॉतो से उस रस्सी को काटा यह कोई नही जान पायेगा —मेरा एक एक दॉत टूटता जा रहा था और रस्सी कटती चली जा रही थी। आखिरी रात शुरू होना ही चाह रही थी और मै जान रही थी अगर थोडी सी भी देर हो जायगी तो फिर हमेशा–हमेशा के लिए रजना डूब जायगी। सामने अनन्त यातना और यन्त्रणा, गरम-गरम सलाखो की तरह लाल-लाल ऑखे फाडे हुए दिखलायी दे रही थी। मेरे सब दॉत टूट चुके थे। मुँह मे खून ही खून भरा हुआ था, किन्तु मैंने रस्सियॉ काट डाली थी, और उन तीनो काबुलियो तथा सैयद को दो बार मे खत्म किया। गोलियो की आवाज नीचे के दर्रो ने भी सुनी थी, इसके प्रमाण मे प्रतिध्वनि मैंने भी सुनी थी। अकलक! उन कराहो के बीच सैयद की डरी हुई चीख मैंने सुनी। मै टूटी हुई खजूर की तरह् कधे पर दुनाली टॉगे अपने घोडे पर लोटी। मै पागल हो रही थी, इस ख्याल से कि उसके और भी बीबियॉ है और कोई शौहर पैसे की खातिर बीबी भी बेच सकता है।"

चाय का दूसरा कप अपने आप रजना ने कितने उदास चेहरे से अपने कप मे केतली से उँडेला है यह मुझसे छुपा नही है। मुझे रजना, प्रत्येक घटना के साथ अपनी मीनारी ऊँचाइयो मे महान लग रही है तथा साथ ही उसके पैर दूसरी घटनाओ के कीचड मे कैसे बदसूरती के साथ सने हुए दिखायी दे रहे है! यूकेलिप्टिस की लम्बी-लम्बी पत्तियो और शाखो के साथ ढेर की ढेर चिडियॉ खेल रही है। लोहार की भट्टी की तरह आसमान मे लाली कही से भी कम नही हुई है, औरुमै हडबडाकर अपनी घडी देखना चाह रहा हूँ क्योकिमेरा विश्वास है कि पॉच से ज्यादा ही हुए होगे और मुझे साढे पॉच तक जरूर चल देना है। अपने जाने की बात पर पहली बार मेरा मन कडवा हो रहा है। किन्तु जब मैंने घडी देखी और देखा कि अभी च्ञार ही हुए है तो मेरा मन कितना प्रसन्न और जोश मे था, इसका सबूत यही दे सकता हूँ कि आवेश मे आकर मैंने एक घूँट मे ही चाय का पूरा कप

खत्म कर दिया, और घूँट को गले के नीचे उतारते वक्त लगा कि मेरे मुह, आँख, नाक, कान, नसो सबमे सिर्फ हल्की गरम-गरम दार्जिलिंग की चाय भर गयी है और मै अनुभव कर रहा हूँ कि प्रसन्नता मे मेरी आँखे अवश्य ही छोटी होगयी होगी और धुली हुई उजली सीपो की तरह उनमे चमक भी आ गयी होगी, जिसमे यह सामन का लॉन, पेड, फूल, सब्जियाँ, आसमान और सामने बैठी हुई रजना, उसके बालो की एक-एक लहर, गोल आँखो मे दिखायी पड रही होगी। और मै एक क्षण को चाहने लगा कि काश मैं अपनी आखो मे रजना का वह सब कुछ देख पाता जो सैयद के साथ उस तूफानी रात मे बीता है। रजना मेरी आँखों मे दिखायी पड रही होगी, इस विचार से ही मै उत्साह से भर गया हूँ। मुझे डर है कही जोश मे केतली से गिरती हुई चाय से मे टेबिल क्लॉथ न खराब कर दूँ और वही रजना मुझे फिर फूहड समझने लगे। मे सब सहन कर सकता हूँ किन्तु किसी स्त्री द्वारा फूहड समझा जाना नही। विशेपकर उसके द्वारा तो नही ही जो मुझे एक प्रेमी की तरह मानकर अपने जीवन भर की सारी अनकहनी बाते कहने पर तुली बैठी हो।

माली अभी-अभी सलाम करके गया है, कदाचित् वह बाहर का दरवाजा भी बद कर चुका होगा। कमरे के अदर की वे बारह रोशनियाँ अभी भी जल रही होगी। उस चित्रवाले अफ्रीकी का चेहरा केसा फोलाद की तरह निर्जीव ओर दरियाई घोडे की भाँति खूँख्वार है। मेरा मन फिर उदास हो रहा हे। मे हँसना चाह रहा हूँ जिससे यह प्रकट हो कि रजना मैं तुम्हारे निकट बेठकर सदा ही हँस सकता हूँ, तुम कितनी ही वेमी कहानियाँ क्यो न सुनाओ।

"अकलक! पता नही क्यो तुम्हे देखकर विगत का एक-एक पृष्ठ, एक-एक अक्षर उसका इतना स्पष्ट होता जा रहा है कि बस!! कहते है मरने के पूर्व स्मृति बहुत तेज हो जाया करती है। मै जानती हूँ कि आज मेरी मृत्यु नही आ रही है, किन्तु स्मृति फिर भी जाने क्यो तेज होगयी है।

"मै जानती हूँ कि तुम्ही एकमात्र मुझे ऐसे मिले थे जो मेरे सामने नही झुके, वरना सब मेरे सामने झुके और इसीलिए मैने किसी के साथ सधि नही की। सधि की थी तो दो व्यक्तियो से ही, पहले सैयद और दूसरे तुम.. और वह वाननिकोलस तो....”

और वह पागलो की भाँति हँसने लगी है।

"चलो अकलक! तुम्हे गान सुनाऊँ। जानते हो, पियानो बजाने के लिए जब मै वाननिकोलस के साथ थी तो आम्सटरडम मे प्रसिद्ध हो चली थी। यहाँ भी मैंने एक के लिए ऑर्डर दिया है पर नही जानती कि कब आयेगा। अच्छा रुको, मै बेला लाती हूँ और फिर तुम्हे कुछ बजाकर सुनाऊँगी। जानती हूँ यह सब सुनते-सुनते तुम्हारी कनपटियाँ दर्द करने लगी होगी, किन्तु अकलक मैं आज तक तुम्हारी प्रतीक्षा मे थी कि तुम एक बार सब सुन लेते, मात्र सुन भर लेते। मै इससे अधिक की अपेक्षा भी नही करती। मैंने कुलकर्णी से क्या चाहा था? यही कि वह एक बार सुन भर ले। परन्तु सुनने के लिए

मनुष्य को पत्थर होना पडता है उतनी देर तक के लिए। तभी तो अकलक ! देवता लोग सुनते समय पत्थर हो जाया करते है। तुम पूछोगे कि फिर देवता देवता क्यो नही हो पाते, पत्थर ही क्यो रह जाते है ? तो जानते हो मेरा क्या उत्तर होगा ? यही कि दिन भर लोग सुनाने के लिए पहुँच जाते है और बेचारे देवता कभी भी पत्थर से अलग नही हो पाते। और मेरा विचार है कि अब तो देवता भी भूल गये होगे कि वे पत्थर के नही बल्कि और किसी चीज के भी बने हुए थे। इसीलिए ऐसा व्यक्ति चाहती थी कि सुनते समय वह पत्थर जरूर वन जाये किन्तु उसके बाद आदमियो की भाँति बोले अवश्य। इसीलिए मै किसी की पूजा आज तक न कर पायी, क्योकि मुझे आदमी की आवश्यकता थी।"

रजना बेला लाने चली गयी है और मै चाह रहा हूँ कि उठकर अब स्टेशन पहुँच जाऊँ। क्योकि जब पूरी तरह रजना को मालूम होगा कि मै अकलक वास्तव मे नही हूँ तब उसकी प्रतिक्रिया किस सीमा की होगी, यह मै भलीभाँति सोच सकता हूँ। स्टेशन पहुँच कर सोचूँगा कि किसी भी गाडी से लखनऊ छोड दूँ, क्योकि इस लखनऊ मे मुझे अभी और भी सुनाने की इच्छा रखनेवाला व्यक्ति है। जो कुछ सुना, क्या वह मुझ जैसे साधारण जीवन बितानेवाले के लिए कम है ? क्या मै कभी सोच सकता हूँ कि मै इनने ऊहापोहो के बीच मे से गुजरकर, जी कर और आज फिर इस तरह किसी अजनबी के सामने बेला उठाकर बिना किसी सशय के बजाना शुरू कर सकता हूँ ? किन्तु रजना ने ऐसा सब क्यो किया ? शायद कोई भी ऐसा नही करना चाहता। फिर ? मुझे कभी ख्याल भी नही था कि जीवन भर बनियानो की डिजाइनो और खपत के बारे मे सोचनेवाले मुझ जैसे व्यक्ति को ऐसा सुनने को मिलेगा जो केवल उपन्यासो मे लिखा मिलता है; इसीलिए मै कभी उपन्यास नही पढता, किन्तु मै उपन्यासो से भाग सका ? आज उनमे का एक पात्र मुझे अपने मोहपाश मे जकडे हुए कितने मोहक दर्प के साथ मेरे निकट बैठकर अपनी कथा सुनाता रहा है, और अब उसका बेला सुनूँगा। आज मैने उसके साथ बैठकर खाना खाया है, कॉफी और चाय और ड्रिक तक किया है। सबसे मजेदार बात तो इन सबसे परे है कि उस पात्र ने मुझसे कितना पुराना नैकट्य भी स्थापित किया है। यह तो मै हूँ जो जाने क्यो, कदाचित् डर के मारे ही, नही कह पा रहा हूँ—"हाँ रजना ! मै ही वह अकलक हूँ।"

और रजना मेरी बाँहो मे होती। इनना रूप पाकर किसकी बाँहे नही भर जायेगी ! इन्ही हाथो मे रजना के वे गोरे लाल गाल होगे जिन हाथो मे हौजरी मे गटठर गिना करता हूँ। किन्तु और एक हाथ मे गज और दूसरे मे बेला लिये हुए आ रही है।

पहले बेला वह थोडी देर बजाती रही। बेला बद हुआ और उसके बाद धीरे-धीरे वशी के स्वर सा गीत उठने लगा . . .

आछे दु ख, आछे मृत्यु विरह दहन लागे
तबउ शाति, तबू आनद, तबू अनत जागे
तबू प्रान नित्यधारा, हासे सूर्य चद्र तारा

बसत निकुज आसे विचित्र रागे
तरग मिलाय जाय, तरग उठे
कुसुम झरिया पडे, कुसुम फुटे
नाही क्खय, नाही शेप नाहि नाहि दैन्य लेश
सेइ पूर्णतार पाये मन स्थान मागे

सगीत चल रहा है .. फूल, तारे, इन्द्रधनुप, अप्सराएँ और स्वर्ग !! रजना, सगीत और मैं !!

मुझे केवल इस समय यही लग रहा है कि मैं किसी झील के किनारे बैठा हूँ और पानी का नीला विस्तार ही स्वर्ग है, और लहरो की जलकन्याएँ मुझे स्वर की बाहो मे चारो ओर से घेर रही है।

गान समाप्त हुआ, मेरे मन मे झटका लगा। किन्तु मै जानता हूँ कि मुझमे साहस की कमी है, विशेषकर तब जब कि मुझे कोई चीज या बात प्रिय लगती है, किसी महिला की—तब मै उसके विषय मे तो नही ही कह पाता हूँ, चाहे और किसी बारे मे कुछ भी कह दूँ, जब कि इसके विपरीत नारी अपनी हर चीज की प्रशसा की अपेक्षा रखती है । किसी 'ममी' के ताबूत के पास बैठकर यदि उसके रूप की प्रशसा कोई कर दे तो शायद है वह 'ममी' उसे सुनकर बाहे फैला दे ।

"अकलक ! जानते हो कितने बरस होगये उस बात को जब तुम भी लाहौर मे चले गये थे ? तुमने मेरी कोई चिन्ता नही की । मै तुम्हारे निकट उपेक्षित से बढकर और क्या रही ? मैने तब तक भलीभाँति समझ लिया था कि नारी के दो रूप हुआ करते है, एक तो वह चाहती है किसी दूसरे को, तथा विवाह किसी दूसरे से करती है । हो सकता है कि अधिकाशत कुछ केवल चाहती है विवाह नही करती, और कुछ केवल विवाह करती है चाहना उन्हे आता ही नही, और बहुत ही कम यह दोनो एक मे जाकर समाहित होते है, ऐसी भाग्यवान कम ही होती है । कहते है, पहले मन मे चाह पैदा होती है, फिर विवाह की भावना । मैने बहुत पहले विवाह किया था, इसलिए जब चाह की उम्र आयी, अपने शौहर को मैने गोली मार दी थी । इसलिए लाहौर आने पर मैने दो काम किये थे—एक तो अपने दाँत का बिल्कुल नया सैट बनवाया था, दूसरे अब किसी को चाहा जाय की मुझे चिन्ता थी ।

नदलाल को मैने चाहा कभी नही, किन्तु निरन्तर प्रयास करने पर कदाचित् चाह भी ले जाती, किन्तु तुम आये बिलकुल धूमकेतु की तरह और मै तुम्हे समझने मे लग गयी । छोडो अकलक ! उस नदलाल की बात । —कुछ भी हो, सब कुछ किया जानेवाला कहा तो नही जा सकता न ? कितना कठिन होता है वह कहना जो हम करते है ! अधिकाश मे हम कह नही पाते, तभी तो हमारे चेहरे पर हवाइयाँ उडने लगती है जब कभी हमारे किये से सबधित चर्चा भी सुनने में आती है तो ।

तुम्हारे साथ में वे चार वर्ष मेरे जीवन के सब से सुन्दर क्षण थे। क्योकि उसके बाद के दिनो के बारे में तुम थोडी देर मे जान ही जाओगे और जो दिन आने को अब है उनके विषय म मै निश्चित रूप से जानती हूं—यन्त्रणा मात्र ! ! न उससे अधिक, और न इससे कम। तन की यन्त्रणा तुम्हारे सामने बैठी हुई इस रूप की प्रतिमा रजना ने कम सही हो सो नही है, किन्तु मन की प्रतारणा तो नितान्त असह्य है अकलक ! नही सह पाऊँगी, कदापि नही, कितनी बार कह चुकी हूं अपने पति से, तुमसे भी अब क्या कहना होगा ? बोलो ! बोलो ! !

किन्तु जानती हूं तुम क्या कहोगे, क्योकि इस सब होने के पीछे अन्य लोग तो निमित्त है, धरती मै थी, अकलक ! बीज के लिए धरती से प्रश्न नही करना पडता। वह तुम्हारे उत्तर की अपेक्षा किये बिना ही अकुरित हो उठती है। ठीक वही मैने भी तो किया। क्योकि धरती जिस प्रकार प्रश्नमयी, अनुत्तरा और अन्यदा है, वही तो मैने भी किया। परन्तु हम दूसरे पर सहज स्पष्ट यह कर भी दे तो उसे वह उसी भाँति स्वीकारता तो नही है न ?

नारी अन्यदा हुआ करती है, इसीलिए तुम उसे चरित्रहीन भी कह लेते हो। मै अन्यदा हूं, इसलिए चरित्रहीन भी हूं। चन्द्रमा का कलक और ग्रहण तुम पूजा-पाठ, दान-दक्षिणा, स्नान-ध्यान से दूर कर लेते हो, किन्तु हमारे कलक को धो सकना तुम्हारे पुरुषार्थ की बात नही है। तुम मात्र देख सकते हो विजित पाडवो की भाँति कि कल की पूजा करती हुई नारी दूसरे दिन तुम्हे कोठो पर से निमत्रण देती है। ठीक भी तो है, वह फिर से दूसरी बन सके, यह उसके लिए तुमने सम्भव ही नही रखा अकलक !"—

मै देख रहा हूं कि रजना सब कुछ खोकर, यही सत्य है—को सत्योक्ति बना रही है।

"रजना ! व्यक्ति का असामाजिक हो जाना निरकुशता है, जो असतोष को जन्म देता है।"

"अकलक ! तुम्हारे इस समाज मे व्यक्ति पैदा करने की क्षमता, शक्ति अब शेष नही है। जिसे तुम व्यक्ति कहते हो वह एक पोस्ट आफिस का टिकट मात्र है, जिसके साँचे बने हुए है। अपनी शक्ति के अनुसार तुम उन्हे बडे छोटे साँचे मे ढालते हो। व्यक्ति बनाया तभी जा सकता है जब वह पैदा हो। जाने कितने सस्कार, समाज रूप मे, उसके चारो ओर खड़े कर देते हो कि उसम का वह व्यक्ति ही नष्ट हो जाता है। तुम्हारी शिक्षा-दीक्षा से विद्रोह कर यदि कोई 'व्यक्ति' बनना चाहता है, तो उसे तुम पथभ्रष्ट, अनागरिक, चरित्रहीन कहकर बहिष्कृत कर देते हो। क्योकि वह तुम मे की एक भेड नही है। किन्तु तुम्हारा महापात्र समाज, श्मशान की अशुभ पीली लपटो की तरह हिलता हुआ हँसने लगता है।"

और रंजना के उन हरे नैनो मे सोता फूट निकला है।

मेरी खाक समझ मे नही आ रहा है कि मै ऐसा क्या कुछ करूँ कि इस नारी का मन प्रतारणाओ से परे हो सके। यह मुझसे, जो मै अकलक न होने के कारण नही समझ पा रहा हूँ—क्या चाहती है ? यह कहती है, व्यक्ति पैदा होता है। जबकि व्यक्ति समाज का पुत्र है—व्यक्ति नदी है, समाज समुद्र है न कि रेगिस्तान। काश ! मै एक क्षण को वह हो पाता तो मै इसे वह सब दे देता जो इसके मन को खाये जा रहा है और फिर मै वापिस अपने विजगापट्टम मे पहुँच जाता। तब सिर्फ बनियानो के बारे मे ही सोचता और कभी एक क्षण को भी नही ध्यान मे लाता कि मै कभी रजना नाम की किसी रमणी से मिला भी था और उसका प्रभाव मेरे मन पर सदा के लिए कसौटी की लीक की भाँति है और रहेगा भी, चाहूँ तो भी वह मिट नही सकता है। मै तब स्पष्ट रूप से जाकर अपनी पत्नी से कह देता कि तुम अपने पति को सम्हालो। जानता हूँ वह स्त्री, बल्कि वही क्या कोई भी स्त्री, अपने पति को न खोने देने के लिए क्या कुछ नही करती है—वह भी बहुत कुछ करती। उसे भरतनाट्यम् आता है, उसका देवदासियो की तरह सुन्दर शरीर है, उसकी आँखे जो कि कुछ दिनो से चूल्हे के धूएँ के कारण हल्की पीली हो चली है—वह उन सबमे मुझे मोह लेती। मुझे रजना को छोडकर और कोई स्त्री अपनी पत्नी से अधिक आकर्षक नही लगी है। परन्तु प्रश्न है कि मै वह सब कैसे करूँ, और मुझे पहली बार उस अकलक नाम के व्यक्ति से चिढ हो रही है जो मुझ जैसी शक्ल लिए जाने कहाँ घूम रहा होगा।

"अकलक ! क्षमा करना, भावावेश मे मुझे ख्याल नही रहा।"

और वह मुँह धोने के लिए शायद उठ गयी है।

"नही ऐसी कोई बात नही है, मुझे दु ख है"—मेरा वाक्य शायद उसके पर्दे तक पहुँचने पर पूरा हुआ है। उसका मुँह, आँखे सब आचल के छोर से ढंका हुआ है। अब शायद वह बाथरूम मे पहुँचकर अधिक फूट कर रो सकती है। अपने मन के दबाव या बोझ को हम दो ही अवस्थाओ मे रूप दे पाते है, या तो नितात एकाकीपन मे या किसी घनिष्ठ के सामने। इस समय रजना बाथरूम मे बिलकुल एकाकी होगी। उसके जीवन की कडवाहट आज कदाचित उसके आँसुओ मे बाहर आना चाहती है किन्तु उसके जीवन मे एक भी ऐसा साथी नही जो उसके कधो को विश्वास बनकर छू सके। मेरा मन जाने कैसा हो रहा है, किन्तु मै अपनी सारी कमजोरियाँ जानता हूँ, इसीलिए घुटकर बैठा रहूँगा पर जा न पाऊँगा वहाँ—जहाँ इस समय रजना है और जिसे सहानुभूति की सबसे अधिक आवश्यकता है।

वह लौटी है। उसकी आँखे एकदम सेंदूरी लग रही है। लगता है, वह अधिक रोई नही है, पर घुटी अधिक है। आत्मा का विवेक रोने नही देता बल्कि घुटने देता है। वह अब इस समय आकर बरामदे के एक गोल खभे पर हाथ टिकाये दूर-दूर तक बिछे दृश्य को देख रही है।—यह दाहिने हाथ पर मोटर कम्पनीवालो के अहाते का पिछला भाग है जो अभी बनाया जा रहा है। लोहे की फ्रेमे लगायी जा रही है, जैसे-जैसे फ्रेमे लगती गयी है उन पर टिने भी वैसे ही वैसे लगती गयी है। यह उनका कारखाना होगा, इसलिए

दीवाल मे बडी बडी खिडकियाँ बना दी है और जिनमे नई जालियाँ लगी हुई है। कारखाने मे भाप के इजिन के लिए चिमनियाँ टिनो को छेदकर ऊपर निकली हुई है। टिने कैसी उम्दा तरीको पर उजली दिखायी दे रही है। दीवार पर लम्बे मोटे-मोटे अक्षरो मे "मोटर सर्विस कम्पनी" लिखा हुआ है । यूकेलिप्टिस के पेडो के पार भी शायद कुछ बँगले है जो अधिकतर इकहरे है। वहाँ जो औरते इस समय दिखायी दे रही है उन्होने चैकवाले फ्रॉक पहन रखे है जो बतलाते है कि वे जरूर ही क्रिश्चियन है। हम पुरुषो ने अपने लिए सूट तो जरूर शोभा के लिए चुन लिया है पर सारी भारतीय सस्कृति और धर्म हमारे घरो की स्त्रियो की साडी पर निर्भर है। शब्दकोश मे हिन्दू धर्म का पर्यायवाची अगर कोई शब्द दिया जाना चाहिए तो वह 'साडी' होगा।

रजना ने मेरी ओर मुडते हुए कहा—

"अकलक ! देखती हूँ आज तुम्हे जाना है और प्रत्येक क्षण एक अनागत चिडिया की भाँति उडता चला जा रहा है । चलो अन्दर चला जाये, क्योकि यहाँ बैठकर फिर चर्चा चलाना मेरे लिए सम्भव नही। तुम कह सकते हो तो क्या मै बिना चर्चा चलाये नही रह सकती ? तो मान लो कि सचमुच ही आज अगर समय भी चलना बद कर दे तो भी रजना का कहना बद नही हो सकता। आज तक तुम्हारी और इस क्षण की प्रतीक्षा मे थी, तुम क्या आये जैसे मेरा विगत लौट आया। द्वार पर आये को लौटाना तब सीख लूँगी जब देने को मेरे पास कुछ न होगा, आज है और आगे भी रहेगा, कदाचित जीऊँगी तब तक रहेगा। इसलिए विगत को अपने वर्तमान के कुछ क्षण देने ही होगे, चाहे इच्छा से चाहे अनिच्छा से। लेनेवाला केवल लेना जानता है, उसे देनेवाले के मन और सामर्थ्य से क्या ! इसलिए अदर चलना होगा और सुनना भी होगा।"

"और वे चार वर्ष, पार्को मे बैठकर, चॉदनी रात मे रावी की लहरे गिनते हुए, पुल की मेहराबो मे बैठे हुए कबूतरो की नकले करते हुए, अखरोट खाते हुए कब बीत गये, पता नही चला। मुझे कितना साफ याद है कि जब तुम नीला बेदिग सूट पहनकर नहर मे नहाने के लिए धँस जाया करते थे और मै किनारे पर बेठी हुई अपने दोनो पैरो से छोटी-छोटी लहरो को तोडती हुई बिलकुल धूप की उजली हँसी से भर जाया करती थी तब तुम मुझे "नरगिस का बासी फूल" कहकर चिढाया करते थे ओर मुँह के पानी से छोटे-बडे इन्द्रधनुष बनाते-बिगाडते थे। हँसी की चट्टान पर पानी की बूँदो की तरह चार वर्ष फिसलकर कौन जानता है कहाँ चले गये अकलक! मै किनारे पर बैठी हुई, जानते हो, उस धूप और सैयदवाली काली रात मे तुलना ओर साम्य खोजा करती थी। मैंने पिताजी से साफ कह दिया था कि मुझे अकलक से विवाह करना है। अपने पिता की एकमात्र सतान और वह भी इतनी रूपवती!! क्या वे अस्वीकारते? बेचारे कितने सीधे थे! फ्रटियर छोडने के बाद कभी भी सैयद के बारे मे मुझसे कुछ न पूछा। मैंने भी तुमसे सैयद के बारे मे नही कहा था। तुम यह विश्वास रखो कि अगर मेरा मनचीता, मनसोचा होगया होता तो मैंने कभी भी तुम्हे अधकार मे नही रखा होता। परन्तु न तो तब ओर न अब मेरी समझ मे आया कि ऐसा क्या होगया था तुम्हे, जो तुम्हे मुझसे अलग ले गया। क्योकि अगर नदलाल ने तुम्हे कभी मेरे विषय मे द्वेषवश कुछ बता दिया था, तो अकलक! तुमने उस बारे मे मुझसे पूछना तक उचित नही समझा?

"मै जानती हूँ तब तक तुम राजनीति मे कूद चुके थे। तुम्हे 'रजना बाँध लेगी' का भी ज्ञान था और तुम दिन रात मीटिगो, सभाओ, जलसो मे लग गये। तुम्हे देखकर सच ऐसा लगता था कि अगर मिल जाओगे तो मेरे वे सपने जो मेने तस्वीरो को देख-देखकर बनाये थे, पूरे हो जायेगे। मै लाहौर के पार्को मे घटो बैचो पर बैठी हुई लाइब्रेरियो से लायी हुई बायरन और टेनीसन, शेक्सपीयर और जोला की किताबे पढा करती थी। फ्राँस की कुमारियो की भाँति सोचा करती थी कि सब कुछ नील-कमल की भाँति ही सुन्दर है। मै हूँगी और मेरा राजकुँवर सा होगा अकलक—जीवन, फूलो के कुजो की तरह, रग और गध की कुद-कलियो से भर जायेगा। मेरा मन, साँझ के तारो के साथ चाँदनी मे उडते मेघपालो के सपनो मे डूबा रहता था। कोई मेरी कमर मे हाथ डालकर चलेगा और अपने महल के बडे हॉल मे आसव मे डूबी सिफनीज़ और नृत्यगतो के ससार मे सदा नृत्यमयी बनी रहूँगी। जब कभी तुम मेरे पार्श्व मे होते थे अकलंक! मैं अपना पूरा मन तुम पर इसीलिए नहीं प्रकट करती थी क्योकि डरती थी कि कहीं कोई सुन न ले और हम फिर सदा

उठाते हुए कहा था—

'रजना, मुझसे विवाह करोगी ? देखो, गोरज की लग्न वेला है ?'—

"जब कि मै जानती हूँ कि ऐसे प्रश्न पूछे नही जाते। तुम नही जानते कि उस समय मेरे मन मे खुशी ठीक वैसे ही भर उठी थी जैसे आकाश की नीली बॉहो मे कोटि-कोटि चमकने वाले तारे! क्या आकाश एक साथ इतने तारो के चमकते आशीर्वाद झेल सकेगा ?

"तुमने जब मेरे पिताजी से बिना कुछ सोचे हुए विवाह कर डालने की बात कही, तब मुझे याद है उस दिन के बाद से मै तीन महीने तक घर से बाहर नही निकलने दी गयी। उसके बाद मुझे जो मालूम हुआ वह यही कि तुम हजारीबाग मे किसी सगीन राजनीतिक मुकदमे के बदी हो।

"एक और घटना याद पडती है अकलक !

"जैसी कि तुम्हारी आदत थी तुम कई बार मुझसे भी बिना कहे राजनीतिक काम से गायब हो जाते थे और मै अनुभव किया करती थी कि मै तुम्हे जितना बाँधने का प्रयास करती हूँ तुम उतने ही उन्मुक्त हो जाते हो।

भगतसिह, राजगुरु वगैरह फॉसी पा चुके थे और गाधीजी की राजनीति ने एक करारी हार खायी थी। सभी नौजवानो मे भगतसिह की फॉसी को लेकर गुस्सा था। उधर लाहौर मे भी सरकार बडी सख्ती से लोगो पर निगाह रक्खे हुए थी। तुम हफ्तो तक क्रातिकारियो के साथ जाने कहॉ-कहॉ चले जाया करते थे।

"उन दिनो तुम लगभग दस दिनो से कही गये हुए थे। मैं अपने आपसे सघर्ष कर रही थी, क्योंकि पिताजी ने तुम्हारे साथ सम्बन्ध न रखने के लिए पूर्ण चेतावनी दे दी थी। मुझे सबसे अधिक तुम पर क्रोध आता था कि जिसके सहारे मै चलना चाहती हूँ जब वही मेरी उपेक्षा करके इस प्रकार अपनी राजनीति मे व्यस्त है कि उसकी ओर से रजना जैसे है ही नही, तब कोई क्या कर सकता है ? लाहौर मे आये दिन षडयत्र होते रहते थे और धीरे-धीरे काफी लोग पकडे जा चुके थे।

"उस शाम बहुत उदास, खिडकी पर कुहनी टिकाये बैठी हुई, अपने विगत ओर अनागत को लेकर सोच रही थी। विगत पर खेद नही किया जा सकता था, किन्तु अनागत उस अकलक पर निर्भर करता था जो दिनरात पिस्तोल ताने हुए जगलो-जगलो षडयंत्रकारी बना घूमता फिर रहा था। उसकी क्रान्ति, विद्रोह, विध्वस किसी भी मूल्य पर समझौता नही करना चाहते थे।

"मैने कई बार पूछा, अकलक ! तुम क्या राजनीति से अलग नही हो सकते ? क्या मै तुम्हारे लिए कुछ नही हूँ ? तुमने सदा हँसकर कहा कि "रंजना ! तुम मेरे लिए बहुत कुछ हो, किन्तु राजनीति से पृथक होने का अर्थ जानती हो ? राजनीति इसलिए है क्योंकि जीवन है। साधारण जन के लिए जीवन से अलग होने पर मौत होती है, मेरे लिए यही बात राजनीति के साथ समझ सकती हो"—और मै सदा घुटकर रह जाती थी अकलक !

"मैंने कई बार क्रान्ति, विद्रोह, विध्वस मे और अन्य हिसा मे साम्य बतलाते हुए कहा भी था कि यह मात्र दानवी भावना है, गाँधी बाबा भी यही कहते है, जब कि समाज के लिए एक सुव्यवस्थित आधारभूत नीतिमय प्रणाली की आवश्यकता है, न कि लोगो को इस प्रकार एक दूसरे को हमेशा मारने के लिए पिस्तौल लिये घूमना आवश्यक है, इसलिए कि तुम्हे खतरा है, क्योकि हमारा वर्तमान शासन-प्रणाली से विरोध है । विरोध शाति के साथ भी अभिव्यक्त किया जा सकता है । क्या आवश्यकता है कि उसके लिए बमो की मोटी मोटी आवाजे की जाये ? और तुमने हमेशा यही कहा—

"रजना ! व्यक्ति-सकट के दृष्टिकोण से उठाये गये अस्त्र मे और एक विराट् सामूहिक एव जनहित प्रणाली के लिए उठाये गये अस्त्र मे क्या कुछ भी भेद नही देखती ? इस मामले मे अहिसा की दुहाई गलत है ।"

"और हम हमेशा अपनी विरोधी धारणाएँ लेकर चुप हो जाते थे । दस दिन पहले कुछ ऐसी ही क्रान्ति के सम्बन्ध मे अपनी 'आतकवादी' तर्कप्रणाली तथा दलील देकर तुम एकाएक गायब हो गये थे । यह सब था, किन्तु मै तुम्हे सभी खतरो से बचाना इसलिए चाहती थी कि ताकि तुम केवल मेरे होकर रह सको ! मै तुम्हारी जनहित के लिए आतक-वादिता कभी नही समझ पाती थी ।

"खिडकी पर कुहनी टिकाये हुए मैं ऐसा सब कुछ जाने कब तक सोचती रहती कि कॉलेज के एक विद्यार्थी ने आकर सूचना दी कि अकलक ने रावी के उस पार कामरेड रॉय के घर बुलाया है । शायद अँधेरा भी हो चला था । उस बुलानेवाले के चेहरे पर भय की रेखाएँ साफ दिखायी दे रही थी । मै जिस समय कॉमरेड रॉय के घर तुमसे मिलने पहुँची तुम खून से भरे हुए कपडो मे एक फटी दरी पर कराह रहे थे । तुम्हारे पैरो से खून बहुत बह चुका था । जाने कितनी पट्टियाँ कोने मे खून से गीली तरबतर पडी थी । तुम्हारे साथी लोग उन पट्टियो को जलाने की चिन्ता मे लगे हुए थे । मैंने देखा कि तुम आँखे बद किये हुए लेटे हो किन्तु तुम्हारी बद आँखे किसी की प्रतीक्षा मे है, यह मैंने तुम्हारे चेहरे से ही अनुभव कर लिया था ।

"जब तुम्हे मेरे आने की सूचना दी गयी तुमने एक कराह के साथ अपनी आँखे खोली थी, मुझे अभी तक याद है । मैंने तुम्हारा हाथ अपनी दोनो हथेलियो मे लेकर अपनी आँखो पर फेरा और फिर एकटक तुम्हारी ओर देखना शुरू किया था, जिसका अर्थ था कि क्या यही सब तुम्हारी आतकवादी क्रान्ति है ?—और तुमने साँस भरते हुए उत्तर दिया था—

"रजना ! उम्मीद तो कम ही थी कि तुम इस वेला घर पर मिलोगी, किन्तु क्या करूँ, लाहौर अभी अभी आया हूँ और आधे घटे के अदर ही कुछ दिन के लिए मुझे पेशावर की ओर जाना पडेगा, क्योकि पुलिस बहुत बुरी तरह मेरे पीछे पडी हुई है ।"—गोली लगने के बारे मे न तो तुमने ही वताया और न मैंने ही उचित समझा कि पूछूँ । कामरेड रॉय से पूछने पर मालूम हुआ था कि तीन गोलियाँ पैर मे अभी भी धँसी है, पर इस समय अकलक का यहाँ

से चले जाना ही श्रेयस्कर,है ।

"और कामरेड रॉय शायद किसी काम से नीचे गये थे, कमरे की खिडकियाँ सब बद थी, तब मैं तुम्हारे सिरहाने कितनी फूट फूटकर रोई थी। मुझे वे क्षण और शब्द अभी तक याद है—

"मै तुम्हे किसी भी तरह यहाँ से अब नही जाने दूँगी। क्या तुम्हारी राजनीति ही सब कुछ है ? तुमने अपनी राजनीति के पीछे अपने साहित्य की हत्या कर रखी है और, और फिर अकलक ! मै, हाँ मै कुछ भी नही ?"

"डरो मत रजना ! मै पेशावर से शीघ्र ही लौटकर आऊँगा। और पगली ! तुम्हे मेरी राजनीति से क्या लेना–देना ?" तुमने कहा था अकलक ! मै उस समय विरोध या विवाद बचाना चाह रही थी, इसलिए मैने बात बदलते हुए कहा था—

"मगर तुम्हारे पैर मे तो गोलियाँ धँसी है, जाओगे कैसे ?" . और तभी रॉय ने नीचे से आकर बहुत दबे स्वर मे घबराते हुए कहा था—

"अकलक ! यहाँ मे अब जल्दी निकल जाओ, क्योकि पुलिस के गुर्गो को कुछ सदेह होगया है और शायद पुलिस कुछ ही मिनटो मे यहाँ पहुँच भी सकती है।"

"तब तुम कैसे लँगडाते हुए हँसने की चेष्टा करते हुए रॉय का कधा पकडकर उठे थे। धीरे धीरे पीछे की गली मे से निकलकर अपने दो साथियो के साथ तुम चले गये। दूसरे दिन सुबह अखबार से मालूम हुआ था कि रावी मे कूदते हुए पुलिस ने तुम्हारा पीछा किया और तुम पकड लिये गये।"

मै और राजनीतिक बदी ! ! मेरा रोम रोम काँप रहा है । मै किस बिना पर अपने को अकलक के धरातल पर ले जा सकता हूँ ! वह एक फरार सगीन जुर्म का राजनीतिक आसामी, और मै मात्र एक होजरी मे एडवर्टाइजिग मैनेजर ! अब मुझे कुछ भी सशय नही है कि मै और कुछ भले ही हो सकता हूँ किन्तु अकलक तो कभी भी नही।

स्वय रजना एक तो कहीं नही जाती है और कदाचित कोई इसके यहाँ आता भी नही है। कैसी घुटन होती होगी इन रेशमी परदो के भीतर, और घुटन ही इस रजना का सम्पूर्ण जीवन है—आनेवाले क्या दिन, क्या रात, सभी इन परदो के पार आकर चले जायेगे। इसे तो जीना है। . यह कमरा, ये रगीन परदे, ये डरावनी तस्वीरे, यह ड्राइँग रूम, बस ! ! अपने को जीवन से अलग हटाकर इतनी चीजो मे समेटकर यह अपनी ज़िन्दगी जी जायगी, उधार की जिन्दगी ! ! इसके नौकर बाज़ार जाते होंगे और पैसे फेककर सडी-गली चीज़े टिन के डिब्बो मे बद ले आते होगे, जो जीवन के नाम का उपहास बनकर बाज़ारों मे बेची जाती है। ये टिन के डिब्बों की जिदगी कदाचित् बनी ही ऐसे लोगो के लिए है । ये फसलो के बीच जिदा नही रह सकते, बल्कि उसकी तस्वीरे कमरे मे टॉग सकते है।

"और अकलक ! देखती हूँ कि तुम इस सीमा तक परायापन निभाने की सोच चुके

हो कि तुम्हे यह पूछना भी आवश्यक नही लग रहा है कि मै तीन महीने घर से क्यो नही बाहर निकली। नही जी, आज तो तुम वैसे ही चले आये हो निर्विकार भाव से, जैसे कोई फिल्म देखने जाता है तो वह चित्र देखते हुए 'कब' और 'क्यो' द्वारा फिल्म देखना बन्द नही करता, क्योकि कोई भी दृश्य या पात्र उसकी आलोचना सुनने के लिए नही ठहरता।

"मै तीन महीने तक निकली नही, वरन् यह कहूँ कि निकलने नही दी गयी। और इस तरह मैंने पहली बार अनुभव किया कि प्यार, प्रेम वह किसी का हो, समाज की टेढी भँवो के सामने घुटने टेक देता है। तुमसे अलग करने के लिए धमकियाँ, मार, सब सहनी पडी, किन्तु क्या इन सबसे मेरे विश्वास का ध्रुव तारा डिगा? नही। किन्तु जब बाहर आयी, तुम जा चुके थे, शायद सदा के लिए। सुना था कि वायसराय की ट्रेन पर बम फेकनेवालो मे तुम भी थे और तुम्हे आजन्म कारावास का दड मिला था। मेरे लाख चाहने पर भी जिस जहाज से तुम अडमान भेजे जा रहे थे तुमसे मिलने के लिए मुझे कलकत्ता भी नही जाने दिया गया। मेरे सामने फिर एक बार वैसी ही आँधी छा गयी थी जैसी कि सैयद के साथ उस दर्रे मे छायी थी। मुझे विश्वास हो गया कि मेरी छाया भी चाण्डाल की छाया है अकलक! अगर वह मनुष्य छोड किसी देवता या सूर्य, चद्र किसी पर भी गिर जाये तो वह अपवित्र या उसे ग्रहण लग सकता है। जब मैंने तुम्हे इस कमरे मे आज दोपहर को पूरे पच्चीस बरस बाद देखा तो क्या तुम विश्वास कर सकते हो कि मेरी इच्छा फूटकर रो पडने की हुई? चाहने लगी कि तुम्हारी आँखो को, बालो को, सबको चूम-चूमकर भर दूँ और कदाचित् इतना चूमना चाहती थी कि ये जो पच्चीस वर्ष बिल्कुल रीते के रीते तुम्हारे जीवन मे बीते होगे, एक बारगी ही चुम्बनो के जल से भर जाये। किंतु क्या यह सम्भव हो पाता? मै जानती हूँ, प्रत्येक वाक्य और घटना सुनने पर तुम्हारी घृणा बढेगी ही, पर क्या करूँ? अगर तुम्हारा प्रेम, तुम्हारा साहचर्य न पा सकी हूँ तो क्या घृणा से भी वचित रहूँ?—चाहे कुछ भी हो, वह वस्तु तुम्हारी ही तो होगी। ना अकलक! घृणा करके मुझे कही का न रखोगे। देखो, ऐसा न करना! मेरी इस इच्छा का क्या कभी आरपार आज तक मिला है, जो मै आज ही किनारे पर बैठकर समय के ककरो को गिन-गिनकर हिसाब लगाने बैठूँ। यह न रजना से कभी हुआ है और न होगा ही।"

और वह कमरे मे तेजी से टहल रही है। मै राजनीतिक बदी था, मुझे बीस वर्ष तक सगीन अपराध मे अडमान मे भी रहना पडा है, जब कि इस हिसाब से मेरी उम्र कम से कम पैतालीस की तो होनी ही चाहिये। लेकिन मै तो अधिक से अधिक पैतीस तक पहुँचा हूँगा। क्या आयु के इस इतने बडे अतर को रजना जैसी नारी की आँखे नही पहचान सकी होगी? फिर, क्यो अपने चारो ओर यह ऐसा मिथ्या का भ्रम खडा किये है और चाहती है कि मै भी इस भ्रम मे बँधकर क्या कुछ न कर लूँ। मै देख रहा हूँ, रजना की आँखो से चिनगारियाँ फूट रही है। कोई व्यक्ति इतनी मानसिक और शारीरिक यातनाएँ लेकर भी जी सकता है और हँस बोल सकता है! किन्तु शायद मै इसके प्रभाव में

आकर अन्यथा सोच रहा हूँ। ये यातनाएँ इन लोगो को कष्ट थोडे ही देती है, क्योकि अगर ऐसा हुआ करता होता तो ये कभी के इन रगीन परदो को फाड फेकते । किन्तु सोच-सोच कर जीवन को नासूर बना लेना और फिर उसे भी लिपस्टिक की तरह विज्ञापन का साधन बनाना ही इनकी कला है, सभ्यता है ।

मै देख रहा हूँ कि फिर अन्यथा सोच रहा हूँ।

उजालदान पर कोई कबूतर कही से आकर शीशे पर पैर जमाना चाह रहा है किन्तु फिसल पडने के कारण शीशे पर उसके पजो के नाखूनो की 'किच-किच' की आवाज हो रही है ।

"सैयद मेरी बोटी-बोटी जैसे नोचकर चला गया। नदलाल को मैने कभी चाहा ही नही था, वह तो लेनदेन पूरा करके चलता बना। जिसे सचमुच चाहा था वह अकलक भी उस दिन डडा-बेडी बजाता हुआ स्वाधीनता लाने जीवन भर के लिए अडमान चला गया रह गयी मै, और नग्न यथार्थ की क्रूर आँखे ! !

"और अकलक ! मैने अपने को इच्छाहीन बनाने का प्रयत्न किया । परिस्थितियो के हाथो मे ढीला छोड दिया। मैने अग्रेजी साहित्य से एम ए किया और तब मेरा विवाह एक 'सर' के लडके से होगया । जानते हो वह 'सर' का लडका मेरा दूसरा पति था। वह भद्रकुल का श्रीमत पुत्र था। उसका दिमाग कभी-कभी पागलो की सी हालत मे भी हो जाया करता था, बल्कि वह पागल ही था, मुझे हमेशा मारा भी करता था। विवाह के तीन साल के भीतर ही माँ और बाप दोनो मर गये । लोग कहते है उन 'सर' महोदय ने मेरी सम्पत्ति पर कब्जा करने के लिए ही दोनो को स्वर्ग भिजवा दिया। जो भी हो, मैं एकदम नि सहाय, निराश्रय होकर अपने पति के साथ जी रही थी। मेरे पति महाशय को विलायत घूमने का शुरू से शौक था और मेरे पिता की सम्पत्ति प्राप्त होने पर वे विलायत की तैयारी करने लगे । मैने तब एक लडकी को जन्म दिया अकलक ! जानती थी कि वह एक पागल की लडकी है, किन्तु मै भी तो उसमे कही कुछ थी। मैने अपने तन की पहली सौगात देखी। गाजर की तरह लाल-लाल और अखरोटो की तरह जिसकी नाक, तरबूज के गूदे की तरह जिसका शरीर——यह सब कुछ मैने ही जन्म दिया था, और उसी दिन 'सर' और उनके सुपुत्र विलायत की यात्रा के लिए चल दिये थे। मेरे मन ने कितनी बार चाहा कि वे एक बार आकर इसे देख लेते । किन्तु मेरी इच्छा का क्या मूल्य ! पहले कदाचित् होता भी, किन्तु मेरी सम्पत्ति मिल जाने पर तो और भी नही। मै सतोप किये बैठी थी और सोच रही थी कि चलो, ऐसे ही शेष काट दूँगी।

"परन्तु अकलक ! हम सोच कुछ भी ले, कर कुछ भी नही सकते ! क्योकि सोचना हम अपने साथ करते है, किन्तु करने मे हमे दूसरो की भी आवश्यकता होती है। दूसरे क्यो हमारे मन की बात होने दे सकते है ? हम सब तो शुतुर्मुर्ग है अकलंक ! इससे कुछ भी ज्यादा नही। सर गाडकर समझ लेते है कि तूफान अब नही आने का। हम अपनी

मिची-मिची सी आँखे बनाये भविष्यवाणियाँ किया करते है, किन्तु बात पूरी होने के पहले ही हमारा किया धरा पानी हो जाता है । हम समझते है कि बस, अब कहाँ ? क्योकि आगे तो कुछ है ही नही, और थोडी देर मे वही पर पानी का सोता फूट निकलता है ।"

"रजना जी ! इतना सब कुछ सहने पर भी "

मेरा वाक्य पूरा भी न होने दिया और वह हँस पडी है । किन्तु स्पष्ट है कि वह उसी तरह हँस पडी है जैसे आप के पेट मे भयानक दर्द हो और आपका चार साल का बच्चा बुजुर्गो की तरह पूछ बैठे और सान्त्वना देने लगे तो आप हँसने लगेगे । उसे हँसी कहना भी गलत है, उसकी इस हँसी मे कितनी पीडा है—यह मै समझ सकता हूँ का दावा भी मिथ्या है।

"क्या पागल हुए हो अकलक ! तुम इसको सहना कहते हो ? आदमी सहता तो अलग से है । किन्तु जिसका जीवन ही यह हो हम उसे सहना नही कह सकते । जैसे आग गर्मी को अलग से सहती है ? वे तो दूसरी चीजे है जो आग को अलग से सहती है। तुम इतना भी नही समझ सके ? मूर्ख कही के ! इतनी सहानुभूति प्रदर्शित करके क्या मुझे कमजोर करना चाहते हो ? याद रखना अकलक ! कि तुम्हारी रजना कमजोर हुई नही कि टूटी नही । दया या सहानुभूति के लिए पहले ही कह चुकी हूँ । आज तो सब इसलिए कह रही हूँ कि तुम्हे बिना सुनाये शायद मेरी मौत भी न आती और मुझे जाने कितना और भुगतना पडता । अकलक ! तन की यातना बहुत कुछ से अधिक कट गयी और शेष भी कट ही जायगी, रही मन की पीडा, तो वह भी कितने दिन ! ! तुम जो आ गये मन की यातना काटनेवाले, मन की भी कट ही जायगी—और अकलक ! "रजना जी" कहकर चाहते हो कि मै और नरक मे पडी रहूँ ?"

और वह मेरे सिरहाने खडी होकर मेरे बालो मे अपनी कनेरी उँगलियाँ चला रही है। मै जानता हूँ कि मेरे बाल घुँघराले हो तो क्या हुआ, कडे तो ऐसे है कि सडक साफ करने का ब्रश आसानी से बन सकता है। मेरे गालो के ठीक पास मे वह भरा भरा गोरा हाथ, जो कि एकदम चिकना सुडौल है—मेरे बालो मे फिर रहा है । मै जानता हूँ कि मेरा मन इस हाथ को चूम लेने को कर रहा है। साथ ही विश्वास है कि रजना कभी अप्रसन्न नही हो सकती बल्कि चूम लेने पर उसे भी कदाचित् बरसो बाद उतनी प्रसन्नता होगी जितनी मुझे कई कडवे वरसो मे न हुई होगी, पर मै ऐसा नही कर सकता।

दूर पर आटे की चक्की का स्वर आ रहा है । इन परदो के पार जीवन दिन भर उत्सव मनाने के लिए ठहरकर चल निकला है। परन्तु इस कमरे मे जिन्दगी ने बहुत बडा ठहराव लिया है । क्योकि यहाँ की जिन्दगी चलती नही है, बल्कि ज्वालामुखी की भाँति फूटती है । और फिर तो वर्षों के लिए आग और गरम गरम लावा ही रह जाता है । लोग बरसो तक याद करते है कि उनकी जाने कितनी अधेरी राते उस ज्वालामुखी ने खून की तरह लाल-लाल कर दी थी और ज्वालामुखी के उस जीवन ने न जाने

कितने पेड, पौधे, फसले, जानवर और इन्सान की पोध खत्म कर डाले थे ।

मुझे लगा कि रजना के हाथो से गरम-गरम आँच आ रही है और वह आँच उँगलियो मे पहुँच गयी होगी, तब बालो के घुँघरालेपन को भी निश्चय ही जला रही होगी—मै सिहर उठा हूँ ।

रजना और ज्वालामुखी ! !

"मै जानती हूँ अकलक ! तुम कई तरह के सकल्प-विकल्प वाले मन को लेकर यहाँ बैठे हो, किन्तु भावुकता मे कोई काम ऐसा न कर बैठना जिसमे बाद मे पछतावा हो। रही मै, तो मेरी बात न करो। और हाँ, देखो, बोलकर तुम समय को छोटा कर देते हो। मे कथा को भी छोटा नही कर सकती और समय को भी बढा नही सकती। दोनो को एक-दूसरे के साथ सामजस्य करना ही होगा, क्योकि अहिल्या का पत्थर अब मुझसे ढोने से रहा अकलक !

"उन दिनो हमारे यहाँ एक पठान नौकर होकर आया। मुझे वह अत्यन्त भद्र एव भला लगा था, वह मेरे बॅगले के बाहर दिन भर स्टूल पर बैठा-बैठा मूँछो पर ताव दिया करता था और मेरी उस बच्ची के साथ खेला करता था। मेरी नन्ही मुन्नी सी बच्ची उस पठान के हाथो मे देखकर कभी कभी मेरा दिल दहल उठता था, ओर वह काली अँधेरी रात, भयानक दर्रे याद आ जाते थे—किन्तु सब मनुष्यो को एक जेसा मान लेना भी कितना अन्याय है अकलक ! किन्तु न मानना भी क्या खतरे से खाली नही हुआ करता ?"

मैने देखा कि रजना के चेहरे पर एकदम काली स्याही जैसे किसी ने पोत दी हो। उसकी हरिण आँखो के गोल घेरो मे जैसे किसी ने काजल की अँगुली पोछ दी हो।

"एक दिन दोपहर की बात है अकलक ! बच्ची के दूध का समय था और वह रो रही थी। मेरी कमजोरी के कारण उसे ऊपर का दूध दिया जाता था। मुझे आया पर बहुत गुस्सा आ रहा था, क्योकि वह बच्ची के दूध के मामले मे ही नही, उसे सुबह हाथमुँह धुलाने से लेकर शाम को पैरामबुलेटर मे घुमाने ले जाने तक मे बहुत लापरवाह थी। वह बच्ची के दूध मे से अक्सर दूध चुराकर ले जाते हुए पकडी भी गयी थी। उस दिन दोपहर को 'दूध डुल गया' का बहाना बनाया और मेरी बच्ची भूख के कारण बिलख-बिलख कर रो रही थी। मै उस पर चीख चीखकर बिगड रही थी, तभी वह हमारा पठान नौकर दरवाजे की आड से मुझे घूर रहा था। मैने उसे उसकी इस बदतमीजी पर बहुत डाँटा और वह चला गया।

"अब धीरे-धीरे वह पठान निडर होकर बेधडक आने जाने लगा और कभी-कभी मेरी बच्ची को खिलाते हुए पेशावर की बाते सुनाया करता। दर्रों मे वह क्या बताये, किस तरह कत्ल हो जाया करते है। औरतो, बच्चो को लोग ले जाकर बेच आया करते है। ऐसी ही बाते सुनाया करता था। मुझसे वह अब धीरे-धीरे खुलता जा रहा था और मै पीछे हटती जा रही थी। उसने बातो ही बातो मे वह घटना भी सुनायी कि 'मेम साहब !

एक बार एक औरत चार आदमियो को कत्ल करके भाग गयी और फिर लोगो ने उस औरत को बहुत खोजा मगर हाथ नही आयी।'—उसके वर्णन से मुझे सैयद वाली घटना याद हो आयी और मै पसीने-पसीने हो उठी। मगर मैने अब दिल मे निश्चय कर लिया था कि इस पठान को छुडवा दिया जाना चाहिये।

"वह पठान एक दिन जब काम पर आया, मैने आया से कहलवा दिया कि पठान जा सकता है, हमे अब आवश्यकता नही। पठान ने बडी भद्रता से सलाम करते हुए पूछा कि अगर मेम साहब का यही इरादा है तो ठीक है।—जिस समय वह पठान गया, अकलक ! मैने कितनी सुख की साँस ली कि क्या बताऊँ ! मै अब अपने जीवन के दरवाजे हमेशा हमेशा के लिए बद कर लेना चाहती थी जिसमे मै और मेरी बच्ची के बीच कोई भी तीसरा आकर जीवन मे कोई व्यतिक्रम पैदा न कर दे। प्रत्येक भाव, एक विकार होता है और होती है उसकी तृप्ति। मैने अपने को सम्पूर्ण रूप से अपनी बच्ची मे केन्द्रित कर लिया था। मै उसे 'रिनी' कहकर पुकारती थी। वैसे अकलक ! सभी माताओ को अपने बच्चे प्यारे लगते है, किन्तु मेरी रिनी सचमुच मे ही बडी सुन्दर थी। जब वह अपने छोटे-छोटे गोल गदराये हाथ फैलाकर मेरी ओर देखने लगती थी तब मुझे ऐसा लगता था जैसे रिनी अभी भी नाल द्वारा मेरे शरीर से सबधित है और मेरा रोम-रोम उसे ढँक लेना चाहता था। मै जानती हूँ अकलक ! कि तुम हँसोगे, किन्तु यह सत्य है कि प्रत्येक नारी माँ बनना चाहती है, किन्तु यदि मुझे वास्तविक जीवन जीने को मिलता तो सच कहती हूँ कि मै प्रत्येक वर्ष माँ बनना चाहती। तुम कभी भी नही सोच और समझ सकोगे कि माँ बनना किसे कहते है। क्या प्रत्येक वर्ष धरती पुष्पवती और फलवती नही होती ? सृजन का सुख केवल नारी ही पहचान सकती है। अकलक ! सृजन की पीडा जिसे कहते है वह मिथ्या, अनैसर्गिक है, अवैज्ञानिक है। यदि प्रजनन मे, सृष्टि उत्पन्न करने मे पीडा होती तो पशु, पक्षी, प्रकृति सब मे वह पीडा होनी चाहिये थी ? सृजन एक क्रिया है। पता नही किसने, कब और कैसे इतनी महान क्रिया को पीडा कहकर लोगो के मनोविज्ञान तक पर उसका प्रभाव डाला। उषा प्रतिदिन सूर्य को जन्म देती है, फिर भी वह चिर-यौवना बनी रहती है।

"बहुत कुछ ऐसे ही विचार मेरे मन मे उठते रहते कि गाधारी की भाँति मेरे चारो ओर मेरे ही शरीर से उत्पन्न प्रजा का सुख-ससार हो। मुझे कई बार लगता कि यदि मै यह सब किसी से कह दूँ तो वह निश्चय ही अन्यथा समझ सकता है। अपने बँगले के पास वाले पार्क मे बैठे प्रतिदिन यही सब सोचा करती थी।

उसी पार्क की नित्य की सी निर्जन साझ

आया रिनी को लेकर नहर गयी हुई थी। यह पार्क कभी विश्राम का केन्द्र रहा होगा पर तब तो वह उपेक्षित था। शहरी फूलो और लताओ के स्थान पर वनलताएँ और जगली फूल, कास-घास के साथ-साथ मनमाने तरीके से उग आये थे। उपेक्षित पेड प्रारम्भ में तो देखभाल की आशा मे रहे होगे किन्तु धीरे-

धीरे वे भी जगली होगये । चीलो, कौवो के साथ साथ चिमगादडो और उल्लुओ ने उन्हे अपना आवास बना लिया। कुजो की लताओ की हड्डियाँ तक सूख गयी थी। बिल्लियो ने उस पार्क को अब अपना जच्चाखाना घोषित कर रखा था। पार्क की सडक पहले गजी और फिर धीरे धीरे उसके कूबड निकल आयी थी। अडोस पडोस के मोचियो, कुम्हारो ने उसे कचराखाना बना दिया था। घोसिनो ने जगह-जगह कडे पाथे हुए थे। पता नही कैसे वहाँ पर पुरानी स्मृति के रूप मे एक लोहे की बेच, प्रस्तर रूप मे, अभी भी पडी हुई थी। उस बेंच के काले कीट खाये लोहे पर लोगो ने अपने मन के उद्गारो को स्पष्ट रूप से तथा नाम पते सहित लिखा था। साँझ, गोरजी हो चुकी थी जिस समय मै वहाँ पहुँची। कोई भी थोडे से ओर घने अधकार मे देखता तो निश्चित ही मुझे इस पार्क की प्रेतात्मा समझ कर डरकर भाग जाता। एक क्षण को मुझे स्वय अपनेआप से ही आज जाने क्यो भय मालूम हुआ। मेरी पीठ पीछे कलासे हरे रग की कोई झाडी एकदम घनी ऊँची ऊँची सी फैली हुई थी। पता नही क्यो, मेरे मन मे बहुत ही उद्विग्नता और बेचैनी थी। चिमगादडे ऊपर घूमना शुरू होगयी थी। एक अजीब सन्नाटा सा बाहर और भीतर मिलकर मेरा गला दबोच रहा था। सन्नाटा जैसे जगली भैसा हो जो कि अपनी थूँथ लटकाये और सीग ताने सारी चीजो पर दोड रहा हो। मै बहुत घबरा गयी ओर मै चलने को उठी। मैने देखा कि एक पठान और एक तहमत पहना हुआ व्यक्ति तेजी से पार्क मे घुसे ओर जिधर मे बेठी थी उधर ही बढे। मै इस सुनसान जगह से जल्द से जल्द निकल जाना चाहने लगी कि तभी उन दोनो ने मेरा रास्ता रोक लिया। मै कुछ कहूँ इसके पूर्व ही एक ने मेरी कलाई जोरो से पकडी और दूसरे ने मेरा मुँह कसकर दाब दिया। मेरे मुँह से चीख जरूर निकली किन्तु वह पार्क के प्रस्तरो के बाहर शायद ही पहुँची हो। उसके बाद क्या हुआ, मै नही जानती।

"मै देखती हूँ अकलक ! कि तुम कथा की चट्टानो के ऊपर खडे हुए देख रहे हो कि नीचे, हजारो फीट नीचे घाटियो की काली डाढो को चीरती हुई रजना नाम की प्रचड, उद्दाम वेगवती बह रही है। सुनो, मुझे बीच मे टोकना मत। मेरे वेगनाद मे तुम्हारे प्रश्नो की चिडियो के कोमल स्वर डूब जायेगे, और मै नही चाहती कि तुम किसी भी प्रकार से मेरे द्वारा अब उपेक्षित बनो। आज तक तुमने सुन्दर रमणी का तन देखा है अकलंक ! लो, मै तुम्हे सौदर्य की विभीषिका वाला मन ओर उसकी ऐठन दिखाती हूँ। अब कैसी लज्जा ! जो रोग है, वितृष्णा है, घाव है, उसे लज्जा द्वारा छुपाने का अर्थ है शव के प्रति भोगासक्ति !! विगत, शव है—मै आज अपने शव का जलप्रवाह, अग्निदाह कर देना चाहती हूँ जिसमे पिछला कुछ भी शेष न रहे। मुझे सुख होगा अकलक ! कि रजना अशेष बनकर समाप्त हुई। मेरा रूप फोडे का सौदर्य है, लो देखो, विगत की पीप टीसें मार रही है।"

जैसे किसी सर्जन ने आपरेशन करने के लिए मेरी सारी चेतनाओं को इजेक्शन द्वारा अचेतनी कर दिया हो। और मै चेतनाओं से परे होकर जड़ जी रहा हूँ।

"तो अकलंक ! जिस समय मुझे होश आया मैंने अपने आपको एक कोठरी मे कैद पाया। मेरे हाथ और पैर बँधे हुए थे और मेरे मुँह मे कपडा-ठुँसा हुआ था। एक क्षण मे पिछली साँझ का दृश्य याद आया, अन्यथा मै इसे सपना समझे हुए थी। आया रिनी को लेकर नहर गयी थी। मै अपने अदर के हाहाकार से त्राण पाने के लिए एकान्त खोजती हुई रोज की तरह उस भुतहे पार्क मे गयी थी और याद आने लगा कि किस प्रकार एक पठान और एक तहमत पहने व्यक्ति अदर घुसे थे और तब मुझे परवश कर दिया गया था।

"किन्तु अब ?

"ये दोनो कोन थे ? कौन है ? शायद पैसे चाहते हो, किन्तु मै नारी भी हूँ—नारी का शरीर भी तो एक सम्पत्ति है । या शायद ये लोग मुझे बेच दे। कहाँ बेच सकते है ? कही भी—उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम—नारी की भूख किसे नही है ? उपवास करने, वाले से लेकर गोश्त खाने वाले तक—सबके लिए नारी भोजन है—और मुझे अपनी अवस्था पर रोना हो आया। उस सीलन भरी कोठरी मे रोती हुई आँखे अधकार मे कुछ खोज रही थी। चूहो की खटर-पटर जारी थी। बाहर तेज़ हवा के बहने से बडे-बडे पेडो के पत्तो की सरसराहट साफ सुनायी दे रही थी। दूर पर एकाध कुत्ते का रोना बतला रहा था कि इस समय रात है और मै किसी सुनसान स्थान मे कारागृहीत हूँ।

"आया रिनी को लेकर घर पहुँची होगी। मुझे न पाकर पहले उद्विग्न हुई होगी, फिर घबराकर मुझे पूरे घर मे, बगीचे मे खोजा होगा। फिर उस पार्क मे भी गयी होगी। जब कही न मिली हूँगी तो फिर 'सर' साहब के बँगले पर खबर की गयी होगी और फिर तो ऊपर से नीचे तक कुहराम मच गया होगा। पुलिस को खबर दे दी गयी होगी। 'सर' महोदय की बहू का गायब हो जाना कोई आसान बात है ?—तभी मुझे दो आदमियो को हल्की वातचीत का आभास मिला। कौन होगा ? वही दोनो बदमाश होगे !! तभी दरवाजे पर लगे ताले के खोलने का शब्द हुआ और दरवाजे मे हल्की 'चूँ चूँ' की आवाज़ हुई। दोनो ने अपने साफो से मुँह ढँक रखे थे और एक के हाथ मे जलती हुई तेज टार्च थी। मै भयभीत बच्चे की तरह उनकी ओर दहशत भरी निगाहो से देख रही थी कि एक ने पास मेरे आकर कहा . 'चल, उठ,—'

"किन्तु मै कैसे उठ सकती थी ? उसने मुझे एक ठोकर मारते हुए कहा—'उठती है या नही ?'

"ओर मैंने आवाज पहचान ली। यह मेरा वही पठान नौकर था जिसे मैंने निकाल दिया था। शायद मुझसे बदला ले रहा था।

"क्यो, तू वही बद्‌जात है न, जो सैयद की बीवी थी ?"

उसने तेज घूरती हुई आँखे मेरी आँखो मे वैसे ही डाल दी जैसे वह काले तसले मे भर-भरकर बहुत सारे लाल-लाल अगारे मेरी आँखो मे झोकने पर तुला हो। मै समझ गयी कि यह मुझे बहुत पहले से जानता था।

"याद है तुझे, उस रात दर्रे मे तूने हम पर गोली चलायी थी ? खुदा के फजल से मैं बच पाया। तू तब लाहौर भाग गयी थी। तब से मैं तेरी तलाश मे घूम रहा था। जब तेरी शादी की खबर अखबार मे छपी तब मुझे लगा कि तू वही है। अपनी हीग को घाटे मे ही बेचकर मैं दो-एक दिन मे हैरान होकर वापस जानेवाला था। नानबाई के यहाँ नान की खटास के साथ बैठा पनीर खा रहा था कि अखबार मे तेरा नाम देखा। तेरे वालिद का भी नाम देखा और मैंने खुदा का शुक्र मनाया कि परवरदिगार ने मेरी मुराद पूरी की। तब मैंने तेरे यहाँ नौकरी की। मै तुझे अच्छी तरह पहचान लेना चाहता था कि तू ही वह औरत है जिसकी गोली से मेरे दोनो भाई मारे गये थे और जिसकी गोली से मेरा दाहिना कधा हमेशा के लिए बेकार होगया था। उस दोपहर को जब तू दूध के लिए चिल्ला रही थी कि मुझे तेरा वह दर्रेवाला चिल्लाना याद आ गया। मे तब दरवाजे की आड मे खडा-खडा सोचता रहा कि तेरा इसी समय कत्ल कर दूँ। मगर तेरी खूबसूरती ने मुझे ऐसा नही करने दिया और मैंने तुझे बीवी बनाने का तय कर लिया। तूने मुझे डरकर नोकरी से छुटवा दिया किन्तु मे चोबीसो घटे तेरी ही फिराक मे रहता था। मुझे खबर ही नही, एक एक लमहे की मुझे खबर थी। मुझे मालूम था कि तू उस पार्क मे जाती है। मौके की तलाश मे था। ज्योही मुझे मालूम हुआ कि तू उस पार्क म इतनी शाम गये गयी है—मे तुझे पाने के लिए बेकरार हो उठा।"

"उसने बडे प्यार से मेरे हाथो-पैरो के बधन छोडे, फिर मुँह का कपडा निकाला। मैं रुँआसी हो रही थी, भय के मारे कँपकँपी छूट रही थी, किन्तु मैंने बेहद गुस्से मे उस पठान के मुँह पर एक तमाचा रसीद किया। एक क्षण को वह अपने गाल सहलाता रहा और उसके बाद तो जैसे वह पागल होगया। मुझे याद नही, पर उसने मुझे मुह मे कपडा ठूँसकर मारना शुरू किया। मुझे ठीक तरह याद है कि बेहोश होने के पहले उसने जूते पहने हुए पैर से मेरे पेट मे इतनी जोर से लात मारी थी कि मुझे उबकाइयाँ शुरू होगयी थी ओर मै औधे मुँह कटे हुए पेड की भाँति गिर पडी। वह मेरी पीठ पर लातें मार रहा था ओर तब मैं बेहोश होगयी। मै नही जानती कि कितनी देर बेहोश रही। पर मुझे याद है कि मै बेहोश होते समय कटे हुए पेड की तरह औधे मुँह गिरी थी, किन्तु सज्ञा लौटने पर मैंने अपने आपको सीधा लेटे हुए पाया। किसी बुढिया का झुर्रियो भरा चेहरा मेरे सिरहने पंखा झल रहा था। एक मिट्टी के घडे मे शायद पानी रखा था और कोने में मिट्टी के कटोरे मे कोई चीज ढँकी हुई रखी थी। मेरी पीठ और पेट मे असह्य पीडा हो रही थी। मेरे पैर खुले हुए थे पर हाथ और मुँह इस समय भी बँधे हुए थे। बन्दरो की सी आँखे बनाते हुए वह औरत बिना बोले हुए पखा झलती रही थी। मेरे सिर मे भयानक दर्द हो रहा था और बार-बार उबकाइयाँ आ रही थी। मै फूट-फूटकर रो उठी। मै रो रही थी और निरीह आँखो से उस बुढिया से दया की भीख माँग रही थी—पर आज मुझे ऐसा लगता है अकलक! जैसे वह कोई मास का खिलौना थी जो कि चाबी भरने पर

पखा हिलाने का काम करती थी। वह पत्थरो की सी चुप साधे अपना काम करती जा रही थी। शायद धूप वाहर खूब सारी बिछ गयी थी, किन्तु कही से भी कोई आवाज नही सुनायी पड रही थी। मै घटो आँसू बहाती रही। मुझे अपनी रिनी की याद सताने लगी। उसके दूध का क्या हुआ होगा ? शायद वह 'सर' साहब के घर पहुँचा दी गयी होगी। उसकी गोल गोल आँखे मुझे खोज रही होगी और वह बार बार रो उठती होगी। क्या मै अब कभी भी अपनी बच्ची को नही देख पाऊँगी ? क्या ये लोग मुझे बेच देगे ? हो सकता है यह पठान मुझे ले जाकर उसी दर्रे मे कत्ल भी कर दे—और मै अपनी मुक्ति के लिए फूट-फूट कर रोती जा रही थी।

"मुझे घटो रोता देखकर वह बुढिया जादूगरनियो की भाँति गर्दन हिलाते हुए और आखे मटकाते हुए बोली—

'बस अब बहुत हुआ, चल उठ खाना खा ले'—और उसने मेरे मुँह का कपडा निकाला। मिट्टी की रकाबी मेरे सामने कर दी। मै घृणा और वितृष्णा मे भरी उस बुढिया को घरने लगी। उसने मुझे घूरते हुए देखकर कहा—

'घूरती क्यो है चुडैल ! खाती हो तो खा, नही तो मर भूखी—हाँ नही तो, निकाह करेगी उस मरदुए पठान से—अपने ये नखरे खसम को दिखाना। मेरी ओर जो आँखे निकाली तो मुह ही नोच लूँगी रडी का ! !

'मुझ पर रहम करो—मेरी बच्ची मेरे लिए रो रही होगी, मुझे छोड दो'— और मै फूट फूटकर रो पडी।

वह बुढिया उठी और दरवाजे की ओर से ही पुकारा—

'अबे सलीम ! ओ सलीम ! !'

'क्या है बुढिया ! '—सलीमने दरवाजे मे धँसते हुए कहा। यह उस पठान का दूसरा साथी था। रात को इसी के हाथ मे टार्च थी और इस समय यह भी बडा सा गरारा और पठानो की सी जैकेट पहने हुए था।

'देख बे, ये रडी तो खाने से रही। तेरा अहमदवा कब तलक आ जायेगा ? मेरी जान को राहत मिले। तुझे साले मै ही मिली थी ?'

'अरे फकीरे की अम्मा, घबराती क्या हो ? अहमद अब आ ही रहा होगा। इधर निकाह हुआ, उधर ट्रेन पकडी'—वाक्य पूरा करके अपनी मूँछे उमेठता हुआ वह घूरने लगा।

'नही खाती तो न खाने दो फकीरे की अम्मा ! अहमद इस चुडैल की हड्डी-पसली तोडकर साली को दुरुस्त कर देगा। अहमद को ट्रेन तक छोड आने का काम और बाकी है—फिर रात को तो—फकीरे की माँ—शराब और तुम्हारा चकला ! ! '—कहते हुए उसने फकीरे की माँ के गले मे हाथ डाल दिया।

'अबे, पागल हुआ क्या ? मुझे छोड। कबर मे पैर पहुँच गये और तुझे

'क्यो, कोई नयी चिडिया फँसी है ?'

'नयी चिडिया तो अहमद उडाये ले जा रहा है'—कहते हुए उस बुढिया ने मेरी ओर देखा और सलीम को एक गदा इशारा किया। दोनो हँस पडे।

"ओफ, तो मै किन गुडो के चगुल मे फँस गयी हूँ। मै बहुत जोरो पर चीख पडी कि तभी एक काजी के साथ अहमद (वह पठान) अदर घुसा। अकलक ! छुरे की नोक पर अहमद ने मेरे साथ निकाह किया। शुरू मे मेरे इन्कार करने पर उसने मुझे सबके सामने दो चॉटे रसीद दिये—और तब वह कानूनन और मजहबी तौर पर मेरा शौहर बन गया। उस सलीम और बुढिया के कहने पर—जब काजी चला गया तो मेरे मुँह मे कपडा ठूँसकर हाथ पीछे बाँधकर काला बुर्का पहना दिया।

"एक ताँगे मे कनात तानकर पता नही कहाँ से वे लोग मुझे ले चले। मगर मुझे ये मालूम होगया था कि रेलवे स्टेशन ले जाया जा रहा है।

"यह वही शहर था जहा मैने एक दिन सैयद वाली घटना के बाद आकर अपने माता पिता के साथ शरण ली थी और जहाँ नहर के किनारे बैठ अपने अकलक के साथ जाने कितने स्वप्न रचाये थे। पार्को की हरी दूब पर औधे लेटे हुए बायरन और कीट्स की कविताएँ पढते हुए राजरानी होने के मुकुट पहने थे—और आज फिर नया तूफान मुझे यहाँ मे दूर जाने कहाँ और कब तक के लिए लिये जा रहा था।"

मेरे दिमाग मे जाने क्या क्या विचार आ रहे है ! मेरा दम घुट रहा है। मुझे लग रहा है जैसे वह अफगानी मुझे ताँगे पर बैठाये हुए लाहोर की काली गलियो में से भगाये ले जा रहे है—मै डर रहा हूँ कि कही चीख न पडूँ क्योकि कहानी का युधिष्ठिर और व्यास, जो कि सुयोग से दोनो एक ही है, कितने शात मन से मेरे सामने के सोफे पर बैठे हुए और पता नही अतीत की किन खाइयो मे वह अपने को खोये हुए है।

मै साफ कह देना चाहता हूँ कि रजना न तो मै अकलक हूँ और न मुझे तुम्हारी इस ो मे ही कोई उत्साह है कि शेष को भी सुनूँ और जिस पर तुमने सोच-सोचकर जाने कितना गहरा घाव अपने मन मे बना लिया है—ठीक उसी तरह चाहती हो कि मै भी सुन कर जीवन भर के लिए तुम्हारी ही तरह घुलूँ। रजना, यह न हो पायेगा, क्योकि मै जानता हूँ कि मुझे कल कानपुर के कई व्यापारियो से मिलना है। कल से मै फिर बनियानो के विज्ञापनो में डूब जाऊँगा। तुम समझती हो कि तुम्हारी तरह सोफे पर आराम से टॉग फैलाये केवल सोचते हुए अपनी जिदगी काट दूँगा। न तो ऐसे साधन ही है, और साधन होने पर शायद सम्भव भी न हो, क्योकि यह सब तो तुम्हारे वर्ग के उजले धुले कपडे मे लिपटे स्त्री-पुरुषो को ही शोभा देता है जो सडाँध भरे जिस्मो पर पाउडर की कितनी तहे लगानी चाहिये का हिसाब ठीक ठीक जानते है। मै जानता हूँ, मेरी गरीब पत्नी को कोई आवश्यकता नही होती है कि वह खुशबू का बडल बनने का प्रयास करे। हमारे उस सीलन भरे घर में हमने अपने जीवन को कितना धो-पोछ कर रखा है कि उस पर तुम्हारे वर्ग की फफूँद नही चढेगी। रोज़ काम करता हूँ और मेरी बीवी रोज़ मुझे रोटियाँ, चुम्बन सब

आशीर्वाद की भाँति बरसा देती है। लो, तुम स्वय ही देखो, तुम्हारी महत्वाकाक्षाओ ने ही तुम्हे कहाँ पहुँचा दिया।

मुझे रजना पर क्रोध भी आ रहा है कि क्यो वह मुझे सुनाने को आकुल है! मै अब न सुन सकूँगा।

"रजना! तुम बिना कहे नही रह सकती, किंतु मै बिना सुने रह सकता हूँ।"

मै देख रहा हूँ कि मै कडवा बोल गया हूँ। रजना क्या सोचेगी!! यही कि प्रत्येक व्यक्ति ने उसे ठोकर मारी है। आज पर्व का दिन है और मै इसको सौहार्द भी नही दे सकता, बल्कि उल्टे कडवा बोलकर यह जता देने पर तुला हूँ कि रजना, तुम जिसे सुनाकर सिद्ध करना चाह रही हो कि देखो, जिदगी ने मुझे भयकर ऊँचाइयो और गहराइयो मे पूर्ण बना दिया है—तो तुम्हे मालूम होना चाहिए कि मेरे निकट तुम्हारे इन अनुभवो का कोई मूल्य नही। ये खाइयाँ है, जीवन की ऊँचाइयो की इन्हे सज्ञा मत दो।

मुझे ये कपडे, जो मैने इस समय पहन रक्खे है, स्पष्ट बता रहे है कि अकलक के ही है। वह इन कपडो को शायद कभी जल्दी मे छोड गया होगा। रजना ने इन्हे साज सँवार कर रक्खा है और आज फिर अकलक से मिलते जुलते व्यक्ति को पहनाकर यह पहाडी नदी की तरह फूट पडी है। आज के दिन को वह परिवर्तन का दिन मानकर विक्षिप्त हो उठी है। कदाचित् इस समय भी विगत को नष्ट-भ्रष्ट करके एक नूतन को जन्म देना चाह रही है। अपनी परिस्थितियो से उसी भाँति विद्रोह करना चाह रही है जैसे बरसाती नदी कूल-कगारो की सीमा को कदापि सहन नही करना चाहती और इन सबके लिए जी तोडकर अपने एक-एक बधन को तोडने पर लगी है।

प्रत्येक के जीवन मे बधनो से हीन होने का एक क्षण आता है और हम मे अधिकाश उसे नही पहचान पाते। क्योकि वह क्षण न तो असाधारण ही होता है, न सैलाब ही और न गध भरा ही। कदाचित् दूसरे क्षणो की भाँति ही एकदम सादा होता है, कोरे कागज की तरह, तभी तो हम उस पर नया शुरू कर सकते है। जब कि हम सोचते है कि एक दिन परिवर्तन हमारे द्वार पर खून मे लथपथ, रामलीला के राक्षस की तरह अजीब मुखोश मे आयेगा और कहेगा 'मै परिवर्तन हूँ, उठो!' और हम तब उठ पडेगे; किन्तु ऐसा कही नही होता है। सीधे साधे रोज के क्षणो मे कोई परिवर्तन का क्षण भी होता है, जो चुपचाप आकर चला जाता है और हम चूक जाते है। रजना समझ रही है कि उसके सामने रामलीला के राक्षस की भाँति ही परिवर्तन उपस्थित होगया है और वह विह्वल है कि एक बार किसी तरह तोड फेक दे। बस, उसके बाद तो वह वैसे ही चिकनी और बधन मुक्त हो जायेगी जैसे केचुली से अभी का निकला साँप!!

कडवी परिस्थितियो की केचुली मे रजना के मन का साँप!!

"अकलक! उधर क्या देख रहे हो?"

मेरे कधे पर अपना अँगूठीवाला दाहिना हाथ रखते हुए बोली। उसकी पतली

लम्बी गोरी सुडौल उँगली मे वह अँगूठी का लाल नग अगारे की तरह सुलग रहा है ।

"कुछ नही रजना ! इन छोटे-छोटे पेराम्बुलेटरो मे बैठे हुए बच्चे कैसे खूबसूरत लग रहे है ! सोचता हूँ, कभी तुम भी ऐसी ही, बल्कि बहुत ही सुन्दर बच्ची रही होगी।"

वह खिडकी के निकट होते हुए कह रही है—

"अकलक ! याद तो नही पडता कि मै कभी बच्ची भी रही हूँ। फिर जो स्मरण है वह विष की तरह तेज है, इसलिए दूसरा सब भूल जाती हूँ। किन्तु फिर तुम व्यवधान डालना क्यो चाहते हो ? मैने तुमसे कहा कि मुझे कहना है और तुम्हे सुनना ही है। मान लो मै प्रकृति हूँ जो तुम्हारे नियम नही मानती, बल्कि तुम उसके नियम मानने को बाध्य हो। फिर क्या तुम मेरे लिए एक दिन की बाध्यता नही सह सकते ?"

हम दोनो ऊपर टैरेस पर आकर बैठे है। यहाँ से लखनऊ शहर एकदम बिछा हुआ लग रहा है । सीधी-सीधी वृक्षो की पक्तियाँ दिखायी दे रही है । अधिकतर गाछ पत्रहीन नगे होगये है और कुछ मे नयी कोपले भी आ चुकी है। किसी मिल का भोपू आसमान मे कडवा काला धूँआँ फेकता जा रहा है । कुछ सरकारी इमारते दीख रही है जिन पर झडे गीले सूखे होकर चुप है। अडोस पडोस की छोटी चिमनियो मे से शाम के लिए जलाये गये चूल्हों के धूएँ उठ रहे है, जो हवा मे काँपते फैलते छितराते हुए उड रहे है। दुमजिले बँगलो के ऊपर छज्जो के तार पर होली के सब रगीन कपडे सूखकर सलवटो से भर गये है। स्त्रियो के कपडो मे उनके अगों की ऊँचाई-नीचाई भी जैसे उन कपडो मे सूख गयी हो और वह सूखने के बाद कडी होकर इस समय साफ दिखायी दे रही है। मुझे एकाएक अपने उस खबरपत्र और टाइम टेबल की याद आ रही है कि जिन बेचारो ने मेरा साथ यहाँ आने तक दिया है और वे इस समय गुमसुम नीचे रजना के उसी ड्राइंग रूम मे जहाँ मै इतना सारा खो गया हूँ, पडे होंगे। उस टाइमटेबल पर बनी उस विज्ञापनवाली औरत के भी तो इसी तरह सब कपडे गीले हो गये थे। और मेरा मन इस समय बहुत खुश हो रहा है, सिर्फ इस ख्याल से कि नही, इस अजनबी शहर मे साथी के रूप मे दो चीजे है जिन्हे मै अपना कह सकता हूँ, और जो मेरे लौट चलने का भी रास्ता देख रही होगी। दिन भर चप्पले भीगी रहने के कारण इस समय कडी पड गयी है । और कई दिनो से पालिश न करने के कारण उनमे एक तरह से कडापन आ गया है। साथ ही हल्की हरी सफेद फफूँद पानी ने चढा दी है जो मुझे इस समय सबसे अधिक चिंतित किये हुए है । मुझे अपने वे कपडे भी याद आ रहे है जो अब नौकर ने धोकर सुखा दिये होंगे, मगर उनका रग बिलकुल नही छूटा होगा। और मै उन्हे ही पहनकर ट्रेन मे पूरा रास्ता तय करूँगा, कानपुर के उस होटल तथा कमरे तक जाऊँगा जहाँ मेरे कपडे धुले हुए ट्रक मे बन्द है। सचमुच रगीन कपड़े पहनकर सेकेन्ड क्लास मे जाऊँगा तो लोगों को बड़ा अजीब सा लगेगा, किन्तु उन अजीब लगनेवालो को मेरी परि-

स्थिति का ज्ञान थोडे ही होगा ! वे तो समझेगे कि मै फूहड हूँ और कपडो के मामलो मे लापरवाह हूँ। विशेषकर जब वे मुझे मेरी शक्ल से, जिसमे प्रमुखत: मेरे बाल और निचला मोटा ओठ देखकर जरूर ही पहचान जायेगे कि मै दक्षिण भारत का हूँ। ये उत्तर भारत के लोग दक्षिण के सब लोगो को 'मद्रासी' कहते हैं। इस तरह हर को 'मद्रासी' कह देना इन्हे नही मालूम हम लोगो को कितना बुरा लगता है। मगर इससे लगता है कि ये लोग अपने ही देश का भूगोल कितना जानते हैं। आप चाहे तमिल बोलिये या तेलगू, ये उत्तर के लोग कहेगे—'मद्रासी बोल रहा है," जब कि मजेदार बात तो यह है कि 'मद्रासी' कोई भाषा ही नही है। यह तो वैसे ही है जैसे कोई दक्षिणी भारत का हिंदी या मराठी, गुजराती या बँगला सुनकर कहे "यह 'दिल्ली' बोल रहा है।"

मुझे ये कपडे जरूर ही बदल लेने चाहिये। क्योकि एक तो ये मेरे नही है, दूसरे ये कपडे किसी ऐसे व्यक्ति के है जिसके साथ रजना नाम की स्त्री का सम्बन्ध है—जो इस समय मेरे सामने कितनी शात होकर आराम-कुर्सी पर बैठी हुई अकलक के लिए बेचैन है, और वह मै नही हूँ। रजना के कथनानुसार तो नही, पर लगता है कि बिलकुल मुझ जैसा ही वह व्यक्ति है।

नगी सूखी डाले लिये पेड आसमान के साँवलेपन मे कैसे नसो के छत्तो की तरह बिछे हुए है। खाबार घरो की चिमनियो मे से मसालो की गध भी आ रही है कदाचित् यह काँदे की गध है—काँदे को, इधर प्याज कहा जाता है। इस समय बँगलो मे काफी सुनसान लग रहा है। नौकर लोग बँगलो के लॉनो मे घूमते हुए बीडी पी रहे है क्योकि मालिक लोग शायद बाजार या घूमने गये होगे। दूध वाले साइकिलो पर दूध के डिब्बे लटकाये बँगलो के सामने घटी या हॉर्न बजाने लगे है। रग खेलकर जीवन फिर से ताजे फूल की तरह गरम और रग-गधमय होकर खिल उठा है। दूरी पर हल्का कुहरा नीले धूएँ की तरह घिरने को हो रहा है। मार्च के इस अतिम सप्ताह मे शायद यह कुहरा आखिरी बार घिर रहा है। साँझ की जाती हुई धूप मे बिलकुल ही ऊनापन नही है बल्कि हल्की नमी है—जो इस समय मुझे बेहद पसद आ रही है। दिन भर कमरे मे बद रहा हूँ जिसने मुझे परेशान कर दिया था। इस समय मै चाह रहा हूँ कि खूब सारी ठड हो आये और अँगीठी की आँच मे लहकते हुए लाल अगारे देखते हुए अपनी ठडी हथेलियाँ सेकता जाऊँ और मलता जाऊँ। तब मुझे किसी चीज की फिक्र नही हो सकती है क्योकि रजना जब-तब जरूर ही सिगरेट देगी, जिसे मै सुलगा भी सकता हूँ और धूएँ के छल्लो मे खुश होती हुई छोटी-छोटी आँखे बहुत भली दिखायी देगी—मेरी आँखो के भलेपन के सम्बन्ध मे मेरे पास अनेको प्रमाण है।

रजना ने कहना शुरू किया .

"देखो अकलक ! तुम लोग न तो कभी हमे समझ सकते हो और न कभी समझ सकोगे भी। क्योकि हम हमेशा बरसाती नदी है। आँखो से नापकर धोखा ही खाओगे और सत्य जानने के लिए उसमे कूदना होता है, जो तुम लोगो से कभी नही होने का, यह

मै कहे देती हूँ। तुम कहोगे मै किताबे बोल रही हूँ या मैने पूरी जिदगी कोई उपन्यास जीया है, है न ? तुम जो समझो, मुझे कुछ नही कहना। जिन लोगो ने जबरन मेरा हाथ पकड-पकडकर कसमे खायी है, जब उनसे कुछ नही कहा तब तुम तो राजनीतिक ठहरे। व्यक्ति के दु ख-दर्द से बडी तो, तुम्हारे गाँधी बाबा ने कहा है, देश और समाज की पीडा होती है। इतनी बडी बात एम ए तक मैने भी पढी थी अकलक ! परन्तु जीना तो मुझे बहुत अलग तरह का जीना पडा न, जो कि डिग्री न था और न पुस्तक ही।

"बिना सुने कोई धारणा मत बना बैठना, यदि बना बैठो तो कहना मत। क्योकि रंजना के लिए अब सब व्यर्थ है। हॉ, तो जानते हो उन दिनो ट्रेनो मे तुम्हारे आज की तरह भीडे थोडे ही होती थी—फिर वह तो मेल थी। पूरे डिब्बे मे छीड थी, तीन-चार दूसरे आदमी थे जो कि बडे डिब्बे के एक तरफ कोने मे बैठे हुए ताश खेल रहे थे। हम लोग बम्बई जा रहे थे। जिस समय इजिन ने सीटी बजाकर भाप छोडी अकलक ! मेरा मन खिडकी से कूद पडने को हुआ, चीख पडने को हुआ, किन्तु सब व्यर्थ था। क्योकि मुँह मे कपडा ठुँसा हुआ और हाथ बँधे हुए थे। मेरे सामने तो आज के दीप जलने पर जो नये पति के रूप मे आया था वह अहमद-कुल्ले पर खास किस्म का साफा बॉधे हुए बीडी पी रहा था। उसका वह बडा सा नीचा कुर्त्ता जिसमे चॉदी के फूलवाले बटन और जिसके सफेद कफ डोरे से बँधे हुए थे। उसकी वह काली जैकेट—जिसमे अदर की जेब मे रखा हुआ बडा सा चाकू जिसकी मूठ की काली तेल खायी हुई लकडी बाहर निकली हुई थी, सब के सब डर पैदा कर रहे थे। उसकी वह पूरे थान की सलवार जो जाने कितने दिनो से न धुलने के कारण मटमैली हो रही थी। उसके गोरे किन्तु जिन पर मैल साफ दिखायी दे रही थी, पैरो मे मोटे चमडे की पेशावरी चप्पले थी। वह मेरे बुर्के में ऑखो के लिए बनी जाली द्वारा बराबर घूरता चला जा रहा था। उसका वह ऊँचे जबडो का गोरा किन्तु खूँख्वार मुँह, ऐंठी हुई मूछे और कानो मे दो सोने की पतली मुर्कियॉ, बालो के गर्दन तक पट्टे कटे हुए साफ़े के पीछे का हिस्सा गले में लपेटे हुए—मुझे बुर्के मे कॅपकँपी छूट रही थी। कभी-कभी खिडकी से लाहौर की बस्ती का वह भाग दिखायी पड जाता था जहाँ मेरे ससुर की दो बडी कोठियॉ बनी हुई थी। मै कहॉ से कहॉ आ गयी ? और मेरा सिर घूमने लगा। आँखों से ऑसू बहने लगे। इसी लाहोर मे मेरी रिनी है, वह मुझे अब कभी भी नही देख पायेगी—वह दूध के लिए चिल्लाती होगी—मेरा वक्षःस्थल दूध से भरता जा रहा था, पर व्यर्थ !!

"लाहौर मेरी ऑखो के सामने से जाने कब तक के लिए और शायद हमेशा के लिए छूट रहा था। ट्रेन मे बैठे हुए मुझे याद पडने लगा कि जब मै तुमसे अंतिम बार भी नही मिल पायी थी तब मै कितनी बीमार हुई, किन्तु हर बीमारी का अत तो होता ही है। हम कैसी ही भयकर बीमारी की शरण क्यो न ले, किन्तु एक सीमा तक ही हम जीवन के यथार्थ को बीमारी की आड़ लेकर टाल सकते है। हमे कभी न कभी तो फिर साधारण तरीके

पर जीना होता ही है । और फिर हुआ भी वही ।

बीमारी से अच्छा होते ही माता-पिता ने मुझे घर मे फिर बद कर दिया था । मै अधिक आ-जा नही सकती थी और मैने देखा कि अब रोज लोगबाग मुझे देखने के लिए आने लगे है । मै समझ गयी कि मेरा अब विवाह किया जायगा । मेरे पिता मेरे कारण बहुत टूट चुके थे । मेरा ब्याह जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी करना चाह रहे थे क्योकि नदलाल और अकलक इन दो नामो के कारण लोगो मे मुझे लेकर अक्सर कानाफूसी होती थी और खासकर जहाँ चार औरतो ने मेरी माँ को देखा नही कि कानाफूसी शुरू हो जाती थी ।

"और एक दिन मुझे मालूम हुआ कि 'सर' कपूर के एकमात्र पागल लडके जगदीश के साथ मेरा तिलक चढ गया । मै इस लडके को खूब जानती थी, जब कभी वह मुझे नदलाल के मैच मे देख लेता मुझसे बाते करने के लिए लालायित रहता था, किन्तु हम सब जानती थी कि वह पागल है, और मूर्ख भी । पिछले चार सालो से बी ए मे फेल हो रहा है ।

"और एक दिन बाजो के स्वरो के साथ मेरा विवाह शरू हुआ और तीन दिन मे जीवन का यह काम भी समाप्त हुआ । मेरे लिए यह सब नया नही था, भले ही इसका रूप नया रहा हो । सिल्क मे लिपटी हुई सर कपूर के घर पहुँच गयी, फिर उसके बाद मुझे याद नही पडता कि मै अपने पिता के घर कभी वापस गयी ।

"मै जानती हूँ कि मेरा यह पति चाहे कुछ भी रहा हो किन्तु व्यक्तिगत रूप से अपने को मेरे सामने जाने क्यो दोषी ही मानता था । कदाचित् मेरे हँस देने पर या आलिगन के लिए बाँहे बढा देने पर निहाल हो उठता था । मैने निश्चय कर लिया था कि बिना किसी बाधा के अब मुझे इसी पागल के साथ सुख पैदा करना है । वह मुझे लेकर विवाह के पहले पहले के दिनो मे डल झील, कुल्लू घाटी गया था । हम हफ्तो पहाडियो, जगलो मे घूमा करते थे । मै पहाडो की बरफ के ठडेपन मे अपने विगत जीवन के अगारो को सदा के लिए दफना देना चाहती थी । मै सदा मन ही मन हँसती थी कि—सौदर्य और पागल !! दोनो को एक सूत्र में बँधे देखकर—किन्तु मन मे कभी हलके से उबकाई भी आती थी । मै अपने मन का और अपने सौदर्य का सारा विद्रोह कुल्लू घाटी की गहराइयो मे हमेशा के लिए फेक आयी थी । मै कह सकती हूँ कि वह पागल मुझे प्यार करता था । किन्तु अनागत मशाले लिये मेरी प्रतीक्षा मे खडा था अकलक ! और पिता का स्वास्थ्य दिन पर दिन खराब होता जा रहा था । समय का व्यवधान और मेरे पागल पति की पैसे की वाछाएँ—प्यार, चुम्बन और आलिगन के बदले अब रोज मार पडती थी । पति देवता की माँग थी कि दहेज मे पैतीस हजार के बदले जो सिर्फ तीस हजार मिले है—शेष यदि शीघ्र नही दिया जायगा, तो मुझे वे मार-मार कर ज़िदा दफना देगे ।

"आज सोचती हूँ कि ज़िन्दा दफना देने का दावा उसका अकेले का झूठा हो सकता था

किन्तु मैंने अपने आपको निश्चय ही दफना दिया, इसमे कही कोई सशय नही, रच मात्र भी झूठ नही, दुराव का प्रश्न ही नही उठता । और जहाँ आकर अब मुझे खडा होना पडा है अकलक ! उसके आगे तो अब कोई गति शेष नही, इसलिए कि गति की मृत्यु हो चुकी है। गतिमान्, दुराव कर भी ले, किन्तु रुकनेवाले के लिये यह सम्भव ही नही। उसके अपने लिए भी उचित नही, समझे अकलक ! तभी तो दफना देनेवाली बात भी मिथ्या नही ! ! यदि कोई वस्तु मिथ्या है तो वह मै, मेरा सौदर्य और मेरे वर्ग की नारी—शेष सब सत्य है, असत्य, अशेष तो मै हूँ, नारी है ! !"

रजना की आँखो मे साँझ जल रही है ।

"शादी के बाद से घरवालो से भेट हुई नही थी। मुझे क्या मालूम था कि पिता जी ने क्यो इतना पैसा देने का वायदा किया था। और अकलक ! मुझे रोज मारा जाता था। दिन भर मे एक बार ही खाना दिया जाता था। मेरे मन मे किसी के प्रति कोई रोष नही था—किन्तु हम सबसे ज्यादा धोखा अगर किसी को देते है तो स्वय को। क्योकि हम अपने को छोटा सा तर्क देकर भी भुलावे मे डाल सकते है, जब कि सामनेवाला कथन की सत्यता को देखता है, परखता है अपनी बुद्धि के तर्क से, इसलिए हम उसकी क्या हानि कर पाते है ? इसीलिए होता यह है कि जहाँ तक हम आसानी से सहन कर सकते है—वहाँ तक बहुत कुछ मान लेते है कि बस इसके बाद कुछ नही आने को है । किन्तु प्रत्येक बार हमारा यह भ्रम दूर होता है और एक दिन केवल अपनी मूर्खताओ के कारण शतश खडो मे टूट जाते है—व्यक्तित्व के शतश खड-खड ! !

"कदाचित् सर कपूर साहब ने मेरे पिता पर यह प्रदर्शित करवा दिया था कि शीघ्र ही अगर वे अपनी पूरी सम्पत्ति दामाद के नाम नही कर देगे तो उनकी बेटी का जीवन खतरे से खाली नही ।

"और अकलक ! अपने कथन की सत्यता के प्रमाण मे कपूर साहब ने मार बढवा दी और खाना कम कर दिया था । अकलक ! जो बात मै नही कह सकती ओर कहना भी नही चाहती, किन्तु क्या करूँ बिना कहे मेरा दम भी तो घुट सकता है—और वह मेरा पति मेरे भूखे शरीर के साथ खेलता था। दिन भर मार ओर रात भर पैशाचिको की भाँति मेरा शरीर उसकी वासना पूर्ति के लिए प्रस्तुत रखा जाता था अकलक् ! क्या तुमने कभी अनुभव किया है कि पेट मे एक अन्न दाने का न हो, एक बूँद पानी की न हो, बेतो की मार से पूरा शरीर दर्द कर रहा हो ओर उस समय, हाँ उस समय . . . जाने दो अकलक ! जो मै एक बार कह गयी अब मेरा साहस नही कि उसे फिर से कह सकूँ । शब्दो की लज्जा एक बार आवेश मे ही तोडी जा सकती है, बार-बार सम्भव नही । उन्ही दिनो मुझे उस पागल का गर्भ रहा।

"कहते है मेरे माता-पिता को सर कपूर महोदय ने कदाचित् जहर दिलवा दिया था। उधर मै नये प्राणी के कारण सदा बीमार रहने लगी थी । जिस दिन नौ महीने यातनाएँ

सहकर मैंने सर कपूर की पोती को जन्म दिया---पिता-पुत्र दोनो विलायत की यात्रा के लिए रवाना हो चुके थे। जिस समय मेरी रिनी पैदा हुई थी मै बेहोश थी, क्योकि उसके गर्भ मे आने के पहले ही सारी भूख जैसे जाग्रत हो उठी थी। मेरा रोम-रोम भूखा और प्यासा था।

"मै जब अस्पताल से लौटी, मुझे बहुत ही आत्मग्लानि थी। मुझे लग रहा था कि कही कुछ असाधारण है जो रोज की जिन्दगी को ढँक लेता है, ग्रस लेता है, और मुझे चुप नही बैठने देता। मेरी उन दिनो यही दिनचर्या थी कि अपनी रिनी को हमेशा आया की गोद मे खेलते हुए देखते रहना और एक आराम कुर्सी धूप मे डलवा छतरी के नीचे बैठकर अपनी बच्ची के लिए कोई न कोई चीज ऊन की बिनते रहना। उस हरे लॉन पर कभी से आया की गोद मे तो कभी पेराम्बुलेटर मे मेरी बच्ची मुझे सुनसान घर की सभी चीजो से अधिक रगीन, मीठी, प्यारी तथा खशबूदार लगा करती थी। उसके वे छोटे-छोटे लाल हाथ, छोटी हथेली, उँगलियाँ, नाखून---वे गोल-गोल काली सफेद आँखे जो पैदा होने के पूर्व कई दिनो बाद तक हमेशा बद रही---किन्तु बाद मे वह जब अपनी चिकनी-चिकनी पलको को खोलती बद करती थी तब मुझे बेहद प्रसन्नता होती थी कि अकलक! यह एकदम मेरी बच्ची है---अगर मेरा बस चलता तो मै अपनी बच्ची को कभी अपने शरीर से अलग नही करती। मै उसके लिए सब कुछ कर सकती थी। अगर वह किसी बात पर कभी रोती थी तो मेरा कलेजा मुँह तक आ जाता था। आया जब कभी उसे नहलाती थी, मुझे डर लगता था कि मेरी बच्ची आया का इतना कडा हाथ कैसे सहन कर पाती होगी। पर जब मै उसके भूरे-भूरे बदन को बेबी पाउडर से खूब सारा खुशबू से भर देती थी तो मेरी आत्मा, मेरा मन एक ठडी बरफ की तरह ठडी प्रसन्नता से भर जाता था। जाने कितने मोजे, पुल-ओवर, कनटोपा, छोटे-छोटे वूलन-फ्रॉक, लडको के जैसे सूट, सब के सब मै दिन भर लॉन मे छतरी के नीचे बैठी उसके लिए बिना करती थी। मेरा बस चल पाता तो मै पूरे लाहौर की ऊन से अपनी बच्ची के लिए हजारो मोजे, पुल ओवर बिन डालती।

"मैने अपने शरीर मे से गोश्त और खून किसी दूसरे शरीर को दान मे दिया था, इसलिए पूरे शरीर मे हल्का पीलापन आ गया था। हरे लॉन मे अपने हल्दी के रग के पॉव की उँगलियो को देखती थी और मुझे गहरी खुशी होती थी। मै पूरी तरह समझ चुकी थी कि जन्म देना क्या होता है। किन्तु अपनी उस बच्ची को देखती थी तो मुझे लगता था कि अकुर जब धरती मे से फूटता है तो कदाचित धरती को भी उतनी ही पीडा होती होगी, किन्तु यह पीडा प्रसन्नता है, तभी तो धरती सैकडो बार अकुरित होती है और तुमसे सच कहूँ अकलक! कि मेरे अदर का कोई अश जाने क्यो ऐसा कभी-कभी चाहता था कि मै अधिक से अधिक बार माँ बनूँ।

"और उस दिन एक तो सुबह से गयी हुई आया जब पूरी दोपहर होने को आयी तब लौटी, दूसरे दूध डुल गया था---और मेरी रिनी के लिए आया और दूध दोनो जरूरी थे।

रिनी वहुत जोरो से रो रही थी, मै अपनी रिनी का रोना कभी नही सहन कर सकती थी। जानते हो जब मेरे सम्हालने पर भी वह रोती रही, खूब रोती रही तब मै भी उसे अपने कधे पर थपकियाँ देते हुए रोने लगी थी—तुम समझोगे मै मूर्ख थी, है न ? लेकिन अकलक ! मेरी रिनी मुझे सबसे ज्यादा प्यारी चीज थी। मै आया को अपनी उसी विक्षिप्त अवस्था मे बहुत जोरो से डॉट रही थी और उसी दोपहर को अहमद मेरे जीवन मे फिर ऑधी के छोटे से बादल की तरह उठा जिसका मुझे पता नही, किन्तु धीरे धीरे उसने घिरकर पूरे आकाश को छा लिया कि मै कुछ सोच सकूँ इसके पहले ही घनघोर मूसलाधार बारिश होने लगी और मै पूरी भीग गयी।"

किन्तु मेरी समझ मे यह नही आ रहा है कि रजना ने प्रत्येक घटना, प्रत्येक व्यक्ति के सामने क्यो झुकना स्वीकार किया ? और इसी झुकने को कहती है—नही, उसने विद्रोह किया है। विद्रोह मे, पृथ्वी की भॉति, स्वय की कील पर भी घूमती रही और सूर्य-प्रदक्षिणा की तरह घटनाओ एव व्यक्तियो के चारो ओर चक्कर भी काटती रही—यही तो है रजना !!

"किन्तु रजना ! तुम्हारे इन सब कार्यो के पीछे तुम्हारा मन क्या लेकर निहित था ?"

"निहित मत कहो अकलक ! क्योकि निहित ही तो नही था वल्कि अनासक्त रहने की चेष्टा की थी मैने। मन के निहित हो जाने पर तो हम परिस्थितियो को यथातथ्य रूप मे अगीकार करके उसी के साथ एकात्मता पैदा कर लेते है। उस दिन अहमद के साथ ट्रेन मे बैठे हुए मैने अपने मन को तो रावी पार करते हुए उस अधकार मे फेक दिया या कहूँ कि न फेकती तो क्या करती ? मै कहती हूँ मेरे पास मन नही है। तुम सोचते क्यो नही कि जब सिर्फ एक तन के पीछे मुझे क्या-क्या न करना पडा, यदि लोगो को मेरे मन के बारे मे भी पता लग जाता तो मेरी यातनाओ का अत क्या आता ? और मै तुम्हे आज यहाँ इस तरह दिखलायी पडती ? मन एक तो किसी ने माँगा ही नही, ओर यदि मागा होता तो मगर से जो बात बदर ने कही थी कि "वह तो पेड पर ही रह गया"—की तरह ही कुछ कहकर अपना पिड छुडाती। उस रात जब लाहौर से चली, मैने सदा के लिए मान लिया कि रजना ! तेरे पास केवल शरीर है ओर अब से इसका मालिक यह गदा अफगानी है—कल यह तुझे बम्बई मे बेच भी सकता है और तव यह शरीर उस खरीददार का भी होगा।"

और मै देख रहा हूँ मेरा सिर घूम रहा है। रजना मेरे सामने वैसी ही गम्भीर बनी बैठी है।

आसमान की नीली साडी पर काली गोट लगती जा रही है।

"मै देखती हूँ तुम बहुत ही थक गये हो, क्यो, है न अकलक ?"

और वह दोनो हथेलियो पर अपना सिर टिकाये आरामकुर्सी पर बैठी हुई सामने के आसमान को देखती हुई मुस्करा रही है।

"तो सुनो, बैरा को आवाज दे दो, वह चाय ले आयेगा और कुछ नाश्ता भी। क्या करूँ, मुझे स्वय लाज लगती है अकलक ! सब कहते-सुनते। किन्तु लाज लगने से ही क्या होता है ? जो हो चुका, वह हमारी-तुम्हारी वर्तमान की लज्जा से परे है, उस पर हमारा अधिकार नही। इसीलिए हम विगत को सम्पूर्ण रूप मे कह पाते है। तुम कहोगे मै बडी सस्कारवाली बनती हूँ किन्तु यह सब कहते हुए सोचती रहती हूँ कि यह कथा किसी अन्य की है जो मुझे इसलिए सुनानी पड रही है क्योकि केवल मुझे ही अच्छी तरह याद है। बस, मात्र इतना ही सम्बन्ध है।"—वह हल्के हँस रही है।

"इसमे हँसने की क्या बात है रजना ! हम हँसकर सामनेवाले को कितनी खराब स्थिति मे डाल देते है, यह तुम नही मानती ?"

"अकलक ! मै सिर्फ इसलिए हँसी थी कि देखो, रजना के अदर जो व्यावहारिक और चतुर व्यक्ति बैठा है वह कितना तार्किक एव शिष्ट है। कही तुम मुझ से नाराज न हो जाओ इसलिए उसने रजना के मुँह से कितने सिद्धान्त की बात कहलवायी और बात का खडन भी करवा दिया—मुझे अपने ही इन दो रूपो पर हँसी आयी थी। तभी तो दो रूप का होना चतुराई है, किन्तु बहुरूपिया होना पेशा माना जाता है।"

शाम की हल्की हवा के झोके मे रजना के लहराते हुए बाल हल्के उड रहे है और उसके पैरो के पास की साडी रह-रहकर आवाज करती हुई जब उड जाती है तब उसके अदर का सफेद पेटीकोट हल्के दीख जाता है। उसकी चप्पलो मे उसके गोरे पैर कैसे चुप है, जैसे वे अलग से आराम कर रहे है।

मै अतिम रूप से निर्णय कर लेना चाहता हूँ कि आज कानपुर जाकर शीघ्र ही उत्तर भारत छोड दूँगा और फिर कभी भी विघ्या पार नही आऊँगा। और यदि उत्तर भारत आया भी तो लखनऊ नही आऊँगा, और यदि लखनऊ आया तो रजना से तो नही ही मिलूँगा। मगर रजना, इस समय तो मेरे सामने तूफान की तरह बैठी हुई है।

कितनी शाति चारो ओर इस समय दिखायी दे रही है। अब कदाचित साँझ का पहला तारा उगने का समय हो चला है। और फिर उसके बाद चाँदी के कलदार रुपयो की तरह तारो से पूरा आकाश टको की जगमगाहट से भर जायगा। यह जो दाहिने हाथ पर दूर यूकेलिप्टस का घना कुज है, कदाचित् यह "जू" जिसका रजना ने 'बनारसी बाग' कहकर परिचय दिया था, वहाँ से भूखे शेरो की दहाडे आ रही है, बेचारो को कल सुबह फिर नपा-तुला मास मिलेगा। वह जो बडे जोरो से चीख रहा है जरूर ही वह चिम्पैंजी होगा।—नाश्ते के साथ बैरा की लायी हुई चाय की गध इस समय मेरे तन और मन मे भरी हुई है। मुझे इस बात की ओर आकर्षित कर रही है कि मै जल्द से जल्द दूसरा प्याला भर लूँ और इस खूबसूरत साँझ को ज्यादा से ज्यादा अपने अनुकूल बनाकर इसी मे डूब जाऊँ।

मेरे सामने बैठी हुई रजना अवश्य ही विगत जीवन की कोई घटना चुन रही होगी,

जिसकी चौखट मे यह अपने कुछ कडवे बरसो की जाली बुनकर मुझे दिखाते हुए कह सके कि "देखो अकलक ! यही तो मै हूँ, न इससे ज्यादा न इससे कम"। बीत जाने पर कडवा भी सुन्दर हो उठता है, क्योकि तब 'हम' उसमे से अलग हो जाते है । दु ख तो उस 'हम' को होता है जो कि बीत जाने पर तब कही नही होता उस सबके साथ ।

"अकलक ! रास्ते भर वह अहमद मुझसे यही कहता रहा कि उसने मुझे जब से देखा था वह मुझे बीबी बनाने की सोचे हुए था, और मै अहमद की बीबी बनकर देखूँगी कि वह मुझे अपने प्राणो से भी ज्यादा प्यार करता है । बम्बई मे वह मेरे लिए क्या कुछ नही करेगा। मगर वह मुझे रजना नही कह सकता है, क्योकि लोगो को शक होगा कि वह मुझे भगाकर लाया है, इसलिए जो नाम मुझे पसन्द हो उसी से वह मुझे पुकारेगा, मगर नाम होना चाहिए मुसलमानी और उसने मुझे 'नसीम' नाम दिया । और अहमद अपनी नसीम के साथ बम्बई पहुँचा। रास्ते भर वह बातो मे भले ही नरम होगया था, किन्तु मेरे हाथो मे ऐठन रस्सी के कारण आ गयी थी। मुँह के कपडे के कारण जो यातना मुझे हुई वह जाने दो अकलक ! यातना कही नही जा सकती। अंधेरी मे कुछ अफगान और फ्रन्टियर के लोग रहते थे और वह मुझे लेकर अपने भाइयो के बीच मे पहुँचा। जब तक दूसरी जगह नही मिल जाती है तब तक अहमद वही रहना पसद करेगा। मैने पूरी तरह परिस्थितियो से समझौता कर लिया था। ऐसा क्यो ? तुम पूछोगे मैने यह सौदा क्यो किया ? देखो, ऐसा पूछकर मूर्ख मत बनना, क्योकि मुझे तब लगेगा कि मैने उस समय गलत किया था। तुम यह क्यो नही सोचते अकलक ! कि क्या मै लौटकर वापस लाहौर जा सकती थी ? ससार का कोई पति यदि यह जान जाये कि उसकी पत्नी पहले किसी दूसरे की पत्नी थी, तो वह उसे सहन नही कर सकता। ठीक भी है, कोई भी पति फरिश्ता तो हुआ नही करता है, फिर वह व्यक्ति जिससे प्रेम नही, मात्र विवाह हुआ हो—शरीर का सौदा—जब वही शरीर पहले किसी का होगया हो और वह भी विधर्मी का—तो धार्मिक पति के लिए अकलक ! सहन कर जाना कभी सम्भव नही। समाज, धर्म, सबकी लाज एकमात्र स्त्री के शरीर पर आधार रूप से आश्रित है अकलक ! स्त्री का शरीर दूषित हुआ नही कि हमारे देवताओ के मुँह पर कालिख पुती नही ! मेरे विचार से महमूद गजनवी को मदिरो पर हमला करने के स्थान पर यही करना अधिक आसान पडता।"

मै देख रहा हूँ, कुहरे भरी शाम मे रजना घटनाओ से घायल, खून से लथपथ भरी है। अपनी जलती हुई उँगलियों से इस सञ्जा'काश मे जैसे लिख रही हो, सबको चिढा रही हो, कि तुम—हाँ तुम !! मुझे कुलटा, चरित्रहीन, नीच समझते हो—और मैं हूँ भी चरित्रहीन—परन्तु मै अकेली ही नही, तुम जिस समाज मे बैठे हुए हो वह पूरा का पूरा वेश्या का समाज है, दुर्गन्ध दे रहा है । जलते ज्वालामुखी मे तुम किसे दोष देने बैठे हो ? किसी भी दिन तुम्हारे पैरो की धरती, जिसे तुम इतनी विनयशील और शात समझते हो, सैलाब और भूकम्प बनकर टुकडे-टुकडे हो सकती है, और तुम उस दिन कहाँ रहोगे ?

तुम्हारी मान्यताएँ कहाँ होगी ? तुम्हारे चरित्र और धर्म का क्या होगा ?

"दिन, सप्ताह और मास व्यतीत हो रहे थे और मै देख रही थी कि अहमद कुछ भी नही करता है। जो अहमद मेरे बँगले के सामने स्टूल पर बैठा हुआ आने-जाने वालो पर रौब झाडने के लिए मूँछो पर ताव दिया करता था किन्तु मेरे आते ही 'सलाम मेम साहब' कहकर एडियो पर जापानी खिलौनो की तरह ऐंठ जाया करता था, अब मेरी बात का या तो उत्तर नही देता था या फिर कतराकर निकल जाता था। मेरी समझ मे यह नही आता था कि उसने मेरे जेवरो का क्या किया ! क्यो नही वह कोई होटल खोल लेता ? व्यापार शुरू करने के लायक तो पैसा था ही। किन्तु या तो वह बीडियाँ धौंकता रहता था या फिर चार बार कच्चा ही गोश्त चबाकर पानी पीकर सोता रहता था। और मै अहमद के बच्चे की पहली बार माँ बनी। उसकी चाल-ढाल से लगता था कि वह शायद इसी दिन का रास्ता देख रहा था। ऐसा क्यो, मुझे पता नही, मगर अब उसे अपने बच्चे को दिन भर खिलाते रहने का काम मिल गया था। मैंने उससे कई बार कहा कि वह क्यो नही कोई धधा करता ? पहले तो वह हँस दिया करता था, किन्तु बच्चा होने के बाद से तो हाथ चलाना शुरू कर दिया था। मुझे अब फिर अपने सवालो के उत्तर मे बात या जवाब के बजाय मार खानी पड रही थी। क्या स्त्री की बात का उत्तर तुम लोगो के पास सिवाय हाथ चलाने के ओर कुछ नही होता अकलक ? होगा भी, तुम्हारा उत्तर मेरे काम आज आने से तो रहा, फिर क्या करूँगी जानकर कि मार के अलावा और भी कुछ उत्तर है।

"अब वह धीरे-धीरे घर से गायब रहने लगा। कभी पूछने पर मालूम होता कि आज इतवार था और वह दिन भर ऐलीफैन्टा की गुफाओ मे ही पडा रहा। वह अब भयकर शराबी हो चला था। उसके साथियो से पता चला कि वह किसी फिल्म कम्पनी की गेट-कीपरी के चक्कर मे है। कभी सुनती कि वह पैसा कमाने गोआ गया है।

"मैंने एक दिन परेशान होकर, जब वह शाम को घर लौटा, तो कहा—

उसे मालूम होना चाहिए कि नसीम ऐसी वैसी नही है—अहमद उसके गहने लौटा दे।—

"मुझे ठीक याद है अकलक ! तब उसने मुझे रात के आठ बजे से मारना शुरू किया और मुझे कब तक मारता रहा यह पता नही परन्तु होश आने पर देखा कि अहमद अपने बच्चे और सब चीजो के साथ गायब है। मै उस समय दर्द मे कराह रही थी और पूरे शरीर मे इस समय इतनी पीडा हो रही थी कि जोड-जोड तक दर्द कर रहा था। जानते हो अकलक ! जब वह मुझे अपनी पेशावरी चप्पलो से और बेत से मार रहा था तो क्या कहता जा रहा था? कि मै वेश्या हूँ और उसे इस बात का हमेशा खेद रहेगा कि उसके एकमात्र लडके की माँ वेश्या थी—और वह भी काफिर !! उसने मेरे सिर के बाल काटकर बदसूरत कर दिया था। मेरी पीठ, जाँघो पर खून की गाँठे लम्बी-लम्बी पड गयी थी। एक बार फिर लगा कि परिवर्तन जैसे दुआर खटखटा रहा है। मुझे

लगता है कि यातना माता है और परिवर्तन उसका पुत्र ! देखते हो अकलक ! क्या तन की यातना से अधिक भयकर होती है मन की यातना ? नारी के पास जब मात्र तन नाम की ही एक चीज है और उसके लिए भी उसे क्या-क्या नही भोगना पडता; यदि मन का भी इसमे सयोग हो जाये तो क्या वह कभी एक दिन भी जी सकती है ?

"बगल मे एक चीनी जूते बनानेवाला रहा करता था, जिसकी बडी लडकी जब अहमद था तब भी कभी-कभी पहले आया करती थी। वह चीनी कदाचित् बहुत दिनो से ही हिन्दुस्तान मे बस गया था। पहले वह चीनी कलकत्ते मे रहता था, उसकी बीबी का चाल-चलन अच्छा नही था और पति की अनुपस्थिति मे वह पीछे से आँखे लडाती थी। पहले तो उस चीनी ने वही किया जो हर पति करता है—मारा पीटा, किन्तु जब इससे भी वह नही मानी, तब बेचारा अपने पूरे परिवार को लेकर बम्बई आया। थोडे दिन बाद वह चीनी औरत अपने पति को छोडकर शरीर बेचने का अपना अलग पेशा करने लगी। उसी वर्ष उसके किसी हिन्दुस्तानी कस्टमर ने उसे दूसरे से प्रेम करता देखकर छुरा भोक दिया—अपनी माँ की यह कथा उस चीनी की बडी लडकी ने मुझे बतायी थी, जिसका नाम था 'लीई'। उस 'लीई' ने मेरी उन दिनो सबसे अधिक सहायता की अकलक ! वह मेरे अहमद से हुए बच्चे को खूब खिलाती थी ओर हँसती हुई कहा करती थी कि जब यह 'खोखा' थोडा बडा हो जायगा तो सबसे पहला जूता 'लीई' का ही पहनेगा और वह जूता भी चीनी ढंग का होगा।—आज मै समझ पाती हूँ कि क्यो वह मेरी हमदर्द थी, कदाचित् वह मुझे भी अपनी माँ की तरह ही आवारा और वेश्या समझती होगी। और, क्या अकलक ! उसने मुझे मिथ्या समझा ? मै जानती हूँ तुम इस तेज भाले की तरह चुभनेवाले प्रश्न का उत्तर नही दोगे, किन्तु मेरे पास उत्तर एक नही है, अनेक है, और वे है मेरे शरीर पर अहमद द्वारा दिये गये प्यार के तोहफे, प्रेम के शब्द जो कि उसने अपने तरीके से मुझे भेट किये—यह बात ही दूसरी है कि उसके तरीके थे जूते, दगाबाजी और नफरत का थूक मेरे मुँह पर, देखते नही मेरे मुँह पर पचासो उँगलियो की मार के चिन्ह—गरम सलाखो की तरह !!"

ओफ, मेरा दिमाग जलते तवे की तरह होगया है । मै अब और नही सुनूँगा। अपना यह दृढ निश्चय रजना को चाहे अच्छा लगे या बुरा—सुनाना ही होगा, क्योकि जब वह मेरा विचार नही करती तो फिर मै ही क्यो इसका ख्याल करूँ ?

"रजना क्या तुम इस प्रसग को समाप्त नही कर सकती ?"

और मैने सोचा कि देखें वह अब भी मेरी ओर देखती है कि नही। किन्तु उसने मेरी ओर न देखकर आकाश मे शेष दो-एक उडती पतगो को देखना कदाचित् अधिक अच्छा समझा है । और शायद एकाध कटी पतग हिचकोले खाती हुए मकबरे के गुम्बदों के ऊपर तैर रही थी, घायल पाखी के मानी।

"अकलक ! क्या सुनना भोगने से ज्यादा कठिन काम है ? तुम सुनकर फेंक देना। मै यह नही कहती कि इस विष की गाँठ को बाँधकर तुम अपना भी जीवन विषमय

कर लो। अकलक ! मैंने भी जीवन प्रार्थना के श्लोक की भाँति प्रारम्भ किया था किन्तु आज मै देखती हूँ कि उसी उषाकाल के श्लोक को जिसे मैने 'जीवन' नाम दिया लोग सुनना भी पसद नही करते—उषा के श्लोको की गायिका साँझ होते-होते वेश्या बन गयी, है न ? —अच्छा, यह बताओ कि तुम्हे भी ऐसा सब कुछ जीना पडता तो तुम क्या, कितना और कैसे की सुधार गाँठे जोड-जोडकर जीते ? बूझो न ?"—

क्या वह मेरा उपहास नही कर रही है ? कागज पर शक्ले खीचकर ही क्या हम जीते है कि इस वर्ष हम इतनी शक्ले जीयेगे ? अगर यही हो पाता तो क्या हम घटनाओ और परिस्थितियो को तोड-मरोड नही लेते ? पर क्या कही ऐसा हो पाता है ? जब नही, तो फिर व्यग्य क्यो ? मै यह तो नही कहता, उस अहमद की भाँति, कि तुम वेश्या हो, न तो मै ऐसा सोचता ही हूँ और न कह ही पाऊँगा क्योकि वेश्या कोई व्यक्ति नही होता, वह तो पूरा वर्ग होता है, वह समाज होता है। जैसे कोई नही कहता कि मैंने खून किया है, वैसे समाज थोडे ही कहता है कि वह वेश्याओ का समाज है या नारकीय कीडो का वर्ग है। रजना को क्या कभी ऐसा समझना चाहिए था ? जो कुछ आज वह है उसके वर्ग की उपज है, उसकी अपनी नही।

"कदाचित तुम सोच रहे हो कि रजना अपने तर्क से अपने को छिपा रही है। किन्तु अकलक ! मै प्रतिदान मे नही चाहती। जब चाहने से बहुत कुछ मिलता और जिसके कारण इस नरक की सीमा पर भी आ खडी न होती, तब नही माँगा तो आज तुमसे कुछ माँगकर तुम्हे अपने इस नरक के धरातल पर बुलाकर क्या उजले वस्त्रित समाज की दृष्टि मे गिराऊँगी ?"

"रजना ! समाज की दृष्टि का मूल्य तुम भी मानती हो ?"

"देखती हूँ, तुम प्रसन्न हो रहे हो कि रजना समाज की दृष्टि की चर्चा कर रही है। हाँ, कुछ मानती भी हूँ, और इस मानने से बहुत कुछ अधिक तो है मेरा न मानना, मेरा बहुत बडा अस्वीकार—स्वीकारो तुम, या अन्य। मेरे पास तो है नरक की मशालो से आलोकित या जलता हुआ मेरा हाहाकारमय एक नकारात्मक अस्वीकार !! समाज की सज्ञा मानती हूँ सिर्फ दूसरो के हित-अहित तक। मेरे द्वारा दूसरा गिरा हुआ न माना जाये इसी अर्थ मे समाज की सज्ञा मेरे लिए है, किन्तु मेरे व्यक्ति के लिए तुम्हारे इस समाज की सज्ञा गौण, मिथ्या, प्रवचना एव चीटी सा न कुछ ! क्योकि पूरे समाज की तो नही, किन्तु जिस वर्ग से मै आती हूँ, जो कि उच्च वर्ग है—उसकी आत्मा को अगर रूप देने को कहा जाये तो जानते हो मै क्या रूप दूँगी ?—स्वय का, वेश्या का, नारी की देह का !! मेरे वर्ग का रूप और उसकी आत्मा, रजना के या उसके वासना के सडे अगो के सिवाय और क्या है अकलक ! बताओ ! बोलो !! इस वर्ग के लिए नारी माँ नही है, बहन नही है, मात्र शरीर है और जिसे ये रौधते है—नारी का शरीर, फिर वह कोई भी क्यो न हो, उनके पुरुष की उत्तेजना मात्र है !!"

टैरेस से नीचे उतरते हुए रजना ने कहा कि "अकलक ! आज कदाचित् जाना न हो पाये। पता नही सब तरह के व्यवधान मेरे ही लिए क्यो पैदा है, और मै न रहूँगी तो कदाचित् ये व्यवधान भी न रहेगे।"

कहते हुए रजना ने इस बार पहली बार बहुत ही मीठा हँसा। मेरा मन करने लगा कि कहूँ——

"नही रजना ! व्यवधान कैसा !! मे चला जाता तो व्यवधान मानता——फिर इस रुकने को व्यवधान मानूँगा तो रहूँगा कहाँ ?"

मै जानता हूँ कि मुझे अपने अनिर्णयी मन को लेकर कोई व्यवस्थित कार्यक्रम बनाने का अधिकार नही है। क्योकि ऐसा कोई पहली बार हो रहा है सो नही। हमेशा काम न करना पडे के लिए निमित्त खोजनेवाला व्यक्ति, कभी भी जिम्मेदार नही माना जाता, यह मेरी पत्नी एक बार नही बीसो बार कह चुकी है, और मुझे अपने पर गुस्सा भी आता है। फिर सोचता हूँ किसी दिन करारी ठोकर खाने पर हो सकता है सम्हल जाऊँ। किन्तु पगडडी पर चलनेवाला कभी दुर्घटना का शिकार होता मैने नही सुना। कही कोई वॉक-पन नही। प्रतिदिन समय से आफिस जाता हूँ, विधिपूर्वक विवाह किया है और नियमपूर्वक पिता भी बना हूँ। मेरी पत्नी ने नियमो की सूची भी बना रक्खी है, किन्तु मेरा सिद्धान्त है——प्रत्येक को अपना-अपना काम करने दो, न बाधा पहुँचाओ और न बाधा पहुँचने दो। मेरी पत्नी के सामने बैठकर मैने इस टाइमटेबल पर——जो कि इस समय मेरे बिस्तरे के सिरहानेवाली तिपाई पर खूबसूरत पेपरवेट के नीचे रखा है——हर ट्रेन के सामने तारीख और सभावना अनुसार घटे भी लिख लिये थे। आज तक मै नियमित चला हूँ किन्तु आज लौट जाना था और ठहर गया हूँ। मेरे इस ठहरने मे यदि कोई इस समय मुझसे पूछ बैठे कि क्या तुम रजना के प्रति आकर्षण नही रखते ? इसी आकर्षण ने तुम्हे नही रोका ?——मै जानता हूँ कि यह सत्य है, किन्तु मै इतने कटु सत्य का सामना न कर सकूँगा। क्योकि जानता हूँ यदि रजना को मेरे इस आकर्षण का आभास भी हो जाये तो——मै अपने इस वाक्य को पूरा नही करूंगा। किन्तु यह निश्चित था कि यदि रजना ने रुकने को न कहा होता तो मै अवश्य ही इस समय रेल के डिब्बे मे बैठा हुआ या तो सामने की सीट पर बैठे हुए लोगो के मुखो को घूरता रहता, या फिर रेल के डिब्बे मे "सावधान ! सावधान !!" करके जो लोगो की नीद हराम करने के लिए लिखा रहता है——पढता रहता। और उस पहली दुर्घटना के बारे मे सोचा करता कि कभी किसी ने खिडकी से सिर बाहर निकाला होगा और कोई घटना घटी होगी और तब रेलवम्लो को जाने कितने डिब्बे सफेदी के खर्च करके साफ चिकनी लकडी की दीवारों पर व्यर्थ की बच्चो की सी बाते लिखवानी पडी होगी और वह भी अशुद्ध हिंदी में। कदाचित् सब भाषाएँ शुद्ध लिखी जा सकती है, अकेली हिंदी को छोडकर। क्योंकि रेलवालों का ख्याल होगा कि हिंदी की लिपि और उच्चारण मे भेद जो नही है। मगर यह मै क्या व्यर्थ का ऊलजलूल सोच रहा हूँ।

यह पीछे के बरामदे से सटा हुआ कमरा है जहाँ इस समय मै लेटा हुआ हूँ। सिरहाने सागौन की बनी एक नक्काशी की हुई तिपाई है जिस पर मेरा सुबह का रग खाया अखबार और टाइमटेबल दोनो पेपरवेट के नीचे दबे हुए रक्खे है। ठीक पैताने की दीवार से सट कर एक उम्दा क़िस्म की आलमारी, जो जरूर ही बर्मा सागौन की होगी, जिसके एक पल्ले मे लम्बा किन्तु अडाकार शीशा लगा हुआ है, जो बतलाता है कि यह रजना के कपडो की आलमारी है। रजना साडी या सलवार पहनकर इसी शीशे के सामने खडी होती होगी। इस समय शीशे मे मसहरी का एक डडा और पीठ पीछे की दीवार का प्रतिबिंब उसमे गिर रहा है। वह दाहिने हाथ के कोने मे रखा है बडा सा ऊँचा लाइट-स्टैड—जिसका बादामी रग का शेड, बल्ब की रोशनी के कारण बादामी ग्राउडग्लास की तरह लग रहा है। ठीक स्टैड के पास ही कपडे मे लिपटी हुई कोई लबी सी चीज एक खूँटी पर झूल रही है जो किसी भी अपरिचित को बता सकती है कि वह या तो सितार है या फिर वीणा है, और जो कई दिनो से नही बजायी गयी है, इसके प्रमाण मे कपडे पर धूल की हल्की तह बल्ब की रोशनी मे भी दिखायी दे रही है। कपडो की आलमारी के ठीक ऊपर एक सुदर बच्ची का चित्र टँगा हुआ है जिसकी ठोडी और आँखे साफ बताती है कि यह रजना की किसी बच्ची का चित्र है। हो सकता है यह रजना की वही रिनी हो। रजना के मन को रिनी ने आज तक इतना प्रभावित कर रक्खा है कि रजना को उसे चित्रित करवाना पडा है। किन्तु यह कोई भी किसी की भी बच्ची हो, मुझे इससे मोह हो रहा है—और मै कल्पना कर रहा हूँ कि यह बच्ची इस समय मुलायम बिस्तरे पर अपनी छोटी नरम-नरम उँगलियो से मेरे इस गद्दे मे छेद बना रही है और मै बहुत प्रसन्न हूँ, और प्रसन्नता मे मेरी आँखे छोटी हो जाया करती है।

छत के बीचोंबीच एक बडी सी कागज की लालटेन, जो कि बनावट से चीनी मालूम होती है, टँगी हुई है और आकार मे अष्ट पहलू है। इस लालटेन की आठो छोटी दीवारो पर कुछ चीनी शक्ले और कुछ रामलीला के चित्र बने हुए है। लालटेन मे इस समय मोमबत्तियो की जगहे खाली है। हो सकता है इस लालटेन के पीछे भी रजना का कोई बहुत बडा भेद, रहस्य बनकर मौजूद हो और जो कभी जलता रहा हो, किन्तु इस समय इसमे प्रकाश ही नही बल्कि यह उपेक्षित कर दिया गया है, इसका भी भाव स्पष्ट रूप से दिखायी पड रहा है।

चारो कोनो मे चार, सारस की तरह पतले लम्बे ऊँचे स्टैन्ड जिन पर सफेद चीनी मिट्टी के बने हुए गाँधी, बुद्ध, ईसा और एक किसी चीनी सत के बस्ट रखे हुए है। मुखो की बनावट, रेखाओ के उतार-चढाव यह स्पष्ट बताते है कि इनका मूर्तिकार निश्चित रूप से चीनी रहा है, तभी तो लगता है जैसे ये चारो वही चीन देश मे पैदा हुए हो।

दरवाजो और खिडकियो पर एकदम लाल सुर्ख रेशमी परदे सीधी लबाई लिये हुए टँगे है। जिनमे नीचे की ओर बहुत ही हल्के छोटे घुँघरू टँके हुए है, जो बताते

है कि जब कभी ये हवा के कारण झूलते होगे तब इन घुँघरुओ का मीठा स्वर वातावरण को सगीतमय बना देता होगा। दायें हाथ के सिरहाने की तरफ किताबो की दो आल्मारिया, एक छोटा रैक जिस पर मीने के कप का एक फूलपात्र रक्खा हुआ है। मै नही जानता कि अग्रेजी साहित्य से एम ए करनेवाली और जीवन को इतने नीचे उतरकर देखनेवाली रजना के क्या प्रिय विषय है तथा किन लेखको की ही कृतियाँ इसे पसद है, और पढकर क्या करती है ? किन्तु यह जानता हूँ कि शीशो के पल्लो के भीतर से चुडी उतार रखी हुई पुस्तके दिखायी दे रही है। रजना ने उन्हे पढा है कि नही यह मै नही कह सकता।

इस कमरे से सटा हुआ ही उस गुसलखाने का दूसरा दरवाजा इस कमरे मे आता है, जहाँ सुबह मैने गुसल लिया था और अब इस समय शायद रजना गुसल कर रही है, क्योंकि टेप से पानी गिरने की आवाज बराबर आ रही है। साथ ही बहुत ही मद मीठी आवाज मे कभी-कभी किसी बँगला गान की पक्ति। यह रजना नाम की स्त्री मीठा गाती है, कदाचित् पहले बहुत ही मीठा गाती रही हो। मेरे मन मे रजना को लेकर बहुत विचार आ रहे है। साबुन के झाग से भरा हुआ चीनी का टप, उसके साबुन भरे हुए काले लहराते हुए बाल, वे पुष्ट किन्तु गोरी उजली मुलायम बाँहे और बडे गुलाब की तरह उसका आरक्त बदन—मुझे इस समय आकर्षित कर रहे है यह मै जानता हूँ। मै मानता हूँ कि मुझे ऐसा नही सोचना चाहिए परन्तु विचार तो अपने अनावृत रूप मे ही हमारे दिमाग मे आते है—बोलते समय ही हम विचारो की अनावृतता काट फेकते है और उन्हे वस्त्रित कर देते हैं। क्योकि बोलते हम दूसरो के लिए हैं पर सोचते हम अपने लिए है। सभ्य हम दूसरो के लिए हुआ करते है, अपने लिए हम दिगम्बर तथा नियमहीन होकर सोचते है। बाह्य सौजन्यता अतर में अनावृत भी हो सकती है।

दरवाजा खोलकर रजना अपना स्लीपिग सूट पहने निकली है, जो ढीले गाउन की तरह का है और जिसका नीला रग है। अपने बाल कंधे पर फैलाये तौलिये से हौले-हौले पोछते हुए आकर एकदम् सामने खडी हो गयी है। बाये हाथ पर जो ड्रेसिग टेबल है उसके सामने बैठकर अब वह कघी से अपने इन केशो को, जो अधकार की तरह तो अब काले नही रहे, उनमे चार चमकते सफेद बालो की चाँदी है, जमा रही है। उसके बाद रजना का रूप फिर धुला-पुँछा, ठीक उसी तरह से लगेगा जैसे रातभर ओस-धुला आरक्त कमल ! !

मै जानता हूँ कि जब कोई स्त्री इस तरह शृँगार कर रही हो तो पुरुष का धर्म है कि वह वहाँ से उठ जाये। मुझे प्रसन्नता है कि व्यवहार और शिष्टता की जो बाते मुझे अवसरो पर सदा विस्मरण हो जाती रही है, आज सहसा याद हो आयी है, और मै इस शिष्टता को अभिव्यक्त भी करना चाह रहा हूँ—

"क्षमा करना रजना ! मै उस कमरे में चला जाता हूँ। तुम निश्चिन्त होकर शृंगार कर सकती हो।"

मैने अपने दोनो पैर पलग के नीचे रखते हुए अपनी चप्पलों मे डाल दिये है और

कुर्ते की जेबो मे हाथ डालकर खडा हुआ रजना के एक छोटे से उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा हूँ और तब दूसरे क्षण मै इस दरवाजे के लाल पर्दो के बाहर होऊँगा, जहाँ बरामदा है, झूलती हुई बेले है। बेलो मे कोमल छोटे-छोटे फूल लगे हुए हैं, और जहाँ खडे होकर लॉन के छोर पर लगे अशोक, यूकेलिप्टस देखे जा सकते हे। उन पेडो के मुकुट जैसा नीला आसमान, जिसमे बडे-छोटे तारे वैसे ही चमक रहे होगे जैसे कलदार रुपये, अठन्नी, चवन्नी हो। रजना ने बालो और मुँह को तौलिये से अतिम बार पोछते हुए हल्की मुस्कराहट से भरा एक प्रश्न किया—

"सचमुच अकलक! इस शिष्टता का अनुभव करते हो?"

और वह ठहाके के साथ हँस पडी है।—तो क्या बाहर जाने की बात मिथ्या थी? क्या मैने ऐसा नही चाहा था?

"किस उलझन मे पडे हो अकलक! जाने दो शिष्टता को। शिष्टता का या तो पूरी तरह निभाना ही ज्यादा अच्छा होता है या फिर बिल्कुल ही नही। यह मै जानती हूँ कि शिष्टता तुम्हारे बस की कभी नही थी। यह कोई आवश्यक है कि सिर्फ इसी समय, आज ही के लिए और वह भी केवल मेरे ही साथ अपनी शिष्टता दिखाओगे? बैठो, कही भी तुम्हे भागने की कोई आवश्यकता नही पडेगी। शृगार करके मुझे अब किसी से छुपाना तो है नही कुछ। और जब मन नही छुपा पा रही हूँ तुमसे तो शरीर की इस जूठन को छुपा भी लूँ तो क्या होगा? और फिर मुझे कोई कपडे तो बदलना है नही—जैसे बाल बँधे हुए, वैसे फैले हुए। सामने पाउडर नही लगाऊँगी, परन्तु पाउडर लगा चेहरा तो दिखाऊँगी ही— तब फिर क्या फर्क पडता है अकलक? शायद तुम्हे भी कभी जरूरत पडे। देख सुन लो कि क्यूटेक्स कैसे लगाया जाता है और लिपस्टिक ओठो की चीज होती है, नाखूनो की नही?"

और वह हँसते-हँसते हँसी की फूल बनती जा रही है।

"राजनीतिक आदमी जो हो, जेलो मे जिन्दगी काट दी है। गवर्नमेट और स्टेट, तानाशाही और साम्यवाद का अतर जानते होगे, किन्तु ब्रेसरीज और ब्लाउज का अतर न जानना तुम्हारे लिए कोई बडी बात हो, सो नही है। हम तो औरत ठहरी भाई! एक शरीर को सुबह से धोते-धोते शाम हो जाती है, तब जाकर कही हम शाम को घर से बाहर निकलने के योग्य हो पाती है। कभी तुम्हे हमारी जगह होना पडता तो मालूम होता कि कितनी मुश्किलो से हम लोग तैयार हो पाती है। रगो का मेल, साडियो का चुनाव, ब्लाउज की स्मार्ट कटिग, ब्रेसरीज फिट है कि नही, नाखूनो की लम्बाई और उन पर क्यूटेक्स, ब्रशिग, पाउडर—रूज—और अकलक! जाने कितनी आफते!! इस सब पर अगर कोई पुरुष उपेक्षा करके हमे न देखे, तो जानते हो उससे बडा अपमान हमारा और कुछ हो ही नही सकता। हाँ अकलंक! कभी प्राइमरी स्कूल के ब्लैकबोर्ड के डस्टर याद आते है? बिल्कुल वही हाल हम लोगो का भी समझो—हम उस समय औरत थोडे ही होती

है—खुशबूदार पाउडर का डस्टर समझ लो ! ! ढेरो पाउडर की तहे, जिनके नीचे हड्डियो पर मढा हुआ गाल का पीला-पीला चमडा—जिसे कभी तुम वास्तविक रूप मे देख लो तो नफरत हो जाय अकलक !—फिनिश्ड फॉर्म होता है रोज शाम को हमारा । हमे छुआ नही जाता, देखा भर जाता है ।"

और वह हँसती जा रही है, उसका शृ गार भी समाप्त होगया है । ड्रेसिग टेबल के शीशे मे उसका एकदम गोल भरा चेहरा कैसा खूबसूरत लग रहा होगा ! रजना मे स्पष्ट-वादिता तो सीमातीत है ।

मै इसकी इन बातो से कोई अच्छी धारणा बना पाऊंगा सो नही है । जो व्यक्ति स्वय को, अपने वर्ग को यथार्थ की इस सीमा तक ले जाकर धिक्कार सकता है उसमे शक्ति हो—किन्तु विध्वस की । इसीलिए रजना ने निर्माण के नाम पर क्या किया ?

रजना इस समय मेरे सिरहाने आकर मसहरी का डडा पकडकर खडी होगयी है। उसका नीला रेशमी स्लीपिग गाउन जो कि कितनी ही लहरो के साथ कमर के यहाँ से ढीला होकर धरती तक झूल रहा है । कमर मे उसी कपडे का बेल्ट जिसमे पीठ पर एक बडी सी 'बो' बनी हुई है । सामने हल्के तौर पर ढीली गॉठ बंधी हुई है । कमर के ऊपर का भाग गाउन से एकदम सटा हुआ साफ दिखलायी दे रहा है । कितने सॉचे मे ढला हुआ उसका यह पूरा शरीर एकदम ऐसा लग रहा है जैसे सगमरमर मे से किसी ने एक-एक इच तराशते समय बहुत सोचकर, नापकर, सॉस रोककर उत्कीर्ण किया हो। उसके दोनो स्तन गाउन के नीले रग मे बॅधकर दो मुँदे नीलकमल की भॉति लग रहे है। दोनो बॉहो का चिकनापन अपनी पूरी गोलाई के साथ कितनी आसानी से शरीर से अलग होता हुआ लग रहा है—जैसे दो पिघले मोती के गोल प्रपात, शात भाव से पहाड से अलग हो रहे हो। रजना के गले मे इस समय सोने का बहुत बारीक लॉकेट चमचमा रहा है—और इन सबके ऊपर उसका मुँह ऐसा लग रहा है जैसे मोरपख की छाया मे शरद्काल का प्रथम उज्ज्वल नील चद्रमा ! ! कान मे दो लाल टॉप्स केशो की पृष्ठभूमि मे दो लाल मगल तारो की भॉति लग रहे है।

आकाशे सिहासने उज्ज्वल नील चद्रमा को दो अरुण मगल नक्षत्र चादनी के चॅवर डुला रहे है।

"क्या देख रहे हो—रजना को ? क्या कभी पहले नही देखा ?"

और उसका गोरा चिकना मुलायम हाथ मेरे कंधे पर आकर रुक गया, जैसे किसी हरे द्वीप के कधो को जलमृणाल की चिकनी बॉहे छू रही हो।

"कुछ नही रजना, बैठो ।"—

और मै जानता हूँ कि मै रजना के इस प्रश्न से एकदम सटपटा गया हूँ, मुझे इतना तक याद नही रहा है कि मै क्या बोल गया हूँ। सुबह का कहा हुआ वाक्य मै दोहरा भी सकता हूँ, किन्तु इस क्षण की कही बात मुझे याद नही। रजना को इस रूप मे देखना मेरे लिए वैसा ही

महत्वपूर्ण है जैसा कि चद्रमा तक पहुँचना। मै जानता हूँ यही मन की बात अगर मुझे कहनी पडे तो मै कदापि नही कह पाऊँगा किन्तु न कहने से भी सत्य सत्य रहता है। मै रजना को प्यार करता हूँ, किन्तु क्या यह कह सकता हूँ ?

"रजना जी !"—

और यह कहकर मै रजना के मुँह की ओर देख रहा हूँ। कधे पर रखा हुआ उसका वह हाथ, वे कनेर की पत्तियो की तरह लम्बी उँगलियाँ अब मेरे बालो मे घूमने लगी। मेरी पूरी देह मे हजारो बिजलियाँ कौधती सी लग रही है—और मै पागल हो रहा हूँ। रजना कदाचित् रजना की ही भाँति सुन्दर है और मेरा प्यार निश्चित रूप से इसे नही पा सकता है। मुझे अपने प्यार को रजना के इस हाथ को चूमकर अभिव्यक्त कर देना चाहिए। जब वह मुझे अपना अकलक मानती है, तो क्या वह अपने अकलक द्वारा हाथ चूम लेने पर अप्रसन्न होगी ? और मैने अपने सिर पर चलता हुआ हाथ ओठो पर लाकर बडी जोरो से चूम लिया। मेघ के ओठो ने चन्द्रमा का चुम्बन किया—शारदीय नीला चुम्बन !!

उसने एक क्षण बाद ही मेरे ओठो से अपना हाथ छीनते हुए हटा लिया। स्वस्थ होते हुए रजना बोली—

"अकलक ! मैने अपना हाथ इसलिए नही हटाया है कि मुझे कुछ बुरा लगा हो। ना अकलक ! किन्तु मै अब इसके लिए पात्र नही रही, इसकी पात्रा तो मर चुकी . "

उसने बहुत तेजी से अपने दोनो घुटने गाउन के अदर मोडकर मेरे सामने मुँह करके पलग के नीचे ही बैठते हुए कहा—

"अकलक ! पिछले मे से कुछ भले ही लौटा दूँ किन्तु अब कुछ भी नव दे मकना मेरे लिए सभव नही।"

और उसकी दोनो हथेलियो मे मेरा मुख ठीक वैसे ही लग रहा होगा जैसे कमल की अजलि मे जल की कुछ छोटी-छोटी रग लहरे !! और मै उसकी आँखो मे वैसे ही झाँक रहा हूँ जैसे किसी नदी के प्रसन्न पानी मे उसकी तह मे चमकनेवाली सीपो और रगीन पत्थरो के देखने के लिए झाँका जा रहा हो।

वह अब तेजी से उठ खडी हुई है और झटके के साथ परदा ऊँचा करके वह केवल इतना भर कह सकी है—

"स्वस्थ होने की चेष्टा करो अकलक ! मै आती हूँ।"

उसका आदेश परदे के बाहर से भीतर आया है और परदा हिल रहा है, जैसे परदा हिलते हुए कह रहा हो . 'सुना तुमने ?'

मुझे जिस सीमा तक आत्मग्लमनि होनी चाहिए उस सीमा तक नही होरही है। इसका कारण, बिल्कुल नही जानता। रजना ने कदाचित् न तो बुरा ही माना है और न इसका स्वागत ही किया है। वह फिर बहुत तेज आयी है और वही परदे के पास खड़ी

होकर परदे को रॉड मे खिसकाते हुए बोल रही है—

"उठो अकलक ! मैंने जल्दी खाने के लिए कह दिया था, क्योकि तुम तो जानते ही हो कि मैंने प्रथम तो कहना समय के अदर नही किया और दूसरे तुम्हे आज शाम कानपुर जाने से रोका, पता नही कल जाने क्या हो— कह पाऊँ या न कह पाऊँ, यह बोझ तो हे ही। मै तो इसे ऋण मानती हूँ, पहले शरीर से चुकाना था, चुका दिया—अब मन का ऋण रह गया था, चुकाना है ही—फिर मोह कैसा ? ऋण कन्या है, जो दूसरे का स्वत्व है।"

और हम लोग अभी अभी खाना खा कर लौटे है, डिनर के पूरे समय तक यह रजना, यहाँ लखनऊ मे क्या करती है, कौन-कौन आते है, सब बताती रही है । अधिकतर वह पढती रहती है । उसके पति जास्टिन के पैसो के कारण वह आर्थिक दृष्टि से निश्चिन्त है। शिष्टभेटो तक मे वह कही नही जाती । उसने अपने आप को इस सीमा तक काट रक्खा है कि गवर्नरो की पार्टियो मे मुश्किल से एकाध बार ही गयी हो। किन्तु जब भी वह कही गयी है लोगो ने उसे ठीक वैसे ही आश्चर्य से देखा है जैसे किसी ने सौदर्य पहले नही देखा था, हॉ नारी अवश्य देखी थी। कुछ दो-चार लोगो ने रजना से परिचय को घनिष्ठता मे परिणत भी करना चाहा, किन्तु वह इस सबका मतलब न जानती हो सो नही। इसीलिए रजना ने हमेशा बीमारी या तटस्थता को ही अपने और समाज के बीच मध्यस्थ रक्खा है । तब जाकर रजना को आज थोडा सा अवकाश मिल पाया है कि सोच सके कि रजना एक व्यक्ति भी है और अब जिसके निकट इन सामाजिक शिष्टताओ एव वाक्चतुराइयो का कोई अर्थ नही रह गया । मेरी सिगरेट जलाते हुए वह कह रही है—

"तुम मेरी चिन्ता न करो अकलक ! मै इसी भॉति तुम्हारे सिरहाने कुर्सी पर बैठे हुए सुनाती जाऊँगी और तुम सुनोगे।"

मै इसको अभद्रता मानता हूँ कि कोई बैठा हुआ आपसे बाते करे और आप पैर फैलाये सुनते रहे, विशेषकर सुनानेवाला कोई महिला वर्ग का हो। किन्तु मै यह भी जानता हूँ कि रजना की बात काट पाना अब मेरे लिए सम्भव नही है ।

"सुनो अकलक ! मै जानती हूँ कि मै यह सब कोई असाधारण या विशेष समझकर तुम्हे नही सुना रही हूँ, क्योकि यदि तुम किसी भी नारी की ऊपरी परागी सतहो को खरोचकर देख पाओ तो हमारे वर्ग की प्रत्येक नारी मे मेरे जीवन की अधिकतर घटनाओ से तुम साम्यता पा जाओगे । किन्तु कई बार हम छोटी-छोटी बाते सुनना पसद करते है। वह मेरा पति अहमद अपने बच्चे को लेकर कहाँ चला गया, मुझे आज तक पता नही चला। मेरे लिए इस तरह किसी का सहसा आ जाना और फिर चुपचाप चला जाना अब बहुत छोटी घटना हो चली थी। कोई क्यो आ जाता है का कारण भी मुझे स्पष्ट मालूम था, चाहे वह अपने इस प्रकार के आगमन के लिए कितने ही बडे आदर्श की दुहाई क्यो न देता हो— और फिर एक दिन सहसा वह क्यो चला जाता है का कारण भी मेरे निकट पानी से धुली चिकनी पत्ती की तरह स्पष्ट था—तभी तो मन बारबार खरोच उठता था पर घाव नही बनता था।

"बम्बई मेरे लिए बिलकुल अजनबी रही हो ऐसी बात नही थी। क्योकि क्या लाहौर, क्या बम्बई और क्या लखनऊ, जीवन के नाम बदले मिलेंगे, रूप क बाह्यावरण का अतर

हो सकता है, किन्तु आत्मा वही। मैं जिस मकान मे थी वह मेरे लिए बहुत था और अब मैंने हाथ का काम सीखकर रोटी कमाने की सोची, क्योकि पढाने का काम मिलता नही। सिफारिश और सर्टिफिकेट कहाँ से लाती! लीई मुझे जूता बनाने का काम इसलिए नही सीखने देना चाहती थी क्योकि एक तो सबके पैरो मे झुकते फिरो और फिर दूसरे उसमे जूतो के लिए चमडा बनाना बहुत ही गदा और दुर्गन्ध का काम था।

"लीई ने मुझे कागज से फूल कैसे बनाये जाते है, यह सिखाया। दिन भर पतग के कागजो के तरह तरह के फूल और आकाशदीप बनाये जाते थे। दूसरे पहर होने पर उन सबकी गिनती करती कि मैंने कितने बनाये है और उसने कितने बनाये है। वह उन सबको लेकर कभी चौपाटी, कभी फोर्ट आदि जाया करती थी। मैंने उससे साथ ले चलने के लिए बहुत कहा मगर वह जाने क्या सोचकर कभी भी मुझे बाहर ले जाने के पक्ष मे न थी। उसे लौटते मे रोज रात के नौ या दस बज जाते थे और उस समय वह बडी खुश होकर बताती थी कि बाजार मे फूल कम क्यो बिकते है। फूल बगाली अधिक खरी-दते है या महाराष्ट्री। गुजराती औरते आकाशदीप खरीद लेती है किन्तु फूल नही खरीदती। अगर फूलो की डालियो के स्थान पर गुलदस्ते बनाये जायँ तो अधिक बिक्री बढ सकती है। हिन्दुस्तानी लालटेन से ज्यादा अच्छी और मजबूत चीनी लालटेन होती है, पर भद्रलोक इन चीनी लालटेनो को खरीदकर घर ले जाकर ड्राइगरूम मे लगाना ज्यादा पसद करते है, इसलिए लालटेन अधिक बिक सकती है।

"इस तरह की आलोचना के आधार पर ही लीई और मै दूसरे दिन चीजे बनाया करती थी। गर्मियो मे हम लोग बाँस की खपच्चियो को हल्दी से रँगकर उन्हे रेशमी तागे से ढीले-ढीले बाँधकर पखे बनाया करते थे और लीई इन पखो को अधिक सुन्दर बनाने के लिए उनमे चीनी पेड, पौधे, फूल, पत्तियाँ बनाती थी और मै टावर या वशी, हाथी का मस्तक, हरिण का सिर आदि बना दिया करती थी। इस प्रकार लीई कहती थी कि यदि साथ मे और कोई भी रहे तो मुझे बेचने मे भी आसानी हो और चीजे ज्यादा बिके, क्योकि कुछ हिन्दुस्तानी लडके और आवारा उसे अकेली देखकर घूरते है और सीटियाँ बजाते है। जब कभी कोई आखो से इशारे करता है तो—

'नसीम बहन, मेरे तो कान तक लाल हो जाते है और मुझे वहाँ से जल्दी ही भागना पडता है।'

"फिर एक जगह निश्चित न होने से लीई कहती थी कि गाहक भी रास्ता नही देखते है, समझते है इन घूम घूमकर बेचनेवालो का क्या विश्वास! मैंने लीई से एक दिन कहा कि अब से मै भी तेरे सग फूल बेचने चला करूँगी। बेचेगी तू और मैं तो उठाकर चलूँगी।

"और इस तरह हम घर से ठीक तीन बजे निकलते थे। लीई ने पहले तो मेरे चलने पर आपत्ति की। मै कारण जानती थी कि वह क्यो मना करती है। मगर जब मैंने उससे कहा कि जिस डर से—कि मुझे जो भी देखेगा वह फिर हम लोगो की बाडी के चक्कर

काटेगा—नही जाने देना चाहती, उसके लिए मैंने कह दिया था कि मैं बुर्का पहनकर चला करूँगी। तब वह भी मान गयी क्योकि वह जानती थी कि यहाँ मुसलमानो मे बुर्का ही पहना जाता है, यद्यपि वह भी चीनी मुसलमान थी और कदाचित् इसी नाते वह मुझे बहुत प्यार और स्नेह करती थी।

"मगर मैं अनुभव कर रही थी कि मुश्किल से कभी दो रुपया और कभी ढाई रुपया मिलता था और हम लोगो को फोर्ट, चौपाटी, इडिया गेट, या फिर दूर-दूर तक समुद्री तट पर बैठे हुए लोगो के पास तक जाना पडता था और लौटने मे रात बढ जाती थी। किन्तु सिवाय इसके और कोई रास्ता नजर भी नही आता था। अडोस-पडोस के कई लोगो की निगाहे मुझ पर थी, किन्तु लीई से जब कोई पूछता था कि इस नसीम का पति अहमद कहाँ और क्यो चला गया है और कब लौटेगा, तब लीई अपनी बटनो की तरह छोटी गोल आँखे घुमाते हुए कहा करती थी कि वह अहमद अपने घर ईद मनाने गया है और जल्दी ही आ जायगा।

"नारी बिना तुम्हारी सहायता के घर से नही निकल सकती। तुमने उसे 'देवी' 'देवी' कहकर किसी भी काम के योग्य नही रक्खा। तुम जब न रहोगे तो वह अपना जीवन कमाने के लिए साहस के साथ सडको पर नही आ सकती। उसे पूरी दुनिया और स्वय के बीच एक माध्यम, आवरण, दूरी की आवश्यकता होगयी है अकलक! और जानते हो नारी जब कभी तुम्हारी बनायी परम्परा को तोड तुम्हारे इस माध्यम, आवरण को नही मानना चाहती तब उसे जीवन चलाने के लिए शरीर, जाँघे, बाँहे—सब, शरीर का एक-एक अग, अपने आप को पूरा का पूरा नीलाम करना पडता है अकलक! चार आने के पैसे तक की कीमत पर सम्पूर्ण नारी समझौता करती है। चार आने के पैसो से पेट नही भरा करता इसलिए एक रात मे कई बार यह नीलामी होती है—रात भर अकलक! तुम्हारी देवी का शरीर—बम्बई, लाहौर, लखनऊ, कलकत्ता सब जगह चार आने मे थोक माल की तरह गोरा, काला, मोटा, दुबला, सस्ता, महँगा, रोगी, कोढी, तुम खरीदने जाते हो। तुम्हारे देवी-देवताओ का यह समाज, नारी के गर्मी-सुजाक से भरे चार आने के शरीर से ज्यादा क्या है? तुम्हारी सस्कृति, कला, सभ्यता सब की सब चार आने के नीलामी वाले मुहल्लो मे टाट के परदो के पीछे गदी नालियो मे बिल्व-पत्र और निर्माल्य की तरह है। जिसकी नीलामी हो रही है वह 'देवी' है और हँसता हुआ नीलामी के चार आने फेकनेवाला 'देवता' है।

"अकलक! यह वेश्याओ का समाज नही है तो और क्या है? तुम्हे माँ नही चाहिए, तुम्हे बहन नही चाहिए, तुम्हे पत्नी नही चाहिए—तुम्हे तो चाहिए वेश्याएँ, जो कहाँ नही है?"

वह कुर्सी से उठकर पूरे कमरे मे तेजी से चक्कर काट रही है। लैम्पस्टैड की रोशनी मे उसकी छाया तक ऊँची लग रही है, और ऐसा लग रहा है कि रजना और दूसरे

उसकी छाया, दोनो ही इस घर पर, घर मे घिरी हुई इस रात पर ओर इस रात मे उसकी कहानी के श्रोता 'मै' पर, सब पर हावी हो रही है।

मै रजना के इस रूप की कभी प्रशसा नही कर सकता हूँ। मै बोलकर यह जता देना चाहता हूँ।

"रजना! तुम यह नही मानती कि जो कुछ तुम कहती हो वह आशिक सत्य है?"

और वह मेरी बात पर कितने जोरो से ठहाका मारकर हँस पडी है कि कदाचित् उसकी रिनी जो कि चित्र मे बनी हुई है—डर गयी हे, और अब की बार रजना फिर हँस दे तो वह रिनी अवश्य ही रो पडेगी।

"अकलक! आशिक सत्य, पूर्ण सत्य, अर्ध सत्य, सत्यासत्य, मिथ्या सत्य—यह क्या भाषा तुमने सीख ली हे कि बात न कहकर आदर्श बोलते हो। वह आदर्श, जिसने मेरे, तुम्हारे, सबके शरीरो को काटकर आफिसो मे, बाजारो मे, चद रुपयो के मोल के बदले टॉगकर लटका दिया हे। पहली तारीख को इन टुकडो मे थोडी सी कम्पन होती है, बाकी के दिन वही कसाई के मे गोश्त की हालत—मृत, मौन!! कुछ भी बना लीजिए, कीमा, कबाब, दोप्याजा। मै कहती हूँ अकलक! कमरे मे बैठकर सत्य जीवनभर खोजोगे तो भी हाथ न आने का।

"किन्तु मे भूल करती हूँ। मेरा लेनदेन ही जब समाप्त हो चुका तो फिर यह दोष और आक्रोश कोई अर्थ ही नही रखता। क्षमा करना अकलक! पुराने घावो मे अभी तक ऐसा लगता है कि दर्द हो रहा है।

"मेने तब धीरे-धीरे छोटे चित्र बनाने शुरू किये, जिन्हे हम गर्मियो मे बेचे जानेवाले पखो के साथ बेचा करते थे। जानते हो भयकर गर्मी मे भी कोई मेरे शरीर का भाग न देख ले इसलिए मे हाथो मे दस्ताने, पैरो मे मोजे ओर बुर्के से अपने आपको पूरी तरह ढँके रहती थी। क्योकि लोगो का उसूल तो तुमने भी सुना ही होगा कि गोरे पैरो पर से ही तो 'चिडिया' की चोच पहचानी जाती हे—और इसलिए अपने आपको ढँकना पडता था।

"जब रात को लीई भी अपने घर चली जाती थी तो उस 'खोली' के दरवाजे बद कर पड जाया करती थी। रात को बाहर इसलिए नही सो पाती थी कि जाने कब और कोन · और तब जिदगी उस गर्मी भरे कमरे मे फिल्म की तस्वीर की तरह गुज़रती थी।

"मेरे सामने बिलकुल अँधेरा था। आशा के नाम पर मोमबत्ती के प्रकाश का नाम भी नही था। कभी-कभी सोचते-सोचते रोने लगती थी, और रोते-रोते थककर नीद भी आ जाती थी। पन्द्रह, बीस मील रोज चलकर पैरो मे दुखन, ऐठन, सब भर जाती थी—तब जीवन की इस दुखन का कोई अत दिखता था?

"रोज़ मुझे चकलो से बुलावे आते थे। खूँख्वार बुड्ढी कुटनियाँ—जब मै बॉस की

जितना कभी भी सहन नही किया जा सकता है ।

"रजना ! रजना !!"

और मैंने उसके बालो मे बहुत ही प्यार से अपनी उँगलियाँ डाल दी है। आज दोपहर तक की पूर्ण अपरिचिता, इस समय मुझे ऐसा लग रहा है कि अगर मेरे निकट कोई हो सकती है तो वह है रजना !! सिवा इस रजना के और कोई नही हो सकती—रजना, मेरी सब कुछ है !!

"क्षमा करना, अकलक ! कभी-कभी ऐसा तो हो ही जाता है । अपने मन का अब मै कभी विश्वास नही कर पाती हूँ। मैने उन बचे हुए रगो से अपनी बच्ची का चित्र बैठे-बैठे पूरा किया । तुमसे अब दुराव ही क्या रहा अकलक ! क्योकि नारी तुमसे तन का दुराव चाहे न करे, किन्तु मन का दुराव वह सदा ही करती हे । मन का दुराव वह इसलिए करती है क्योकि पुरुष को जिस दिन भी नारी के मन का एक भी सकल्प-विकल्प ज्ञात हो जाय वह कभी भी उसे सहेज कर नही रख सकता। और आज मै तुमसे तन का दुराव भले ही कर जाऊँ, किन्तु मन का दुराव नही कर रही हूँ। जिस दिन वह चित्र पूरा हुआ तो जानते हो मुझे कैसा लगा—जैसे मै फिर से गर्भवती हुई और अपनी इसी रिनी को फिर से जन्म दिया हो। मेरे सारे बच्चे अलग कर दिये गये मुझसे, किन्तु इस चित्र का कोई भी क्रूर पिता नही था जो इसे मुझसे ले जाता। यह केवल माता की ही सन्तान थी। मैंने चित्र को आनेवाले सभी सघर्षो मे अपने प्राणो से अधिक मूल्यवान समझा। आज मै कह सकती हूँ अकलक ! कि मै भले ही नारी के रूप मे चरित्रहीन मानी जाऊँ, किन्तु मै इसकी माँ के रूप मे वैसी ही पवित्र हूँ जैसी कि कोई माँ होती है । और यह रिनी मेरे साथ हमेशा उसी तरह रहती है जैसे कगारू अपनी थैली मे अपने बच्चे रखता है।"

अब रजना स्वस्थ होगयी है । उसके चेहरे पर उत्तेजना और शाति ठीक उसी तरह स्पष्ट देखे जा सकते हे जैसे सगम के सधिस्थल पर गगा ओर यमुना का अलग-अलग जल ।

"मै एक दिन बिस्तरे पर लेटी हुई तीन-चार दिन पुराना कोई अखबार देख रही थी। उस अखबार मे एक चकलेवाली मेरे लिए किसी सेठ की भेजी हुई नकली सोने की चूडियाँ लायी थी। अखबार गुडीमुडी करके कोने मे वह बुढिया फेक गयी थी और मेरे हल्दी से पीले बीमार हाथो मे जबरन वह चूडिया पहना गयी थी जो मैंने उसके जाने के पश्चात् अपने गदे तकिये के सिरहाने रख ली थी। घटो मै उस चकलेवाली की उकसानेवाली बातो पर सोचती रही और फिर मैंने एकाएक सिरहाने रक्खी हुई चूडियो को तोडकर टुकडे-टुकडे कर फेक दिया—किन्तु अखबार पडा हुआ था।

"जाने कितने बरसो बाद लगा कि मै पढी-लिखी भी हूँ, और एक क्षण को अपने विश्वविद्यालय, कालेज के वे दिन, कनवोकेशन का दीक्षान्त समारोह, लोगो की चारो ओर से मुझे देखती हुई लालायित आँखे, आँखो के आगे उन दिनो जो स्वर्णिम भविष्य था उसका

ध्यान, विलायत पढने के सपने, सब वर्तमान की नगी अवैध्य अँधेरी रातो मे बिजली की तरह कौध उठे। और मै, जैसे बहुत दिन के भूखे व्यक्ति को कोई बासी रोटी का टुकडा मिल जाय और उसके मन मे यह आशका हो कि कोई यह भी न छीन ले इसलिए वह जल्दी जल्दी खाता है---वैसे ही एक साँस मे अखबार पढने लगी। लडाई के समाचार थे। मुझे यह भी नही मालूम था कि सन् १९३९ वाली लडाई अभी तक चल रही है। मुझे अपने आप पर आश्चर्य हो रहा था कि दुनिया कहाँ की कहाँ चली गयी है और मै कितने गहरे, कितने रसातल मे पहुँच गयी हूँ या पहुँचा दी गयी हूँ। एक क्षण को आँखे भर आयी। चीखने को मन करने लगा, किन्तु मन के विवेक ने, जो उस समय बरसो बाद जाने कहाँ से उस अखबार के साथ चला आया था---साथ दिया। मुझे इस रसातल से तो त्राण पाना ही होगा . ।

"अखबार मे मैने देखा, स्त्रियो की एम्बूलैस मे भर्ती की जा रही है और वे नर्सिंग, मिलिट्री कैम्पो, कैदियो के केम्पो मे काम करने के लिए शौक से शरीक हो सकती है। मेरी आँखो मे एक क्षीण प्रकाश की रेखा आयी। अकलक! मैने अपनी रिनी का चित्र सीने से लगा लिया और मै चीख पडी अकलक! कि मै वेश्या बनने से बच गयी। चित्रवाली इस रिनी की माँ वेश्या नही है। मै वेश्या नही हूँ!!

"मैने अपना सामान जल्दी-जल्दी ठीक किया। मै जानती थी कि मै कई सप्ताहो से बीमार हूँ, परन्तु मेरा अब इस स्थान रहना नही हो सकता। मैने अपना सब एक बार फिर छोडा अकलक! मै प्रत्येक बार छोडकर आगे बढी और प्रत्येक बार मुझे लगा कि मेरा यह मात्र भ्रम था कि मै चल रही हूँ या मैने इतने कदम चलकर रास्ता इतना और समाप्त किया। पथ न कभी समाप्त ही होता था और न मै चल ही पाती थी। किन्तु यह सब तो मे आज कह पा रही हूँ, तब तो यही सोचती थी कि मै चल रही हूँ।"

मै समझता हूँ, और मुझे अपने इस समझने मे कही कोई सदेह नही है कि रजना मे चुम्बक है सुन्दर शरीर का, और अपने को अभिव्यक्त करके दर्प की कुतुबमीनार बनकर खडे रहने का भी। वह स्वय ब्रह्मपुत्र के उद्दाम वेग की भाँति अरहराकर विद्रोह कर सकती है तो साथ ही सामनेवाले व्यक्ति के प्रवाह को वह उसी भाँति बाँध सकती है जैसे ब्रह्मपुत्र गगा के प्रवाह को चीर भी देता है और गगा का प्रवाह बेचारा स्थिर हो जाता है। ब्रह्मपुत्र को काट सकना गगा के प्रवाह का बस नही। वैसे ही मै भी प्रवाहहीन होकर अपने सामने की इस ब्रह्मपुत्र को केवल देख भर सकता हूँ। एक उद्दाम, पागल, वेगवान प्रवाह है जो---जो कि नियमहीन, कुलहीन, केवल भयानक सुन्दर!! किसी की वीर्यवान वर्चस् बाँहे इसे बाँध सके, ऐसा मै नही समझता।

"क्या सोच रहे हो अकलक! पहले तो तुम्हे सुनना है, सोचना फिर कर लेना। सोचने के क्षण तो तुम्हे मिल भी सकते है, किन्तु तुम्हे फिर सुनने के न मिलेगे। यदि ऐसे बीच-बीच मे बारम्बार सोचते रहोगे तो मै समझूँगी कि तुम मेरी उपेक्षा कर रहे हो।

और, उपेक्षिता होना क्या मै सहन कर सकती हूँ ? इस तरह तो मुझे अपने आप से घृणा हो जायेगी और स्वय से घृणा करने का क्षण, किसी प्रकार आज तक रोकती आयी हूँ अकलक ! केवल कुछ क्षणो के लिए और चाहती हूँ कि रजना स्वय से घृणा न करे। क्योकि, फिर घृणा का मन ले क्या यह सब कुछ कह सुन पाऊँगी ?"

वह मेरी और कैसी निरीह दृष्टि से देख रही है ! अपनी हथेली पर मेरा हाथ रखकर वह कितने कोमल तरीके से सहला रही है ।

"जानते हो, मै अपनी दो-चार आवश्यक चीजे लेकर, जिनमे मेरी रिनी का यह चित्र भी था, घर से निकल पडी। अतिम बार उस घर, उस मोहल्ले को छोडकर जा रही थी और इस विचार ने मेरे दिमाग मे जाने कितना सुख और कडवाहट भर दी। मुझे ठीक तरह स्मरण है कि लीई प्रतिदिन इसी जगह सुबह होते ही मुझे किस तरह काम मे मदद पहुँचाती थी। लीई अहमद को पसद नही करती थी। यो लीई ने कभी कुछ कहा तो नही परन्तु मै जानती थी कि अहमद उसे अच्छी निगाहो से नही देखता था ओर दो-एक बार तो छेड भी चुका था। लीई के वे छोटे-छोटे पैर, मुझे हमेशा लगा करता था कि लीई अब जरूर ही गिर जायेगी——परन्तु म्युनिसिपल नल पर खडी लीई अपनी पानी की बालटी लिये हमेशा हँसते हुए काम करती थी। नल के पास ही एक नीम का पेड था, जहाँ अहमद वाला बच्चा जब हुआ था तब मैने किस तरह अपने तरकारी काटनेवाले चाकू से बच्चे की नाल काटी थी और कमजोर होते हुए भी अपनी दोनो हथेलियो मे खून मे तरबतर नाल समेटे उसी नीम के पास एक गहरा गड्ढा खोदकर उस नाल को बहुत गहरा गाड दिया था, जिसमे मेरे बच्चे को भूत न लग जाय या चीले उसे खोदकर खा न सके जिसमे अपशकुन हो। अहमद उस समय शराब मे मस्त औधा पडा हुआ सो रहा था। लीई ने उस रात जागकर मेरी कितनी सहायता की थी यह मै नहीं जानती, किन्तु अकलक ! यह मै जानती हूँ कि इस पूरी धरती पर मुझसे प्रतिफल मे जिसने कुछ नही चाहा बल्कि मुझे दिया ही——तो वह लीई थी। लीई ने नोसिखिये हाथो से दायी का पूरा काम किया। उसने मुझे उस रात प्रसव की यत्रणा से त्राण दिया।

"मेरे पैर एक क्षण को रुके अकलक ! उस नीम के पास पहुँचने पर मुझे लगा कि जहाँ मैने नाल गाडी थी वहाँ एक छोटा पौधा, बिलकुल मेरे बच्चे जैसा, उग आया है और जो बहुत भूखा प्यासा है और मै इसकी माँ हूँ। मेरे स्तनो मे दूध भर आया। मेरे बीमार स्तन अपने उस धरती मे उगे लाल की भूख मे गुनगुने दूध से भर आये थे । मुझे लग रहा था कि लीई और वह बच्चा दोनो मुझे आँचल से पकडकर खीच रहे है।

"और मै फिर आकाश की नीली छाया के नीचे खडी हुई थी—निरुद्देश्य, विपथगा। बिलकुल श्मशान की धधकती हुई ज्वालाओ की भाति जो कि न तो यज्ञ ज्वाला की भाँति आशीषमती है और न वह आग जो कि घर के चूल्हे मे होती है——जिससे खाना बनता है, जाड़ो मे घर गरमाये जाते है, बल्कि चिरायँध और दुर्गन्धयुक्त, महान अकल्याणकारी।

मन बार-बार कुछ पुकारना चाहता था, किन्तु किसे ? किसके लिए ?? सब व्यर्थ ! !"

"मुझ से पूछकर क्या करोगी रजना !"—मैने कितने निरीह होते हुए यह बात उससे कही है यह मै ही जानता हूँ ।

"किन्तु तुम्हे भी तो राजनीतिक परिस्थितियो ने, जेल की दीवारो ने बहुत कुछ दिया और लिया होगा ।" —रजना ने हल्के मुस्कराते हुए कहा ।

मेरी समझ मे यह नही आता कि मै किस तरह समझाऊँ इस नारी को कि मै अकलक नही हूँ । मै कभी जेल नही गया हूँ । जेल जाना तो दूर, मुझे पुलिस की भूषा तक से डर, डर नही तो डर जैसी कोई चीज है जो मुझे लगती है, तभी तो बिना टार्च लिये साइकिल पर नही चलता । मै कैसे समझाऊँ कि ट्रेफिक को देखकर मै जब होजरी से लौटता हूँ और अगर मेरी साइकिल मे बत्ती नही होती है तब कितने धीरे से उतर जाता हूँ; यह रजना क्या जान सकती है ? कहाँ मै और कहाँ इसका अकलक ! ! जो किसी बात से नही डरता, जो किसी राजनीतिक षडयत्र मे पडकर जीवनभर के लिए अदमान तक जा चुका है ।

"अच्छा जाने दो अकलक !—मै उन दिनो बहुत बीमार थी इसलिए पैदल चलना कठिन था । मै किसी भी कीमत पर जल्द से जल्द शाम होने के पहले रेक्रूटिग केन्द्र पहुँच जाना चाहती थी । मैने विक्टोरिया ली । उस समय लगभग दूसरा पहर था । ठीक तो याद नही, जून या जुलाई का महीना होगा । मानसून उठते थे और पश्चिमी घाट की ऊँची-ऊँची शृ खलाओ से टकराकर खूब बरस जाते थे और बेचारा बम्बई का पूरा का पूरा टापू भीग जाता था । मगर उस समय आकाश बिलकुल साफ था । दूर-दूर तक धूप लोहे किये हुए टेवलक्लाथ की तरह उजली लग रही थी । लोग अपने-अपने कामो मे, दूकानो मे, फर्मो मे व्यस्त थे । गुजराती और महाराष्ट्रीय औरते घर के सारे कपडे धो-धोकर अपनी छोटी बालकनियो के तारो पर टाँगे हुए थी । बच्चो के नेकर, फ्रॉक, मर्दो की कमीजे, पाजामे सब सूख रहे थे । मजदूर औरते या तो काम पर गयी हुई थी या जो घर पर थी वे अपने बर्तन साफ कर रही थी, या नल पर खडी-खडी बाल्टियो के भर जाने का रास्ता देख रही थी और साथ ही बँधे हुए सिर के बालो मे काटती हुई जूँओ को मारती जा रही थी । मजदूरो के बच्चे साइकिल के पुराने टायरो को या तो दौडाते हुए घूम रहे थे या फिर बुड्ढी के भीठे बाल वाली मिठाई खाते हुए एक दूसरे को टाँगे मार रहे थे । सडक पर आने-जाने वाले व्यक्ति किसी अकेली औरत को बैठे देखकर उसके पूरे शरीर को घूरना अपना अधिकार समझकर आ-जा रहे थे ।

"मै बम्बई की उन भीडप्रिय सडको पर से गुजरती हुई रेक्रूटिग केन्द्र पहुँची । मुझे स्वय ही नही मालूम था कि मै क्यो जा रही हूँ, और अगर ले भी ली जाऊँगी तो मुझे क्या करना होगा । किन्तु जब आज तक बिना सोचे हुए ही आगे बढना पडा था तो फिर आगे सोचकर क्यो अपने सिर भले-बुरे की जिम्मेदारी लेती ! मै जिस समय रेक्रूटिंग अफसर के सामने पहुँची वह खाकी भूषा पहने थी जिससे मुझे साफ लग रहा था कि मै मिलिट्री

अफसर के सामने हूँ और मिलिट्री मे कुछ काम खोजने आयी हूँ।

''सेन्टर के अहाते पर एक काले बोर्ड पर साफ साफ लिखा हुआ था 'डब्ल्यू ए सी, इडिया' और अहाते के कॅटीले तार तथा मिलिट्री गारद ने यह स्पष्ट कर दिया था कि आज तक जो मै जीती चली आयी हूँ वह इससे भिन्न था।

''जिस समय मै वेटिग रूम मे पहुँची थी वहाँ कई जवान लडकियाँ साडियाँ और स्कर्ट्स मे 'कॉल' का रास्ता देख रही थी। रह रहकर बगल का दरवाजा, वर्दी पहने एक औरत खोलती थी और बहुत ही रूखे स्वर मे किसी का नाम लेकर पुकारती थी। मैने भी अपना नाम लिखवा दिया था।

''काफी देर के बाद मेरा नम्बर आया। मेरी बीमारी के कारण पहले मुझे इडियन मिलिट्री अस्पताल मे स्वस्थ होने के लिए जाना पडेगा---तब डाक्टरी परीक्षा होगी, उसके बाद मुझे लिया जायेगा।

''इडियन मिलिट्री अस्पताल मे मै दिन भर अपने बिस्तरे पर पडी रहती थी। मैने अनुभव किया वरसो बाद, उस दिन धुली हुई बेड शीट पर लेटते हुए कि मै भूल ही गयी थी कि जीवन मे मुझे अब फिर इतनी साफ बिना बदबूदार जिदगी भी जीने को मिलेगी। वहाँ रहकर मैने नर्सिग से सबधित कुछ किताबे पढी और मै दो महीने मे बिलकुल स्वस्थ हो गयी। मुझे कितने साफ तरीके पर याद है वह छोटी सी घटना आज तक अकलक! जब मैने महीनो बाद अस्पताल के शीशे मे अपना चेहरा देखा। मै नही कह सकती कि कालेज के दिनो मे मै जब रोज बन सॅवर कर जाती थी तब के बाद अपने को सुन्दर समझने का मौका मिला हो। परन्तु उस दिन मैने अनुभव किया कि मै सुन्दरी ही नही, बहुत सुन्दरी हूँ और अपने से मोह हो आया अकलक! जब व्यक्ति को अपने से मोह हो जाता है तो वह किसी भी मूल्य पर मृत्यु स्वीकार नही करता। जीवन के एक क्षण के लिए वह बडी से बडी चीज दे सकता है क्योकि जीवन मे व्यक्ति की सत्ता है और मृत्यु मे सर्वज्ञता, सम्पूर्णता का अधकार!!

''उस समय मुझे अपने चारो ओर के उजले धुले पलंगो पर लेटी हुई दूसरी बीमार औरतो पर दया आयी, तरस आया। मुझे लगा कि मै अपनी काली जिदगी जी चुकी हूँ और मेरे सामने धोबी के धुले कपडो की तरह सफेद उजली जिदगी जन्म ले रही है--- मेडीकल टैस्ट के बाद मै नर्स हूँगी और मेरी एक प्रेस्टिज भी होगी। कदाचित् मुझे पिछला कालापन भूलने का अवसर भी मिले। अस्पताल की बडी-बडी खिडकियो से तेज साफ धूप उस वार्ड की विशाल दीवारो पर प्रतिबिम्बित हो रही थी। धूप का उजलापन मेरे तन-मन को धो रहा था। मै एक क्षण को फिर जीवन के मोह मे आबद्ध होगयी। अकलक! मुझे लग रहा था कि नही, जिदगी ही जीने की चीज़ है और जो मै आज तलक जीती आयी थी वह थी मृत्यु---कितनी सीलन भरी गदी बम्बई के साथ ही उजली धुली बम्बई भी है और मुझे इस वार्ड के सफेद धुले-पुते जालियो वाले दरवाजे, खिड़की, पलग, आलमारियो, सब

मे लगा कि जिदगी इतनी ही साफ होनी चाहिये और जो काला, सीलापन इसे गदा बनाये हुए है---जहॉ मै थी, और दूसरे कई व्यक्ति अभी भी वहॉ है, किसी को भी वहॉ न रहना चाहिये--और न वे वहॉ रहेगे ही। मेरे हाथ की नसो मे नई जिदगी का गरम खून दौड रहा था।

"मै बिलकुल नये उत्साह के साथ टैस्ट के बाद अपनी ट्रेनिग ले रही थी। मै सुबह पी टी. करने के लिए अपनी खाकी साडी की वर्दी पहनकर जब कतार मे खडी होती थी तब मै अनुभव करती थी कि हर व्यक्ति मुझे देख रहा है और देख रहा है मेरी ये मोतिया छॉह की सुडौल बॉहे और लहराते हुए मेरे कुन्तल ! ! और मै गर्व सेअपने कदमो को मिलाते मुट्ठियॉ कसे हुए चलती थी। मेरे मन मे हमेशा यह उठता था कि अगर मुझे यहॉ इस समय कोई इस प्रकार पी टी करते हुए देख ले तो वह निश्चय ही मुझे हॅसा सकती है और मै जरूर ही सार्जेंट द्वारा पनिश की जा सकती हूॅ।

"रात मे जब मै थककर अपने बिस्तरे पर हॉस्टल के कमरे मे लेटती थी तब एक एक घटना, एक एक व्यक्ति सामने आता था। परन्तु दूसरे ही क्षण अपनी इस नई जिदगी के प्रति गर्व और मोह दोनो ही होता था। ट्रेनिग के बाद मैने अपनी रुचि महू के मिलिट्री अस्पताल के लिए भेज दी।--और मै महू भेज दी गयी ।

"जब मै छोटी-छोटी पहाडियो और विध्या की गोद मे बसे हुए मालव के इस मिलिट्री सेन्टर मे पहुॅची तो मुझे लगा कि जैसे पहली बार सब कुछ नये रूप से प्रारम्भ कर सकूॅगी। क्योकि बम्बई मे मेरी कडवी स्मृतियॉ कई बार मुझे यन्त्रणाए देती थी और मन हमेशा बुझ-बुझ जाता था।

"हमारा हॉस्टल एक टेकरी के ठीक बगल मे था। मै जब वहॉ पहुॅची सितम्बर प्रारम्भ हो चुका था। जामुने अपने फल देकर फिर वन्ध्या खडी हुई थी और बेर के पेड, सागौन के दरख्त, आम के कुज, सब शरद ऋतु के उत्सव मे निमग्न थे। मेरे कमरे की पीछेवाली खिडकी से साफ दिखायी पडनेवाला विध्या, जो कि बहुत ही लम्बा चला गया था,प्रतिदिन सुबह धूप के सग उग आता था, और अधकार के सग डूब जाया करता था। नीम, पीपल, बरगद, जामुन के बडे-छोटे पेड, छोटी तथा कम चौडी तारकोल की सडको के दोनो तरफ दिन भर कुहरे और नगी हल्की धूप मे खडे हुए तमाशबीन औरतो-बच्चो की भीड की तरह दिखायी देते थे।

"सुबह की ड्यूटी पर जब मै हुआ करती थी तब चार बजे उठकर नहा धोकर अपने मोजे, स्कर्ट और हुड लगाकर, ओवरकोट पहने, पैदल ही निकल पडती थी। हालॉकि एक मील से ज्यादा दूर अस्पताल पडता था, किन्तु महू की उन सर्दियो मे मुझे इस तरह निकल पडना सुहाता था। सुनसान सडक होती थी और भगी लोग अधेरे ही अपनी लम्बी-लम्बी सडक साफ करनेवाली झाडू लिये सडक साफ करते हुए मिलते थे। सडक साफ करने वाली औरते, गदी साड़ियो के छोर लपेटे हुए और मर्द अपने साफो का एक भाग मुॅह

पर लपेटे हुए अपनी पीठो पर हाथ उलटा धरे सडक साफ किया करते थे । धूल और कडाके की इस सर्दी से अपने मुँह को वे इस तरह बचाते थे कि उन कपडो मे से उनकी सिर्फ आँखे ही दिखलायी पडती थी। ठड के कारण उनकी नाक आगे से एकदम ठडी हो जाने के कारण लाल सुर्ख दिखलायी देती थी। मुझे दूर से ही आता हुआ देखकर वे लोग सडक साफ़ करना बद कर दिया करते थे ओर अपने बँधे हुए मुँहो से भरी-भरी आवाजो मे 'सलाम मेम साहब' कहकर एक क्षण को पीठ ऊँची करके देखने लगते थे। मुझे अपना जीवन ओर भी याद आ जाता था जब उनके जाडे मे बिलबिलाते बच्चे फटे कम्बल ओढे, जल्दी जग जाने के कारण और ठड के कारण गदी टोकरियो के पास नाक बहाते हुए रोते हुए मिलते थे । और एक क्षण को कँपकँपी आ जाती थी कि कभी मेरा बच्चा भी ऐसे ही रो सकता था और मै इस काम करनेवाली मेहतरानी से भी ज्यादा गदी जगह पहुच गयी थी। मेहतरानी होना कोई गदा नही, क्योकि यह किसी की पत्नी है, काम करती है, पर मै क्या करती थी ? मे कहाँ नही पहुँच गयी थी ओर मेरे कदमो मे गुस्से की तेजी आ जाती थी । अपने ओवरकोट की गरम-गरम जेबो मे मेरी मुट्ठियाँ कस जाया करती थी। और अगर उस समय घोडो पर जाते हुए जब कभी मिलिट्री अफसर हवाखोरी से लौटते हुए दिखायी पड जाते थे तो जानते हो अकलक ! मन मे आता था कि ऑपरेशन थियेटर मे रक्खे हुए वे सब के सब तेज चाकू, छुरियाँ इनके पेट मे घुसेडकर इनकी अँतडिया बाहर निकाल लूँ, और घृणा का थूक इनके लाल सेब की तरह गालो पर भर जाये—क्योकि तुम, तुम्हारे वर्ग, तुम्हारे समाज, सबने चाहा था कि मै वेश्या हो जाऊँ। अकलक ! नारी को वेश्या बनाने के लिये तुम लोग ठीक इसी तरह से उसे घेरते हो जैसे तीतर या बटेरो को लोग बहरा करने के लिए चारो ओर से घेर लेते है और तीतर की कोई अपनी सज्ञा न रह जाय इसलिये तुम चारो ओर दिन भर चिल्ला-चिल्लाकर उसे बहरा कर देते हो। ठीक उसी तरह 'तुम वेश्या हो' 'तुम वेश्या हो' कह-कहकर नारी की अपनी सज्ञा को इसलिए समाप्त कर देना चाहते हो कि जिसमे उसका शरीर लूले, लगडे, रोगी, किसी को भी जब चाहे चार आने मे मिल सके ।

"दूर चले गये घोडो पर बैठे हुए अफसरो की सीटियाँ, जिनमे रात मे देखी हुई किसी फिल्म का कोई सस्ता सा गाना 'दिस इज लव' या 'यू मेट भी बियाण्ड द होराइज़न' वगैरह सुनायी पडती थी। उनके वे मोटे-मोटे खूँख्वार कुत्ते सडको पर, फुटपाथो पर, बिजली के खम्भो पर गदगी करते हुए पीछे-पीछे दौडते फिरते थे। पैरेड ग्राउण्ड पर खाकी वर्दियाँ पहने हुए केडेट लोग अपने मुँहो से गरम-गरम भाप छोडते हुए कभी अटेन्शन कभी एट-ईज की हालत मे खडे होते थे। जिन्दगी हालाँकि बँधी हुई थी अकलक ! किन्तु नियम था और ताँगे के घोडे की तरह नाक की सीध सामने थी। मै तब तक ईसाई नही हुई थी, किन्तु हर इतवार को नियमपूर्वक दूसरी नर्सों के साथ चर्च जाती थी। इतवार के दिन मे अन्य दिनो के बँधे हुए जीवन से काफ़ी अतर होता था। उस दिन हमारी प्रसन्नता ठीक उसी तरह हो

जाती थी जैसे चुपचाप सोयी हुई झील को हवा का एक हल्का झोका थोडी-थोडी देर मे आकर छोटी-छोटी लहरो मे हँसा जाये और कानो मे फुसफुसा जाये कि—

'जीवन सोने का नाम नही है झील! वरन् छोटी-छोटी लहरे बनकर हँसने का नाम है।'—

और हम लोग उस दिन, दिन भर अपने नर्सवाले कपडे नही पहनती थी।

हमारे बैरेकनुमा हॉस्टल मे गिनती के ही स्नानघर थे और रविवार को अगर नहाने मे थोडी-सी भी देर हो जाती थी तो फिर बारह बजे के पहले नम्बर नही आ पाता था। वे नर्सें जो इसाई नही थी, नहाने के मामले मे सबसे देर लगाती थी। यद्यपि मुझे ऐसा नही कहना चाहिये, मगर हम औरतो के जैसे छोटे-छोटे शरीर, हाथ-पैर वगैरह होते है कदाचित् दिमाग और ईर्ष्या तथा द्वेष भी इतने ही छोटे और हल्के हुआ करते है। हम मे से प्रत्येक को यह मालूम होता था कि किसने आज कब और कहॉ पर किससे मिलने का आयोजन कर रक्खा है, और हमे आपस मे ही कुढन होती थी। कोई लाल रग की साडी क्यो पहनकर जानेवाली है, कोई नहाने मे इतनी देर क्यो लगा रही है, और कौन ड्यूटी करके हॉस्टल रात देर आयी थी—जैसी छोटी-छोटी बाते लेकर हम अपना समय नष्ट करती रहती थी और अपना भूल जाती थी कि हम भी जो कुछ करती है वह भी तो दूसरे के लिए आलोचना का विषय हो सकता है।

फिर भी हम मे से प्रत्येक, रविवार की प्रतीक्षा करती थी। हम लोगो मे से जो जल्दी तैयार हो लेती थी, या यो कहो ज़रा भी देखने मे सुँदर होती थी वह जरूरही उस दिन आठ बजे के बाद कही न कही, किसी न किसी के साथ या तो चाय पर, या फिर किसी इन-डोर खेल के लिए आमन्त्रित होती थी। उस समय हम लोगो के हाथो मे जाने कहॉ से फुर्ती आ जाती थी। वैसी फुर्ती कदाचित् ही कभी किसी बहुत ही मेजर ऑपरेशन के समय देखी जा सकती थी।

वहॉ एक कर्नल टॉमस था। जिन दिनो मै महू पहुँची थी, उसका 'हरनिया' का आपरेशन होनेवाला था। मै उसके उस स्पेशल वार्ड मे ड्यूटी पर लगी थी और तभी से हम एक-दूसरे से परिचित हुए। कर्नल टॉमस सीमाप्रात मे बहुत रहा था इसलिए हम लोग घटो बैठकर सीमाप्रात के बारे मे बाते किया करते थे। उसको हमेशा एक बात का बहुत खेद रहा करता था कि उसे मोर्चे पर नही भेजा जा रहा है। यद्यपि वह इस बारे में कई बार लिख भी चुका था। अभी वह चालीस का ही था। हम लोग घटो फुटबाल वाले ग्राउँड पर बैठे हुए बाते किया करते थे। वह अपने कुत्ते की जजीर हाथ मे बाँध लेता था जिसमे वह कही भाग न जाये। उसे दो बातो का हमेशा शक रहा है कि उसे एक तो उसकी पत्नी ने और दूसरे उसके कुत्ते ने कभी नही चाहा है। मेरा विश्वास है अकलक! उसने ज़रूर ही अपनी पत्नी को तलाक दे दिया होगा। वह हमेशा अपने गदे पीले तेज चाकू-से दातों को खोलते हुए और नीली ऑखो को अजीब तरह से

प मीचते हुए कहा करता था कि अगर उसकी पत्नी को वह तलाक दे सका तो वह मुझसे निश्चय ही शादी कर लेगा। वह मेरा नाम कभी ठीक तरह नही ले पाता था सदा "रैन्तना"—या कुछ ऐसे ही कहा करता था। हम दोनो शादी की बात पर खूब हँसते थे। उसी कर्नल टॉमस के यहाँ मुझे हर रविवार को निमत्रण पर जाना होता था। मैं कारण जानती थी कि वह अनायास ही मुझे नही बुलाता है, किन्तु जानते-बूझते भी उसका मन नही तोड पाती थी ऐसा क्यो ? पता नही, वह अक्सर कहा करता था कि उसका पिता, लिवरपूल की सडको और गलियो मे पुराने पॉच कार्को के बदले मे एक नया कार्क बेचने का काम किया करता था। जब टॉमस पॉच वर्ष का हुआ, तब उसका पिता एक दिन समुद्र मे कुछ लोगो के साथ मछली पकडने गया था। उस दिन कुहरा बहुत था और नाव एक स्टीमर से टकरा जाने के कारण उलट गयी और वह डूबकर मर गया। टॉमस की माता अपनी इकलौती सन्तान को छोडकर लिवरपूल के एक रेल्वे ड्राइवर के साथ विवाह करके चली गयी थी और टॉमस तब से बिल्कुल अपने पैरो पर खडा हुआ और आज वह किसी प्रकार कर्नल तक बन मका है। अब वह चाहता है कि युद्ध मे जाकर जरूर ही अपने ओहदे मे वृद्धि करवाये। उसकी पत्नी से उसकी बिल्कुल नही बनती है इसलिए वह बहुत दुखी रहता है। इसलिए अगर मै कभी वहाना वनाकर अस्वीकार करती थी तो वह इतनी निरीह ऑखो से मेरी ओर देखने लगता था कि मुझे अस्वीकार कर देने पर भी 'हॉ' भरनी पडती थी, ओर तब वह कितना प्रसन्न होकर अपने खाकी हाफपैट मे मे सिगरट निकालते हुए कहा करता था —

"हाउ स्वीट ऑफ यू माइ लव !"

बहुधा मै उसके साथ रविवार रात या तो सिनेमा जाती थी या फिर रात्रि क्लबो मे नृत्य वगैरह के लिए जाया करती थी। जब कभी हम लोग सिनेमा मे होते थे तब टामियो की वे सीटियो ओर अश्लील गालियॉ कितनी बुरी लगती थी। कर्नल टॉमस के साथ जो सबसे बडी कमजोरी थी, वह थी शराब और इसमे मुझे भी साथ देना होता था। वह साथ देना जानते हो, अकलक ! धीरे-धीरे मेरी वृत्ति बन गया। रात को मै अपने हॉस्टल मे ममय-असमय शराब के नशे मे लौटती थी। मुझे टॉमस ने नृत्य करना पूरी तरह सिखाया था, ओर पूरे महू मे मै नृत्य के लिए प्रसिद्ध हो गयी। जब कोई मेरे नृत्य की प्रशसा करता था तो टॉमस फिर घटो तक शराब के नशे मे पूरी गाथा सुनाने लगता था कि उसे इस हिन्दुस्तानी औरत को सिखाने मे क्या नही करना पडा। और मुझे यह प्रसग सदा अप्रिय लगता था, कारण कि कर्नल टॉमस सब कुछ होने के बाद भी यह कभी नही भूल पाता था कि वह अग्रेज है, और अग्रेज इस देश का शासक है।

मुझे उन दिनो भूलकर भी हफ्तो तक पिछले दिन याद नही आते थे—बस, एक बॅधा हुआ जीवन चल रहा था। ड्यूटी पर आठ घटे लग जाते थे। जनरल वार्ड की ड्यूटी मै हमेशा पसद करती थी, क्योकि बहुत सारे रोगी होते थे और हमेशा ही कोई न कोई काम।

'सिस्टर टेम्परेचर देख लीजिए!'

'सिस्टर दवा का समय हो गया।

मे ही समय कट जाया करता था। स्पेशल वार्ड मे जब कभी रात की ड्यूटी होती थी तब अधिकतर तो आराम ही रहता था क्योकि रोगी आखिर एक ही तो होता था और वह कभी न कभी सो ही जाता।

"किन्तु एक घटना जो वहाँ के जीवन मे कडवी विषरेखा की भाँति लगी, वह थी—एक बटेलियन आफिसर के टान्सिल्स बढ गये थे और ऑपरेशन द्वारा वे काट भी दिये गये थे। मै सबसे कुशल नर्स मानी जाती थी, डाक्टरो और सर्जनो का तो मुझ पर काम के कारण विश्वास था, किन्तु मुझे सदा हँसी आती थी कि रोगी क्या देखकर चाहा करते थे कि मेरी ड्यूटी उनके ही जनरल वॉर्ड या स्पेशल वार्ड मे लगे।"

मै देख रहा हूँ कि रजना इस समय जैसे किसी उपन्यास के पन्ने पर पन्ने पढती जा रही है और मै कदाचित् आँखे बद किये हुए सुन रहा हूँ, पर सत्य तो यह है कि मेरे स्थाने उसकी आँखे बद है और मै जाने कितनी देर से इसके मुँह की ओर देख रहा हूँ। मुझे बिल्कुल ही ध्यान नही रहा था कुछ देर से, कि मै रजना की ओर देख रहा हूँ। वह जो कुछ कह रही है उसे एकाग्र होकर सुन रहा हूँ। कदाचित् सब अपने आप होता चला जारहा है, किसी को कोई विशेष अडचन नही है। रजना की इन गोरी पलको के पीछे उसकी झील जैसी आँखे जाने क्या-क्या काला, सीलनभरा तथा धूप-रचा उजला भी देख रही होगी। परन्तु घटनाओ के उतार-चढाव, व्यक्तियो की आकृतियो की रेखाएँ इन आँखो मे समायी हुई होगी, जिन्हे मै केवल सुन रहा हूँ और देख नही पाऊँगा। रजना तब आज जैसी ही शात तथा गम्भीर और घटनाओ से अपने को तटस्थ रख सकनेवाली थोडे ही होगी। और यदि होती, तो इतना सब हुआ कैसे होता? मुझे अपने पर तरस आ रहा है कि किस सीमा तक मूर्खता की बात सोच सकता हूँ। अगर यह सोचा हुआ मैने कही कह दिया होता तो चारो ओर के बैठे हुए लोग सब इस तरह देखते कि जैसे 'कोई इस तरह की बात कर सकता है? जो इतनी तर्कहीन भी हो!'—और विशेषकर महिलाएँ निश्चय ही घूरती है, और ऐसे समय लिपस्टिक लगे ओठो को बिचकाना वे कभी नही भूलती है। तब सब एक दूसरे की ओर देखकर अत्यत भद्रता के साथ हँसने लगती है, जैसे बहुत सारी चाय की चम्मचे किसी ने एक साथ गिरा दी हो—बस इससे अधिक इनकी हँसी का क्या मूल्य होगा?

मै देख रहा हूँ कि रजना आगे का कुछ सोच रही है। इस गाउन मे—जिसमे यह इस समय मेरे सामने है—देखकर मेरे मन मे जो बात आ रही है, वह यही कि मै इस नारी को न चाहूँ, तब भी मोहित ही हूँगा, एकदम कैसी सुन्दर लग रही है।

"तो मै कह रही थी अकलक! उस टान्सिल्स वाले बटालियन आफिसर के बारे मे। उसने मुझे कई बार टॉमस के साथ सिनेमा मे, रेस्तरॉ मे, रात्रिक्लबो मे, देखा था और हमेशा वह सामने की टेबल पर आकर बैठ जाता था और मुझे घूरने लगता था।

हमारा यद्यपि एक दूसरे से परिचय यदाकदा से अधिक निकट का रूप ग्रहण नही कर सका था, क्योकि उसके बारे मे मुझे मालूम था कि वह इतना बडा अफसर होने पर भी आवारा व्यक्ति है और शराब पीकर सडको पर या फिर बिलियर्ड्स की सैलूनो मे जाकर अत्यधिक हुल्लड मचाया करता है ।

छावनी से लगे हुए मुहल्ले और बाजार बहुत जल्दी बद हो जाया करते थे। बहुत रात तक चलनेवाला वह पारसियो का मुहल्ला था, जो बदनाम था। सिविलियन लोग और विशेषकर औरते अँधेरा होने के बाद कभी उधर जाने का साहस नही करती थी। पारसियो के कुछ बँगले, कुछ चीनी बार और छोटे-मोटे दूसरे रेस्तराँ ही आबाद रहा करते थे । उस बटालियन आफिसर ने मुझे बीसियो बार आमत्रित किया था, मगर मै जानती थी कि यह आमत्रण मात्र एक आड है---और हँसकर टाल जाया करती थी।

एक बात कहूँ अकलक ! नर्सो या वेकाई गर्ल्स के बारे मे जो कुछ कहा जाता है वह सम्पूर्ण नही तो अधिकाश सत्य ही होता है, और विशेषकर सैनीय अस्पतालो मे तो हम लोग, उन लोगो के बीमारो की सेवा करने के लिए रहती है, किन्तु अस्पताल की ड्यूटी के बाद जो यह सब हम सरेआम होटलो, बारो और क्लबो मे बैठकर करती है, वह मात्र बाह्य आवरण है इसके केन्द्र मे जो रहता है भोग, उसका मुझे पहले ज्ञान नही था।

एक रात बटालियन आफिसर को बहुत दर्द हो रहा था और मै तीसरे पहर ही जब ड्यूटी पर पहुची थी तब से बराबर सेवा कर रही थी। वह रात को दस बजे तक डाक्टरो को काफी परेशान करता रहा और उसने मुझ पर सिद्ध कर दिया कि मुझे अपने रोगी को एक क्षण के लिए भी नही छोडना है, और मै उसके सिरहाने कुर्सी डालकर बैठी रही। परेड ग्राउँड के बाद एक पहाडी झरना पडता था और फिर सागौन का बहुत ही झीना---किन्तु अत्यत सुन्दर जगल । वहाँ कई अफसरो के बँगले थे और इस बटालियन आफिसर का बँगला भी इन्ही मे से एक था। इस बँगले के दाहिने हाथ पर कुछ बँगले थे किन्तु बाये हाथ पर बहुत दूरी पर 'सी' और 'डी' कम्पनी के मेसेस थे --- और बस, उन मेसेस के बाद फिर बैरके थी ।

जाडे की रात, कदाचित् अगहन का अतिम सप्ताह था या फिर पौष का प्रारभ था। खिडकियो के पल्ले, पीतल के चमकते हुए बोल्टो से एकदम बद थे क्योकि बाहर तेज़ ठडी हवा चल रही थी। शाम को कोई भी उम्मीद नही कर सकता था फिर भी काफी तेज़ ओले गिर चुके थे । चारो ओर एकदम घना कुहरा घिरा हुआ था। शीशो के पार कुहरा ऐसा लग रहा था जैसे कोई काला साँभर खिडकियो के इन शीशो से अपनी पीठ और पुट्ठे रगड रहा हो, और बेचारे शीशे चूर-चूर हो जायेगे। लडाई के दिन थे, जापानी लोगो का बढाव असम मोर्चे की ओर बढ रहा था और किसी भी क्षण लडाई के बम भारतवर्ष की धरती पर गिर सकते थे। बटालिनें आये दिन विंध्या के जगलो मे ट्रेनिग पाती थी और फिर वे एक दिन महू के उस छोटे से स्टेशन से ईराक या मिश्र, जर्मनी या फ्रास, सिगापुर

या मलय कही उसी तरह भेज दी जाती थी, जैसे यह सब भी लगेज हो और थोक माल की तरह आपने गाडी पर चढा दिया, बस ! ! इसलिए हर केडेट, अफसर यही सोचता था कि आज का दिन उसका है, कल के बारे मे वह नही जानता। इसलिए उसकी इच्छाएँ और उच्छृ खलताएँ बहुत बढ जाती थी। नर्सों और वेकाइयों को लेकर वे लोग क्या क्लबो, बारो, सडको, परेड ग्राउडो तक पर देखे जाते थे। उन दिनो छावनियो मे लाइटो का प्रयोग नौ बजे के बाद नही करने दिया जाता था। इस कुहरे मे से कभी-कभी सर्चलाइट आकाश की ओर तेजी से जाती हुई दिखायी देती थी और फिर गहरा सन्नाटा हो जाता था। सैनिक आफिसरो के टेबल-लैम्पो पर गहरे काले शेड्स का प्रयोग करने की आज्ञा थी। उस दोपहर मै स्टेशन गयी थी, क्योकि कर्नल टॉमस की बटालियन को सहसा बम्बई के लिए रवाना हो जाने की आज्ञा मिली थी। यह बटालियन आफिसर आने वाले आठ दिनो मे ही स्वय के भी रवाना होने की आशा कर रहा था, और इसे इस बात का दु ख था कि इन दिनो जब कि वह नाच गा सकता था, बेचारा बीमार बनकर लेटा हुआ है।

मै उसके सिरहाने बैठे हुए सोच रही थी कर्नल टॉमस के बारे मे कि कितना सभ्य था वह। कभी उसने कोई अशिष्टता का व्यवहार नही किया। जबकि मिलिट्री की शिष्टता सिविलियन लोगो की अश्लीलता की समाप्ति पर प्रारम्भ होती है। पर टॉमस ने मुझे शिकायत का कोई अवसर नही दिया। जब वह मालाओ से लदा अपने कम्पार्टमेंट के दरवाजे पर खडा बहुत उदास लग रहा था, मेरा मन जाने कैसा-कैसा हो गया था। लडाई मे जाना किसी को भी अच्छा नही लगता है। कदाचित् बिदा होते हुए टॉमस की आँखो के आगे कुछ लोग स्मरण आये होगे। मैने तब कितने प्रेम से उसकी सिगरेट जलायी थी और वह तब कितना प्रसन्न दिखने लगा था। उसके बाये तरफ के एक दाँत मे सोने की पत्ती जडी हुई थी, जो उस दोपहर जब हँसता था तब कितनी अच्छी लग रही थी। पूरा स्टेशन सैनिको के भारी बूटो की आवाज से भर गया था। उन बूटो के नीचे लगे हुए गोखरू कैसे 'किचिर' 'किचिर' बोलते जा रहे थे। कई नर्से, वेकाई गर्ल्स, कुछ की पत्नियाँ ट्रेन के समय अपने परिचितो, डार्लिंगो और पतियो को बिदा देने के लिये आयी हुई थी। पूरा स्टेशन एक बार चुम्बनो और आलिगनो के रस मे डूबा हुआ लग रहा था। कइयो के बच्चे लाल-लाल पुलोवर पहने कैसे उम्दा तरीके से अपने भरे हुए गोल छोटे हाथ हिलाते जा रहे थे। इस हाथ हिलाने का अर्थ अभी वे आनेवाले कई वर्षों तक नही जान पायेगे। मैने भी कर्नल टॉमस के ओठो को तीन बार अपने चुम्बनो से भर दिया था।

ट्रेन चलने के पहले पूरी कम्पनी एक बार 'फाल इन' हुई थी। एक बारगी ही चिकने पत्थरोवाला छोटा-सा प्लेटफार्म राइफलो के कुदो और एडियो की खटाको से भर गया था। उसके बाद सार्जेंट मेजर की 'शोल्डर-आर्म्स' 'आर्डर आर्म्स' की तेज आवाज सुनायी दे रही थी। सहमे हुए कुली लोग धीरे-धीरे पान की टोकरियाँ और दूसरा सिविलियन माल ढो रहे थे।

"ओर तब तीन 'हिप् हिप् हुर्रे' के साथ ट्रेन की खिडकियो मे से पचासो हाथ खिडकियो से बाहर निकल पडे थे ——स्टेशन के प्लेटफार्म को पकडने के लिए जैसे ट्रेन ने हाथ बढा दिये हो। एक क्षण को टॉमस का इस तरह हमेशा के लिए चला जाना मेरे मन को बहुत बुरा लगा, ऐसा क्यो ? मै नही जानती पर मैने उसका हिलता हुआ हाथ, भूरे बालो से भरा हाथ, अपनी ओर खीचकर गालो से सटाकर उस पर दो गरम-गरम बूँद गिरा दी, ओर फिर मेरे ओठो ने तीन चुम्बन उसकी हथेली और कलाई पर टॉक दिये। उसी हथेली और कलाई पर, जो लडाई के मैदान मे मशीनगन चलायेगे। मशीनगन चलाते समय वे तीन चुम्बन उसके दाँत की सोने की पत्ती से भी अधिक चमकदार होकर चमकेगे। वह कितना खुश था, कितना खुश था अकलक! कि मै कुछ बता नही सकती। मुझे हमेशा वह टॉमस इसलिए याद रहता है कि वही एक व्यक्ति मेरे जीवन मे ऐसा आया जिसे हँसता पाया ओर जिसने मुझे भी हँसाया। बस, और कुछ भी तो याद नही पडता। बताओ अकलक! क्या मै उसका वह गोरा, भूरे बालो से भरा हाथ जिसे मैने तीन चुम्बनो के सलमे-सितारो से टॉका था, भूल सकती हूँ ? भूल जाऊँ ? इतनी कडवाहट को अगर भूल जाने को कहोगे तो भूल सकती हूँ किन्तु उस गोरे, भूरे बालो भरे हाथ की मिठास को इस जन्म मे तो क्या, कभी भी नही भूल पाऊँगी। काश, ऐसी मिठास जीवन भर मिल पाती। कदाचित् इसी मिठास के लिए तो इतना भटकी भी थी अकलक! और वह मुझे मिली भी तो प्लेटफार्म पर, अगर रोकना चाहती तो रुक भी तो नही सकती थी ? मै कितनी देर तक खडी रही प्लेटफार्म पर। चारो ओर से कुली ठेलो पर सामान लादे हुए जाने क्या समझते हुए बचते-बचाते गुजर रहे थे। जाडे की उस कुहरे भरी मद मीठी दोपहरी मे दोनो रेल की काली पटरियाँ पृथ्वी पर लेटी हुई कोसो बिछी हुई दिखायी दे रही थी और, ओर उन्ही दो पटरियो पर वह ट्रेन चली जा रही थी जिसमे टॉमस मुझे एक क्षण को जीवन की मिठास देकर चला गया था।"

रजना कितनी उत्तेजित हो उठी है कर्नल टॉमस की स्मृति मे। यदि सम्भव होता तो निश्चित ही रजना ने उसे पति तक बना लिया होता। किन्तु इतनी कडवाहट के बाद जो मिठास बनकर आया था क्या उसकी भी यह उपेक्षा कर देती ?

रजना ने एकदम चौककर अपनी आँखे खोल ली है ओर——

"जानते हो अकलक! मैने इस व्यक्ति के साथ शायद विवाह किया होता, शायद नही निश्चय ही किया होता। ओर यदि विवाह करती तो बिलकुल अपनी जिम्मेदारी पर करती। ओर, अगर इस व्यक्ति ने भी वही किया होता जो औरो ने किया है तब कदाचित् मै इस टॉमस का उल्लेख तक भी नही करती। अकलक! वह और सब कुछ था लेकिन उसे केवल शरीर की अपेक्षा कभी नही थी, मै कहती हूँ बिल्कुल नही थी अकलक! अन्यथा यदि वह शरीर लेकर सतुष्ट होनेवाला व्यक्ति भी होता तब भी मुझे बहुत प्रसन्नता होती। मै समझती, कि मेरे नारी शरीर की नदी के लिए सिधु यही व्यक्ति

है और आज इसका उपयोग हो गया, जिसकी मै प्रतीक्षा कर रही थी, और जिसकी प्रत्येक नारी सहज प्रतीक्षा करती है ।

"किन्तु मै देखती हूँ अकलक ! कि न तो अच्छे क्षणो को बाँध रखने की क्षमता एव शक्ति है मुझमे और न बुरे क्षणो को दूर रखने का साहस एव बल। कटी हुई पतग की भाँति, हवा की इच्छा पर निरतर पतनोन्मुख—यही तो कदाचित् तुम भी सोच रहे हो, क्यो ठीक है न अकलक ?"

मुझे रजना का मेरे प्रति इस प्रकार कटु सोचना अच्छा नही लगा है ।

"ऐसा सोचने का कारण, रजना !"—

आरामकुर्सी पर बहुत देर से विश्राम करती हुई अपनी टाँगो को हिलाते हुए वह बोल रही है —

"ऐसा न सोचने का क्या कारण है अकलक ? कदाचित् दयावश स्वय तुम ऐसा सोचना चाहकर भी नही सोच रहे हो, या फिर "

और अब की बार उसने फिर आँखे बद कर ली हैं—टाँगे हिल रही हैं ।

"या फिर के आगे तुमने वाक्य पूरा करने के स्थान पर आँखे बद कर ली, रजना ! और जानती हो मै वाक्य पूरा होने की प्रतीक्षा मे तुम्हारी इन बद पलको की ओर देख रहा हूँ, कुछ सुना रजना !"—

"मैने किस-किस की प्रतीक्षा नही की अकलक ! तुम्हारी भी की थी, और आज तक की थी—किन्तु व्यर्थ ! ! और हाँ देखते हो, तुम वाक्य जरा देर मे पूरा होगा इस तक की प्रतीक्षा न कर सके और कह बैठे । जब कि मै तो आज अपने ओठो के बाहर यह सब ला सकी हूँ जब कि एकदम किनारे पर आ खडी हुई हूँ, क्योकि पथ समाप्त-सा ही तो लगता है—बल्कि पथ की परिसमाप्ति, शून्य के किनारे पहुँचकर क्षितिज का व्यास बन गयी है अकलक !"

"मै समझा नही रजना ।"—

"तुम्हे थ्योरी समझ मे नही आ सकती यह मै लिखकर दे सकती हूँ—सिवाय प्रैक्टिकल डेमान्स्ट्रेशन के और कुछ भी कहना-सुनना सिर खपाना है । सब कुछ समझ मे आ जायगा । मेरी समझ मे यह सब इसलिए आ रहा है कि कुछ अनागत भी देख पा रही हूँ विगत के आधार पर । तुम विगत सुन रहे हो, वर्तमान को मैने तुम्हे देखने दिया ही नही, तो अनागत तो बिना आँखे फाडकर देखे तो समझ मे नही आ सकता, है न ? भ्रम मे तुम नही मै हूँ अकलक ! सब कही मैने ही भूल की है; जब मैने भूल की है तो फिर तुम जैसे भी समझोगे, समझाऊँगी तुम्हे तो ।

उस टान्सिलस वाले बटालियन अफसर के सिरहाने बैठी मै कर्नल टॉमस के बारे मे यही सब सोच रही थी, किन्तु वह अफसर जाने कब करवट बदल चुका था और बहुत देर से टकटकी बाँधकर मुझे घूर रहा था। उसका पूरा नाम तो बहुत बडा था मगर सब उसे 'रेनाल्ड' कहकर ही पुकारते थे। रेनाल्ड हम लोगो की 'जनरल सर्विस' की परेड पर भी हमेशा पहुँच जाया करता था और हाथ मे हमेशा एक छोटा-सा हटर लिये, कधे पर बटालियन आफिसर का 'लाल फूल' लगाये तथा हैट मे लाल रिबन लगाये हुए, स्लेटी या नैवी-ब्ल्यू साडियो मे लिपटी हुई 'जनरल सर्विस' की लडकियो को घूरने के मामले मे वह छावनी मे प्रसिद्ध था। एक बार यह सोचकर पूरी कँपकँपी आ गयी और मुझे पहली बार डर जैसी चीज अनुभव हुई कि इतनी रात मे बिलकुल अकेले बँगले मे इस रेनाल्ड जैसे आवारा की देखभाल कर रही हूँ।

कमरे को गरम रखनेवाला हीटर अपने तारो मे लाली भरे हुए फुँके जा रहा था। डाक्टरो को गये एक घटे से अधिक हो चुका था। मैने उसका टेम्परेचर भी लिया था और वह नार्मल से कुछ ज्यादा था। मैने वातावरण को भयहीन करने के लिए बोलना चाहा, किन्तु मै जानती थी कि रेनाल्ड को बोलना मना है। और न बोलने देने मे कदाचित् वह परिस्थिति ही न आये जिसकी आशका से इस ठडे और घने कुहरे मे भी हल्का पसीना अपनी दोनो बगलो और भाल पर मै अनुभव कर रही थी। क्योकि बोलकर कोई भी अपना मनोभाव तो प्रकट कर ही सकता है, चाहे फिर आप उसकी उपेक्षा ही कर दे। किन्तु दबा हुआ भाव स्पष्ट कर दिया जाने पर, व्यक्ति अपनी तृप्ति और वाछा के नखो से उसी तरह धरती को कुरचने लगता है जैसे बिल्ली के पजे।

सामने एक जाली वाली छोटी आलमारी रक्खी हुई थी उसमे ओवल्टीन, हॉर्लिक्स और कुछ विटामिन टॉनिक, साथ ही कुछ उजली पट्टियाँ रक्खी हुई थी। रेडियम डायल की टेबल-क्लाक मे इस समय ११ ३० हो रहे थे। घडी के अक्षर और काँटे हरे-हरे चमक रहे थे। उसकी 'किट्' 'किट्' उस गहरे सन्नाटे मे ठीक वैसे ही लग रही थी जैसे वह अधकार की नाडी की आवाज हो। मैने ,अपना डर दूर करने के लिए रेनाल्ड के ठीक सिर की तरफ रक्खी दो-तीन लडाई की पत्रिकाओ मे से एक उठाकर देखनी शुरू की। मोटे-मोटे टैंक, स्टील के हैट पहने हुए फौजी और जाने क्या-क्या, मै रात भर देखती ही रहती यदि बिस्तरे की उजली बेडशीट पर रक्खा हुआ मेरा हाथ किसी ने न छुआ होता तो, और मै एकदम डर गयी। मेरी बगले पसीने से लथपथ होने लगी, अदर की ब्रेसरी जैसे एकदम पानी से भीग गयी हो, ब्रेसरी की डोरियाँ जो कि पीठ पर बँधी हुई थी गीली लग रही थी। मुझे लगा मेरी पिडलियो पर से अवश्य पसीने की धारा बह रही है जिसके कारण मेरे लम्बे मोजे गीले हो रहे होंगे, परन्तु कही किसी भी ओर देखने का मेरा साहस नही हो रहा था। मेरा उजला हुड जो कि गले से कुछ ऊपर था, बालो की जडो से निकले पसीने से भीगा-भीगा लग रहा था। उसकी दो उँगलियाँ बहुत अधिक सिगरेट

पीने के कारण पीली-नीली दिखायी दे रही थी और वह मेरी ओर घूरता हुआ कह रहा था—

"रेनाल्ड क्या इतना बुरा आदमी है कि उसे स्नेह का एक चुम्बन तक नही मिल सकता ?"—

और मैं जानती हूँ कि मेरी तबियत इतने जोर से चीख पडने को कर रही थी कि बस! ! साथ ही मुझे मालूम था कि बाहर के उस छोटे से गार्डरूम मे जो गार्ड पहरे पर है वह चीख सुनने पर भी यहाँ नही आ सकता है। रेनाल्ड अब तकिये के सहारे और ऊँचा हो गया था। बार-बार अनुनय करता जा रहा था तथा मेरा हाथ अब उसके सीने पर पहुँच गया था। मुझे अपने इस वेकाई गर्ल के रूप की विपन्नावस्था पर बम्बई के बाद आज पहली बार तरस आ रहा था। मैने अपने हाथ को झटका दिया अकलक ! पर वह वैसे ही झटका खाकर पडा रहा जैसे किसी बदी की एक टॉग जेल की दीवार की सॉकल से बँधी हो और वह बदी, जब टॉग निकालना चाहता हो तो बारबार झटके खा जाती हो। मैने रेनाल्ड से विनती की—उसे ऐसा नही करना चाहिए। किन्तु अब मेरे दोनो हाथ उसके जलते गरम दोनो फौलादी हाथो मे पहुँच चुके थे। मैने—'आप को टेम्परेचर है'—कहकर हाथ खीचकर थर्मामीटर लाने का बहाना बनाया परतु तब तक मेरे ओठ उसके मूँछो भरे ओठो पर जा चुके थे। उसके दोनो ओठ बेतहाशा जल रहे थे, कदाचित उसे अनायास 'हाई फीवर' हो आया था —मै एक बार जोरो से चीखी, परन्तु तेज ठडी हवा के बाहर बहते हुए अधड के कारण 'खड्' 'खड्' करते हुए दरवाजे और खिडकियाँ ही उस चीख को पी गयी, और वह मुझे अपने सीने पर झुकाये पागलो की भाँति चूमता जा रहा था। मै पागल हो रही थी। मैने उसे नोचना शुरू किया ओर उसके टैंको की तरह भारी हाथो ने मुझे अपने पास सुला लिया। मुझे याद है अकलक ! सिरहाने लगे हुए स्विच की एक बार 'खट्' से हल्की आवाज हुई थी और उसके बाद मेरे तडपते शरीर से उसका फौलादी शरीर वैसे ही सटता चला गया था जैसे दर्जी की सुई दो कपडो को जोडती चली जाती है।

•

मै जब सुबह की बेला होस्टल लौटी मेरा सिर तवे की तरह जल रहा था ओर पूरी दुनिया से मुझे घिन, घृणा, ओर चिढ हो रही थी। मैने निश्चय कर लिया था कि मै अब यहाँ नही रहूँगी, ओर अगर कही रहने को स्थान नही मिलेगा तो कुएँ मे कूदकर अपने इस वासनामय नारी के शरीर को सदा के लिए समाप्त कर दूँगी।

जब मै हॉस्टल पहुँची सब अपनी-अपनी ड्यूटी के लिए तैयारियाँ कर रही थी। मैने कमरे मै पहुँचते ही दुआर अदर से बद कर लिये ओर बिस्तरे पर औधे लेट-कर अपनी हथेलियो मे मुँह छुपा फूट पडी। दिन भर यो ही पडे-पडे रोती रही। साँझ को जब वार्डन ने दुआर खुलवाये तो मैने सिर मे पीडा का बहाना बनाकर पीछा छुडाया। तीन दिन तक कमरे से बाहर नही आयी। चौथे दिन आफिस मे जाकर अपना त्यागपत्र दे दिया। मेरे एकाएक इस प्रकार त्यागपत्र से सबको आश्चर्य हुआ। मुझसे लोगो ने कारण

जानना चाहा क्योकि किसी न किसी रूप मे सभी मुझे चाहते थे और मुझ जैसी कुशल नर्स के जाने से उन्हे धक्का लग सकता था। तुम बताओ अकलक ! कि मै लोगो की बात का क्या उत्तर देती ? क्योकि नारी का जो शरीर मुझे मिला था और जिसे देखकर प्रत्येक के मन मे वासना ही आयी, क्या कोई भी मुझे इस नारी-शरीर की यत्रणा से मुक्ति दिला सकता था ? जब सबने मुझसे कारण जानने की बहुत चेष्टा की तब मैने कहा कि मेरी तबियत यहाँ नही लगती है। लोगो ने मुझे ओर कही चले जाने के लिए कहा, बोले, त्यागपत्र देना उचित नही ।

"मै जानती हूँ, कारण कदाचित् सबको धीरे-धीरे मालूम होता जा रहा था और इसलिए मैने बेरागढ, जहाँ लडाई के बहुत से इटालियन बदी रक्खे गये थे, के लिए प्रार्थना-पत्र दे दिया।

"जिस समय मै महू के स्टेशन से विदा हो रही थी कर्नल टॉमस की स्मृति से उन दिनो के गाढे विषाद मे भी हलकी मीठी स्मृति भर उठी। कभी मै उसे बिदा देने यहाँ आयी थी ओर आज मै स्वय विदा हो रही थी। कर्नल टॉमस का ईराक से एक पत्र आया था कि उसे महू ओर 'रेन्तना' दोनो की बहुत याद आती है—कितना भोला था अकलक वह ! !

"कुछ सहेलियो के हिलते रूमाल ओर रगीन स्कर्टस उस स्टेशन पर पीछे दिखायी पड रहे थे और मै हमेशा के लिए महू से बिदा हो गयी। मुझे महू मे ऐसा लगा था कि मेरा जीवन कितना बदल गया है । किन्तु इस रेनाल्ड ने आकर इस बदले हुए जीवन को भी कितना दुर्गन्धमय ओर कडवा कर दिया था। अकलक ! मुझे लगा कि मै ससार के किसी भी स्थाने अपने इस नारी-शरीर को लेकर क्यो न पहुँच जाऊँ, मेरे लिए वहाँ भी दुर्गन्ध ओर सीलन लिये कोई न कोई पहुँच ही जायगा।

"दिसम्बर का दूसरा सप्ताह प्रारम्भ होने को था जिस समय मै महू से चली थी। क्रिसमस की छुट्टियो का उत्साह मै अपनी वेकाई सहेलियो तथा मिलिट्री के लोगो मे वही महू मे छोड आयी थी। मै जान रही थी कि क्रिसमस मे विशेष रूप से लोग अपने परिचितो मे रहना पसद करते है। अकलक ! यह मै कदाचित् तुम्हे बतलाना भूल ही गयी थी कि मैने महू मे अपना धर्म-परिवर्तन कर लिया था और इसाई हो गयी थी। मेरे इसाई होने पर टॉमस बहुत प्रसन्न हुआ था। तुम या कोई भी मुझसे पूछ देख ले कि कभी कोई इसके पहले भी मेरा धर्म रहा था ? कदाचित् नही, फिर भी हिन्दू थी प्रारम्भ मे और उसके बाद मुसलमान, किन्तु उसके पश्चात् एक समय ऐसा भी आया अकलक ! जब कि अहमद जा चुका था, तब न तो मुझे पति और न धर्म, दोनो की ही कोई आवश्यकता थी जब कि नारी के लिए ये दोनो परमावश्यक है।

"यदि रेनाल्डवाली घटना न हुई होती तो मै महू कभी नही छोडना चाहती थी। मेरे वे भरे-भरे दिन थे जैसे सूरजमुखी के फूल मे बहुत सारी धूप भर गयी हो। जाड़े के

छोटे दिन, बहुत शीघ्र थककर साँझ बन जाते है, और इन्दौर तक ट्रेन के पहुँचते-पहुँचते तो आकाश लाल ही लाल हो गया। इस लाली के ठीक नीचे इतना अधिक कुहरा था कि जैसे बहुत जल्दी ठड और अधकार बढ जायगा। जाने क्यो मै इस समय बहुत उदास मन से खिडकी पर कोहनी टिकाये ट्रेन के चल पडने का पथ जोह रही थी। इधर आप कह नही सकते कि आपको कुहरा जाडे मे हमेशा और सब स्थाने एक-सा ही मिलेगा।

"जिस समय रात के दस बजे के लगभग ट्रेन शिप्रा की ठड मे ठिठुरती काली कछारो मे से गुजर रही थी, बिना कुहरे की चाँदनी रात एकदम आइसक्रीम की तरह जमी हुई नगी सफेद-सी लग रही थी। ट्रेन काली मिट्टी वाले लम्बे-लम्बे खेतो के बीच से सरपट चली जा रही थी। आसपास की छोटी-छोटी पहाडियो के बीच से रेल के पहिये प्रतिध्वनित होते हुए भाग रहे थे। साँझ, ट्रेन मे से रास्ते भर देखती आयी कि छोटे तालाब और बडी झीलो मे कहार लोग अपनी-अपनी छोटी नावे लिये सिघाडे तोडते फिर रहे है। छोटे फ्लैग-स्टेशनो पर गाडी एक क्षण को रुकी नही कि कहारो के काले नगे लडके और कढाई के तैल-सी चिकनी लडकियाँ, लाल छीट की एकदम फटी धोतियाँ लपेटे, कच्चे हरे सिवाडे और काले सिके सिघाडे पैसे-पैसे मे बेचते फिर रहे थे। आम के पत्तो पर पाँच-पाँच, दस-दस पीली खजूरो और सिन्दूरी टीमरु रखे हुए वे बेचनेवाले लडके-लडकियाँ कैसी विनती करते फिर रहे थे कि,——

"मेम साहब, दो-दो पैसे',

"बाबू साहब दो दो पैसे मे——"

"और ये पुकारे ट्रेन की ऊँची सीटी तथा तेज भाप छोडने की आवाज मे रेल के पहियो के कितने पास और, प्लेटफार्म न होने के कारण खिडकियो से कितने नीचे थी। रेल-मे बैठे लोगो की ओर अपनी छोटी गर्दनो को बहुत ऊँचे करते हुए, ये लडके-लडकियाँ आवाजे दौडा रहे थे। पता नही 'दो-दो पैसो' की उन पुकारो का क्या हुआ होगा ?

"खिडकी के बाहर बहुत तेज ठडी हवा को काटता हुआ इजिन बढता जा रहा था। वैसी धुली कपोतवती चाँदनी मुझे सिर्फ मालव मे ही देखने को मिली। कोसो तक चादनी मे खडे नहाते हुए पहाड, वनराजि, छोटे-छोटे गाँव, तालाब, झीले सब साफ दिखायी पड रहे थे। अकलक! बडी-सी झील के किनारे उगे हुए ढाक और सरपत—और सरपतो के बीच मे काँपती हुई झील की लहरे, जिन पर चाँद के शत-शत टुकडे हो उन सरपतो मे 'छप्' 'छप्' की आवाजे करती हुई विलीन होती जाती। कित्ता अप्रतिम सौदर्य, रूप का कितना निष्कलक गोरा विस्तार!! वशी मे सोयी हुई रागनियो की भाँति शात और निर्विकार मन की भाँति कितना एकान्त!! जिसमे के एक अश को पाने के लिए भटकती रही हूँ धाविता रही जीवन भर, पर क्या कही वह मिला '? उस झील की पारे और चाँदी की तरह चमचमाती छाती पर दो उडती मिथुना सारसे——कैसी भली लगती है अकलक! मै भी ठीक ऐसे ही एक सारस बनना चाहती थी और एक सारस का साथ

चाहती थी——किन्तु क्या यह हो सका ?? मैंने कई बार सोचा कि यहाँ उतर जाऊँ——यहाँ सरपत, चाँद और झील पर काँपती हुई सारसो की स्वप्नमयी मिथुन छायाएँ तो है!! अब और मुझे करने को क्या शेप है ? चन्द्रमा, अपने हरिणो के साथ मे गोल तारिकाओ के देश मे भ्रमण कर रहा था——मे एक छोटा नक्षत्र भी न बन सकी ??

तेज; ठडी हवा मुझे अपने पुलोवर और ओवरकोट मे भी कँपा रही थी। कटे हुए नगे खेतो मे चाँदनी मे भागते शशक, लोमडियाँ और कभी-कभी नीलगाएँ, साँभर एकदम असीम निर्द्वन्द्व, उन्मुक्त-से लगे। किन्तु मै जानती हूँ अकलक! कि इतनी स्वतत्रता मुझे चाहिये भी नही थी और यदि मिलती भी तो निश्चित ही लौटा देती। लखरावो तले ठड मे सिकुडे बैठे रखवाले पत्तो का अलाव जलाये हुए अधकार मे चमक जाते थे। कम ऊँचाइयो की झाडियाँ दोनो तरफ कोसो लम्बे चली गयी थी और ट्रेन कितनी ऊँची लग रही थी। ईख के खेतो के पास गन्ने का रस निकालते हुए वे मालवी किसान इस चाँदनी मे भी काम कर रहे थे। मुझे लगा अकलक! किसानो के लिए चाँदनी रात भी काम करने के लिए है जब कि कुछ के लिए दिन भी काम करने के लिए नही बना है।

जब मे बैरागढ पहुँची उस समय सुबह के दस भी नही बजे थे। अभी थोडी देर पहले मैंने कालीसिध नदी का वह गेरुआ लम्बा पुल पार किया था जिसके नीचे से कालीसिध चट्टानो के बीच से तेज बहती है। काली चट्टानो के ऊपर बना हुआ वह गेरुआ लम्बा पुल वैसा ही लग रहा था जैसे किसी कृष्ण भील ने अपने शरीर पर सिन्दूर की कई आडी-तिरछी रेखाएँ खीच ली हो। कालीसिध इतनी गहरी है कि अभी तक उसकी सतह पर से पानी की भाप उड रही थी। सुबह की तेज पुरवा मे नागफनी के मोटे, लम्बी गोलाईवाले, काँटे भरे, हरे पत्ते और लाल गोल फल की तरह के फूल भी काँपते हुए रास्ते मे मिले। छोटी-छोटी खाँकरे की झाडियो से भरी इधर की धरती अधिकतर बनैली थी, खेती के लिए एकदम उजाड, इसलिए रास्ते मे कोई भी गाँव नही दिखायी दिये। बैरागढ पहुँचते ही मुझे लगा कि यह स्टेशन मूलतः नया बन रहा है। अभी तक भी प्लेटफार्म कच्चा बना था और लम्बी कतारो मे खडी हुई ईटे प्लेटफार्म के लिए जमायी जा रही थी। बहुत सारी पटरियाँ बिछाने का काम चल रहा था। यहाँ मैंने देखा कि सवारी के नाम पर कोई भी नही उतरा, क्योकि थोडी ही दूर भूपाल जक्शन पडता है जहाँ जाकर यह ट्रेन रुक जायेगी। बहुत तेजी से डाक के थैले, फूलो और फलो की टोकरियाँ, मुर्गियो के अडे ढेर के ढेर उतारे जा रहे थे। पूरे स्टेशन पर सिविलियन के नाम पर कदाचित् कुछ ठेकेदार ही रहे होगे। मगर कुछ नर्से और वेकाई भी मुझे यहाँ दिखायी दी जो कि अपने परिचित किसी सारजेंट या कैप्टेन को छोडने आयी थी, जो कही छुट्टी पर जा रहा होगा, जो कि उनकी कमर मे हाथ डालकर चल रहा था। अपने मिलिट्री 'पासेज' के पीछे की तरफ एक दूसरे का चित्र लगाये आपस मे देख-देखकर हँस रहे थे और चुम्बन आलिगन मे बँधते जा रहे थे।

मै जब वहाँ उतरी तब मुश्किल से कुछ गुरखा सिपाही और दो एक टॉमी जो रैंक मे या तो वारेट आफिसर या लेफटिनैट से अधिक नही होंगे मेरे साथ ही ट्रेन से उतरे । मुझे देखते ही,जो ट्रक लेने आयी थी उसके ड्राइवर ने सामान उठाने मे सहायता की। सामान स्वय ही उठाना पडा क्योकि यह मिलिट्री स्टेशन था और नाम मात्र को दो एक कुली रहे होगे जो ठेकेदार लोगो का सामान लादने-उतारने मे लगे हुए थे ।

अभी सडके पक्की नही बनी थी, मगर हजारो मिस्त्री स्टेशन, सडके , बॅगले और बैरके बनाने मे जुटे हुए थे। यहाँ सिक्ख रेजीमेट की एक बटालियन थी जिसकी बैरके दाहिने हाथ पर दिखायी दे रही थी। जहा उस समय भी सिक्ख लोग अपनी बनियाने पहने, धारियोवाले कच्छे पहने और दाढियो पर कपडा बाँधे हुए धरती खोद रहे थे--कुछ ईटे ढोती हुई मजदूररिनो को घूरते हुए पजाबी का अश्लील गाना गा रहे थे। मै जानती हू अकलक ! वह अश्लीलता कदाचित् कम भी अनुभव हो सकती थी किन्तु हमारे मोटे ओठो से और अजीब प्रकार के बोलने के ढग से वह कितनी बुरी हो जाती है यह मै बहुत बाद मे अनुभव कर सकी हूँ।'

क्या रजना के मोटे ओठो वाली बात को ठीक मान लूँ ? एकदम जैसे ब्लेड की बारीक धार से सगमरमर की दो पत्तियाँ काट दी गयी हो --ऐसे तो रजना के ओठ है। रजना अपनी आराम कुर्सी पर बैठी हुई जैसे पूरा जीवन दुहराकर एक बार फिर से जीना चाह रही हो, पर तब के जीने मे और आज के जीने मे वह केवल अतर इतना रख पा रही है जो कि एक लिप्त होकर जीने मे होता है ओर दूसरे तटस्थ होकर जीने मे होता है ।

मै अपने तकिये मे कोहनी से गडढा बनाये और उस कोहनी पर अपनी ठोडी टिकाये सब सुन रहा हूँ। मै कई बार बीच-बीच मे प्रश्न करने की भी सोच चुका हूँ, परन्तु आज अपने प्रश्नो के 'क्या' 'कैसे' ओर 'क्यो' से उस विगत को न तो बदल ही सकता हूँ और न मिटा ही सकता हूँ--इसलिए मन कचोट-कचोटकर रह जाता है । रेनाल्ड वाली वह रात मुझे इस समय ही नही अब तो जीवन भर कडवे विष की तरह याद रहेगी। सब रजना के पास इसी तरह ही तो आये जैसे रजना का शरीर उनके पुरुष शरीर का ऋण था--कुछ ब्याज लेकर चले गये, कुछ लोगो ने मूलधन के आधार पर कुछ दिनो व्यापार किया, ओर रजना ने विद्रोह नही किया, बल्कि समझौता किया--किसी के साथ पत्नी बनकर, किसी की मात्र प्रेमिका बनकर और किसी के साथ भागकर !!

रजना का बायॉ हाथ मेरे बिस्तरे पर रक्खा हुआ है, जिसकी कलाई मे बॅधी हुई घडी मे रात के दस बजे चुके है । बाहर आकाश बादलो से भरा हुआ है, साँझ फूली थी, रात मेघाच्छन्न। मेरे सामने बैठी हुई रजना इस मेघाच्छन्न रात से किसी प्रकार भी कम नही है । अतर केवल यही कि बाहर वाली रात, बरसने का विचार कर रही होगी जब कि मेरे सामने बैठी हुई रात, आज दोपहर से अनवरत मूसलाधार बरस रही है। बरसते हुए आज लग रहा है कि मेरे आज तक के ये विश्वास के विजय-स्तभ, कुतुब-

मीनार ,जिन्हे मै शाश्वत की सज्ञा दिये बैठा था इस सामने बैठी हुई रात ने उन्हे अपने अनुभवो के प्रवाह-जल से धीमे-धीमे डुबाना प्रारम्भ कर दिया था और मेरे चारो ओर इस समय रजना के अनुभव का जल ही जल है। एक भयकर प्रवाह है और इस प्रवाह का सचालन इस नारी की दो बॉहे कर रही है। दोपहर का उठा हुआ ज्वार आधी रात होने तक भी-भाटा बनेगा कि नही, मै नही जानता परन्तु, शाश्वत मीनारो के शिखरो पर बैठा हुआ मेरा कायर मन आज निश्चय ही अपने प्रतिमानो के साथ ड्ब जायेगा और केवल रह जायेगे, प्रलय की रात के काले अधेरे के डैने, जो इस ज्वार को अपने लोहे के पजो मे सुबह होने पर चील की भॉति अवश्य ले जायेगे । धरती फिर सूख जायेगी, प्रलय के फौलादी पद-चिन्हो पर नये जीवन की हरियाली दूब उग आयेगी । पुराने प्रतिमानो की शाश्वतता, अपने 'अहम्' के पत्थरो को लिये हुए धरती के पेट मे पुरातत्व बनने के लिए गहरे पाताल मे समाती चली जायगी। जहॉ आज के पहले जाने कितनो ही के 'अहम्' अपनी व्यक्तिगत सीमाओ के मृत्यु—चीवर ओढे हुए शव बन चुके है। परन्तु नन्ही दूब और हरे अकुर, प्रत्येक प्रलय सर्गे ऊपर की ही ओर फूटते है, नीचे नही धॅसते——क्योकि उस दूब को 'अहम्' ही क्या हो सकता है ? 'अहम्' तो एक चट्टान है, जो स्वय किसी को अपने मे से जन्म नही देती है। जितना स्थान घेर लेती है वहॉ सृष्टि या जन्म सम्भव नही हुआ करता। चट्टानो की फसले नही होती, गेहूँ की होती है। इसीलिए फसलो को जलाने के लिए चट्टान, किला बनाकर, अयोध्य महल बना, फसलो को कुचलने के लिए तोपे और सेनाएँ अपने गोपुरो मे हमेशा तैयार रखती है । परन्तु जलवाह या तूफान, भूकम्प या क्राति से फसले नही ढहा करती——किले ओर महल ढहते है और मै स्वय ढहता जा रहा हूँ——इस सामने विराजे प्रलय सम्मुखे । इसके ज्वार का कृष्ण जल, अपनी हुकारे भरता हुआ लहरे मार रहा है जो कि स्वय मे कितना शात है, किन्तु मेरे चारो ओर हाहाकार करती हुई कीडे-मकोडो की सृष्टि वह निर्मित कर चुका है।।

मै चिल्लाकर उसे बद कर देना चाहता हूँ कि रजना मुझे नही सुनना यह सब, जिसे सुनकर मेरे जीवन मे यह हमेशा शाप की भॉति मेरा पीछा करे। किन्तु मै जानता हूँ कि मै कायर हूँ। मेरी कायरता ठीक उसी तरह की है जैसे भजनियो और कीर्तनियो की भीड मे खडे प्रत्येक व्यक्ति के मन मे यह कायरता होती है, कि आज की इस प्रार्थना से उसे यह 'लाभ' देवता से मिलना ही चाहिये और कोई उसके मन का चोर न समझ ले इसलिए वह ऑखे बद कर जोर-जोर से 'रघुपति-राघव राजाराम' चिल्लाता है । देखने और सुननेवाले समझते है कि चैतन्य महाप्रभु के बारे मे सुना ही सुना था कि कीर्तन करते हुए तन्मय होकर नाचने लगते थे, किन्तु देखने को तो आज ही मिला। प्रत्येक कीर्तनिया दूसरे को चैतन्य समझता है, जब कि न कोई चैतन्य है और न मीरा ही। यदि कीर्तन से ही फसले और बच्चे हो जाते तो भारतवर्ष मे सबसे अधिक अनाज होता और कीर्तन करती

हुई प्रत्येक हिन्दू बाँझ ओर विधवा को अपनी गोद मे वर्ष मे जाने कितनी बार बच्चो का पालन करना पडता। पुजारियो की कृपा से फसलो की तो नही पर बच्चो की बाते सुनी है-- लेकिन वह वात विषयान्तर होगी।"

परन्तु मै जाने क्यो यह आज तक नही समझ सका हूँ कि मुझे बे-सिरपैर की बाते सोच जाने का रोग क्यो है। बनियानो के डिजाइन्स् देखते हुए मुझे हमेशा समुद्र मे नहाते हुए स्विमिंग भूषावाले भद्रलोक एव महिलाएँ स्मरण हो आती है, जिनके बाल समुद्री हवा वैसे उडाती होती जैसे नारियल के लम्बे-लम्बे पत्ते। इसीलिए अपना काम मै कभी भी आफिस समय मे पूरा नही कर पाता हूँ और देर तक नित रुकना पडता है। पत्नी शाम को घर देर से पहुँचने के कारण हमेशा मुझ पर शक करती है कि मुझे अपनी उस इसाई स्टेनो से आफिस समय के बाद रुककर काम करने के बहाने, प्रेम की बाते करने का रोग है। सत्य और सशय, एक ही वस्तु की दो विभिन्न गतियाँ है।

खिडकी के तारो से बाहर एवेन्यू की चमकती हुई लाइटो की कतार दूर तक साफ दिखायी दे रही है। अहाते की सीमा पर लगी हुई मेहदी एकसीध मे सुबह ही काटी गयी थी इसलिये स्मार्ट तरीके पर लम्बी हरी चली गयी है। दिन मे भीग गयी थी ओर इस समय भी सडक की लाइटे उसकी पत्तियो उपरे पडी बूँदो पर कही-कही चमक रही है। सामने के बॅगले मे रहनेवाले बगीय परिवार मे से थोडी देर पहले तक किसी का स्त्री-कंठ, तराना ओर आलाप द्रुत एव विलम्बित लय मे साधना कर रहा था। परन्तु इस समय लगता है पूरी की पूरी एवन्यू शायद सोने की तैयारी कर रही है। किसी का बजता रेडियो सेट भी 'नमस्कार' करके चुप हो गया है। सिर्फ मोटर कपनी वाले अहाते लिये खॅजडी पर आदमियो के सहगान गाने का स्वर आ रहा है। ये इस मोटर कम्पनी मे काम करनेवाले कुछ मिस्त्री होगे, कुछ मजदूर और रिक्शेवाले होगे--जो इस समय शराब पीकर जोरो से फाग गा रहे है, या फिर होली गा रहे है। इनमे निश्चय ही आसपास के बॅगलो मे काम करनेवाले महाराज, नौकर ओर चपरासी भी होगे जो या तो चुपचाप या फिर आज भर की छुट्टी लेकर ओर जल्दी खाना बनाकर तथा साहबो का सारा काम करके इस समय उत्सवप्रिय हो रहे है। एवेन्यू की निर्जन सडक दिन मे पानी बरसने के कारण कुछ गीली हो गयी थी, ओर जो इस समय भी गीली है, जिस पर कोई खाली ताँगा किसी सवारी को छोडकर वापस लोट रहा है। ताँगेवाले की बीडी का गुल, मेहदियो के बीच-बीच से दिखायी पड रहा है। वह ताँगेवाला आराम से ताँगे के पिछले भाग मे बैठकर घोडे की रास ढीली किये इस शात एवेन्यू को जरूर ही इसी तरह पार करेगा। बॅगलो के कुत्ते आने-जानेवाले किसी अपरिचित पर अपनी भयानक डरावनी आवाजो मे रह-रहकर भूँकने लगते है।

रजना एकाएक उठी है और सामने की आलमारी का एक पल्ला खोलकर कुछ कागज टटोल रही है। मै समझता हूँ कि निश्चय ही उसे कोई आवश्यक पत्र या कागज याद

आ गया होगा, जिसे वह विचारो के तूफान मे भी महत्वपूर्ण मानती है । अब वह पल्ले बन्द कर अपने हाथो मे कोई चित्र लेकर लौटी ।––अपनी आरामकुर्सी पर बेठते हुए मेरी ओर देखते हुए कह रही है––

"जानते हो अकलक ! तुम्हारे सामने बैठी हुई यह रजना नाम की स्त्री कभी कितनी सुन्दर रही थी ? जिसे स्वय को उस दिन बम्बई के इडियन मिलिट्री अस्पताल मे अचानक मोह हो आया था ।"––

मै जानता तो नही हूँ, पर अनुमान कर सकता हूँ कि वह सुन्दरतम भी रही होगी ओर यह मेरा दुर्भाग्य है कि इस अनुमान का प्रमाण नही दे सकता किन्तु केवल विश्वास प्रकट कर सकता हूँ और यह विश्वास निराधार नही होगा इस बात का भी मुझे पूर्ण विश्वास है,

"कोई भी तुम्हे उस समय देखता तो ..."

और जैसी की उसकी वृत्ति है, वह बात काटकर बोल रही है––

"फिर लगे मेरी मिठबोली करने"––

ओर उसने हँसते हुए अपना चित्र सामने रख दिया । आज की इस रजना मे ओर चित्रवाली रजना मे इस सीमा तक अतर हो सकता है इसकी मै कल्पना भी नही कर सकता। आज की यह रजना तो उस सौदर्य की मात्र छाया है, और जब छाया इतनी सुन्दर है तो फिर ।

और मै, चित्र मे मुस्कराती हुई रजना मे विलीन होता जा रहा हूँ। चित्र देखकर कह सकता हूँ कि यह रजना का कम से कम दस वर्ष पुरानी छवि है जो कि स्वय, प्रथम कुँआरी रजना की छाया थी। रजना के छवितिये नयन, कितने विशाल और बारीक पल्कों के बीच ओस धुले इद्रफूल की भाँति लग रहे हैं। तब कदाचित बाल और अधिक घुँघराले काले रहे थे । कही से भी कोई रेखा मुख की गोलाई को विकृत नही करती । सगमरमर की तरह गाल कैसे उजले चिकनी गोलाई और ऊँचाई लिये हुए पतले-पतले ओठो मे परिणत हो गये है, दोनो बारीक काली भौहे––बिलकुल नाइटेगल के पतले तथा छोटे-छोटे डैने हो, जो कि इस रमणी को रूप की झील पारे उडाये लिये जा रहे है, और यह रूप इन दोनो डैनो पर उमड़ता हुआ समस्त आकाश के नील विस्तार को छा लेगा ।

"क्या देख रहे हो ऐसे घूरकर उसमे ?"

ओर मै देख रहा हूँ कि आँखे बद किये हुए रजना ने यह वाक्य अपने अदर के सतोष को अनुभव करते हुए कहा है । क्योकि वह जानती है कि कोई भी इस छवि को देखेगा तो वह बिना अभिभूत हुए नही रह सकता। मै नारसिसस के बारे मे नही जानता किन्तु रजना के बारे मे जानता हूँ। यदि उस मिलिट्री अस्पताल मे रजना दर्पण देखते हुए अपने आप से ही प्रेम कर बैठी थी तो कोई आश्चर्य की बात नही थी ।

आज की इस रजना की आँखो के चारो ओर जो कालिमा का घेरा बन गया है वह मुझे अच्छा नही लग रहा है क्योकि इस घेरे से हीन मैने इसके हरिण नयन बहुत सुन्दर देखे है। यह ठीक है, कि इस समय की आँखे ठीक वैसी लग रही है जैसे झील के किनारे-किनारे चारो ओर घने हरे बुरुस की झाडिया उग आयी हो--कदाचित् सौदर्य बढ ही गया हो, किन्तु चित्र की रजना का तब क्या हो? ?--और वे नील हरिण-नयन ! !

'और मै पागल हो उठा हूँ--

मै कह देना चाहता हूँ, और मै कह रहा हू--

"रजना ! मै तुमसे प्रेम करता हूँ।"--

रजना अपनी दोनो बाँहे आरामकुर्सी की पीठ पर डाले हुए है। उसकी बाँहो की गोराहट ऊपर बहती हुई लग रही है, जिनमे से बहुत हल्की नसे दिखायी दे रही है, वे नसे जिन्होने आज तक वह रक्त अपने मे दोडाया है जिसने रजना को सुन्दर बना रक्खा है। उसका वह हाथीदाँत की तरह चिकना गोरा शरीर इस गाउन मे बद है। जिस शरीर की लालसा इस समय मेरे मन मे जाग उठी है और जिसके न मिलने पर मै पागल भी हो सकता हूँ, वह इस गाउन मे बद है।

"पागल न बनो अकलक ! यदि तुम्हे यह शरीर दे देना मेरे हाथ मे होता तो क्या उस साँझ, माल रोड पर जब तुमने मुझे गुलमोहर के फूल दिये थे तब न दे डालती ? तब तो सब कुछ सम्भव भी था। यदि एक क्षण को भी अपने इस नारी शरीर को दे पाती, मेरे शरीर का कोई सा भी अग तुम्हे छू पाता तो मै कृतार्थ हो जाती अकलक ! मुझे जीवन भर यही तो खटकेगा कि जिन्हे मैने अपने को देना चाहा मेरा वह 'देना' किसी दूसरे के भाग का रहा। मै अपने मनोभावो को रूप ओर माध्यम कब दे सकी ? क्योकि नारी के पास उसका शरीर ही उसके सारे भावो की अभिव्यक्ति है। किन्तु हटाओ अकलक ! आज तो मुझे अपने इस तन से ही घृणा हो रही है ओर तुम्ही बताओ जिस वस्तु से मै घृणा करूँगी उसे क्या तुम्हे और कर्नल टॉमस तथा वॉन निकोलस को दे सकूँगी ? आज यद्यपि देने को कुछ भी नही है मेरे पास, किन्तु जब कुछ माँगना ही चाहते हो अकलक ! तो जूठन तो न माँगो, क्योकि उससे मुझे लगेगा कि जूठन के सिवाय मेरे पास और कुछ भी नही है।"

रजना ने एक क्षण को अपनी आँखे खोल ली है और मेरे हाथ से चित्र लेकर वह फिर उसे रखने के लिए आलमारी तक गयी और अब फिर वापस आकर कुर्सी पर बैठ गयी है।

"अकलक ! यदि तुम्हे कोई आपत्ति एव थकन न हो तो आगे शुरू करूँ ?"

"नही रजना ! थका नही हूँ, परन्तु मेरी सिगरेट जला दो।"

उसने अपनी लाल हथेलियो मे पीली हल्दी की गाँठ की तरह जलती हुई दियासलाई कितने सुन्दर ढग से मेरी सिगरेट की ओर बढायी है। मुझे लग रहा है कि मै

रजा मे कुछ और यदि नही पा सकता, तो सिगरेट जलवाने का यह सुख ही इतना सुन्दर और मीठा होगा कि मै जीवनभर इतना पाकर ही सतुष्ट रह सकूगा। परन्तु हमारा मनोग, प्रत्येक चरण पर 'बस यहाँ तक' करता हुआ ही हमे मृग की भाँति मरीचिका मे भटकाता है। और हम है कि जलते पैर लिये--लू और गर्मी मे पसीने से लथपथ दोडते फिरते है। यह 'बस यहाँ तक' न कही समाप्त ही होता है और न हम सतोष ही कर पाते है। यह तो एक निश्चित क्रम है, जो उतार का क्रम है, जो हर आगे जानेवाले पैर के साथ, पीछे वाले पैर को उससे भी अधिक आगे जाने के लिए ढकेलता है, परन्तु हम इसे समझ नही पाते। काई से भरी किसी घाटी पर पहला चरण बढाकर देख लीजिए--और आप निरन्तर बढते है। पर यह बढना, उस सामनेवाले गड्ढे की ओर है जहाँ सब जाकर समाप्त होने को है--समतल की ओर नही कि जहाँ से सब नव प्रारभ होता है।

"जब मेरी ट्रक वेकाई सैन्टर पहुँची लगभग ग्यारह बज चुका था और हमारी इन्चार्ज आफिस मे बैठी हुई मेरी प्रतीक्षा कर रही थी। रास्ते सब कच्चे बने हुए थे इसलिए धूल ही धूल चारो ओर से उड उडकर बाल, मुँह, कपडो पर छा गयी थी। उस समय गुस्सा आ जाता था जब सामान से लदे ईट के, चूने के, शीशो के, ट्रक,--मार धूल ही धूल उडाते हुए चारो ओर से बहुत ही तेजी से निकल जाते थे। रास्ते भर अपनी नाक से एक क्षण को भी अपना रूमाल हटाने का मै साहस न कर सकी थी। जिस समय इचार्ज से मैने हाथ मिलाया, उस समय रूमाल की गदगी देखकर मुझे कितनी झेप आ गयी थी, जिसे इचार्ज ने भी भापकर कहा था कि, महू की तरह यह जगह स्वच्छ नही है अभी, परन्तु बहुत शीघ्र ही सब कुछ ठीक हो जायेगा।

मै वहाँ से फिर ट्रक पर चढ अपने हॉस्टल पहुँची। सामान पूरी तरह ठीक किये बिना ही, किसी प्रकार बिस्तरा बिछाया और नहाने के बाद मुझे बहुत ही गहरी नीद आ गयी। अपनी खिडकी खोले साँझ के चार बजे तक सोती रही।

जब मै धुले हुए कपडे पहनकर निकलने को हुई, सन्ध्याधूप समाप्त होने को थी क्योकि सामने वह लम्बी सी पहाडी दिखायी दे रही थी जिसकी दूसरी तरफ भूपाल शहर है और सूर्य उस भूपाल की साँझ के आकाश मे अपनी अतिम किरणे डाल रहा होगा। उस पहाडी की तलहटी मे से कोई मालगाडी भूपाल की तरफ से आ रही थी जिसका इजिन बहुत सारा धूआँ फेकता हुआ चला आ रहा था। मैं इस समय अस्पताल जा रही थी, मुझे इचार्ज ने बतलाया था कि पाँच बजे जाकर मे बडे सर्जन को अपने पहुँचने की सूचना दे आऊँ और आज भर के लिए मेरा इतना ही काज था। अस्पताल वहाँ से दो मील से भी अधिक दूर था और इस दो मील के बीच मे कोई, किसी किस्म की बस्ती नही बसायी जा रही थी बल्कि मैने देखा कि तारो के घेरे एक के बाद एक घेरकर लगाये गये थे, जो आठ फिट से कम ऊँचे नही थे। प्रत्येक घेरे पर सतरियो का पहरा मिलता था जो आनेजानेवाली प्रत्येक ट्रक सवारी की बहुत ही सतर्कता से जाँच करता था

ओर जब सतरी 'ऑल राइट' कह देता था तभी मोटा-मोटा कॉटोवाला लोहे का दुआर खुलता था और इस तरह सात दुआर पार करने पड़ते थे। मै समझ गयी थी कि यह युद्ध मे पकडे बदियो का अस्पताल है इसलिए इतनी जॉच-पडताल होती है। इसमे अशिष्टता, पूछताछ जैसी कोई चीज ही नही थी। जब हर बार सतरी जॉच के लिए अपना हाथ बडी ही निर्ममता से शरीर पर फेरता था तब मेरे गाल कुछ क्षण को लाज तथा क्रोध से लाल हो जाते थे, परन्तु मै जानती थी कि यह सैनिक नियम है और मै जडवत् खडी रहती थी। मुझे नर्स की भूषा मे न देखकर कई बार उन्हे समझाने की जरूरत हुई कि आज ही मै नयी आई हूँ और इस समय मात्र रिपोर्ट करने जा रही हूँ। जब वे मेरा चित्र तथा मिलिट्री पास ठीक-ठीक देख चुकते थे, तब कही ट्रक आगे बढ पाती थी। जिस समय मै अस्पताल पहुँची, छह से ऊपर हो गया था और चारो ओर का पहरा, मै देख रही थी कि अत्यधिक कडा कर दिया गया था।

बीच के ऑपरेशन थिएटर के चारो ओर कॉटो से घिरी हुई बैरके थी, जिनके सामने उनके वार्डस के नम्बर टॅगे हुए थे। अधेरा हो गया था इसलिए वार्डसवाली अक-पट्टियो पर लाल बत्तियॉ जल रही थी। काफी घना कुहरा होगया था। मै देख नही पायी कि ये वार्डस की कतारे कितनी लम्बी और कितने घेरे मे बनी हुई है। पर मिलिट्री पुलिस की हर तीस सेकेन्ड के बाद चमक उठनेवाली मीलो लम्बी बहुत तेज टार्चे बहुत दूर तक गोलाई मे घूमती हुई एक दूसरे के प्रकाश को काटती हुई दिखायी पड रही थी।

मुझे महू स्मरण आया, वहॉ के जीवन मे कितना खुलापन था परतु यहॉ तो दम घोट देने वाली मिलिट्री पुलिस का पहरा था—उनकी बदूके और कॉटोवाले तारो के घेरे ही घेरे!!

जब मै सर्जन के सामने पहुची वह उसी समय कोई ऑपरेशन करके लौटा था, क्योकि मुझे उसकी प्रतीक्षा मे दस मिनट के लगभग बाहर तिपाई पर बैठना पडा था। तभी मुझे फुसफुस करते हुए उस बुड्ढे ईसाई चपरासी ने बताया था कि प्रमुख सर्जन, मेजर जास्टीन सन्ध्या के पॉच बजे से मेरा रास्ता देख रहे थे। मेजर जास्टीन को बिल्कुल भी जोर से बोलना अप्रिय है—व्यक्ति अच्छा है, और अग्रेज नही डच है।

तोलिये से अपने हाथ पोछते ही उन्होने मेरी ओर देखा और मेरा अभिवादन किया। अपनी चाय समाप्त करते हुए उसने मुझे बिहान छह बजे आ जाने के लिए कहा, क्योकि एक मेजर ऑपरेशन कल जल्दी करना है और मेरी आफिशियल रिपोर्ट मे यह बताया गया है कि मै बहुत ही कुशल हूँ अपने काज मे।

मेजर जास्टीन की आवाज मे बहुत ही विनम्रता मुझे लगी। उसकी छह फुट से ज्यादा ऊँचाई ने मुझ पर काफी प्रभाव डाला। विशेषकर उसकी वे तेज हरी ऑखे और उस पर चॉदी की सफेद फ्रेमवाला चश्मा और उसकी वह फ्रेंचकट दाढी। बाल बहुत कुछ पीछे

तक उडे से, परन्तु उस उडने से कदाचित वह अत्यधिक सुन्दर हो गया था। लाल तो वह इतना था अकलक! कि मैने भारत तो क्या होलैंड, फ्राम कही भी ऐसा लाल व्यक्ति नही देखा। आयु उसकी पैतालीस से कम की बिलकुल नही थी और मुझे लगा कि इन भयानक लाल बत्तियो और युद्ध बदियो—जो कि इन कटीले तारो से घिरे हुए है—के बीच एक व्यक्ति ऐसा मिला तो, जो कि मनुष्य कहा जा सकता है वरना ये वर्दियाँ और बन्दूके पहले है, बाद मे भी आदमी है कि नही, इसमे भी शका हो सकती है।

मै जिस समय बाहर निकली मेजर जास्टीन अपनी गाडी मे बैठकर जा चुका था और उसकी गाडी की पिछली लाल बत्ती उस पहले दुआर के पास दिखायी दे रही थी, कदाचित् 'बड दुआर' खुलने का रास्ता देख रही थी। इन तारो के घेरो के चारो ओर पुलिस की मोटरसाइकिले चक्करो मे घूमती हुई पहरा दे रही थी। मनुष्य को मार-मार कर जिलाया जाये इसके लिए चारो ओर मशीने दौडायी जा रही थी। इन तारो के भीतर न जाने कितने मानुष भय का जीवन जी रहे होगे। पता नही सब कैदी कहाँ बद है, क्योकि यह तो अस्पताल है, यहाँ जो बीमार होते है उन्हे ही लाया जाता है। शेष इस कुहरे के अधकार मे जाने कितने काँटो से घिरे पडे हुए इसी ऊपर के आकाश के तारो को देख रहे होगे। यह कृष्णाकाश और तारो को मै देख रही हूँ, जाने कितने गाँववाले अपने मकानो के सामने अलाव तापते हुए ठिठुरे आकाश और तारे देख रहे होगे—कोई गीत खँजडी के सग गाया जा रहा होगा—किन्तु सबकी परिस्थितियो मे कितना वैषम्य, कितनी विपरीत अनुगूत्रता है!!

अस्पताल की लॉरी पर चढकर जब मै हॉस्टल पहुँची तब जाडे के आठ बज गये थे ऐसा लग रहा था मानो आधी रात हो गयी है। मै इस समय नये वातावरण मे बहुत ही घबरा उठी थी, क्योकि मऊ मे रहकर मेरे सामने मिलिट्री का अभी तक वही रूप सामने आया था कि जीवन—मिलिट्री के लाल-लाल फूल, रिबन और डोरियाँ लगाये हुए उम्दा पालिश किये हुए बूट पहने, हाथ मे चमकती बैनटवाली बदूके ताने कितने सुषुमित ढग पर उन परेड ग्राउड्स के हरे लॉनो पर कवायद करता है और आर्डर मिलने पर गोली चलाकर निश्चित हो जाता है। जैसे उससे कोई सबध नही। गोली चल जाने पर उत्तरदायित्व जैसे सिर्फ दो ही का होता है—एक तो, गोली खानेवाले का और दूसरे, आज्ञा देने वाले का। फिर मोर्चे से लौटकर वर्दियाँ पहन जीवन—पार्को मे, रेस्तराओ मे, क्लबो मे, थिएटरो मे बैठकर या तो मूँगफली खाता रहता है या फिर शराब की लाल लहरो की असीम गहराइयो मे खो जाता है, या फिर ईसाई और एग्लो-इडियन लडकियो के रेशमी अगो की छाँहो मे। परन्तु यहाँ उसी जीवन को तारो से घेरकर मोटे-मोटे ताले डाल दिये गये है। सारी मानवता से काटकर जिन्दगी अलग कर दी गयी है। पहरा देनेवालो के साथ उन बदियो की क्या शत्रुता हो सकती है? जो हर समय या तो अपनी बदूके ताने या पिस्तोले बाँधे हिंस्र भेड़िये बने घूम रहे है। यहाँ यह जो

मिलिट्री है, इन कैदियो की यह देखभाल करने के लिए है कि यह बद मानवता, प्रलय की भाँति, जलजले के मानिन्द और भूकम्प की तरह न उठ खडी हो। इन तारो के घेरो को तोडती हुई बद जिन्दगी, शेष उन्मुक्त मानवता के साथ यदि मिल जाने का प्रयास ओर, विद्रोह करे, तो ये लोग गोलियो की बाड लगाकर इस उन्मुक्तता के प्रलय को वही रोककर गोलियो से भून दे।

मै इस तरह नित सोचा करती। एक दिन अस्पताल से पैदल यही सब सोचते हुए जाने कहाँ तक चली जा रही थी कि सामने से आती हुई मिलिट्री पुलिस की गारद के मार्च करते हुए मोटे बूटो की आवाज ने चोका दिया ओर एकदम 'हॉल्ट' की आज्ञा सुनायी दी। गार्ड कमाण्डर ने आगे बढकर मेरे मुँह पर टार्च डालते हुए कडकती हुई वाणी में पूछा, 'व्हेअर इज पास?' और मेरा हाथ बिजली की भाति अपने ओवरकोट की जेब मे रक्खे पास और आइडेटिटी कार्ड पर गया। गार्ड कमाडर सतुष्ट हो गया। परन्तु इस तरह घूमने की मुझे सख्त मनाही कर दी, और आगे कोई नही जा सकता कहकर उसने मुझे लौटने के लिए बाध्य किया। मै वापस होते हुए समझ गयी थी कि कि मुझे मह की जिन्दगी जो कि क्रिसमस के रगीन गुब्बारो की तरह रगमयी और हवा मे उड जाने वाली है, भूलनी होगी। क्योकि, यहाँ जो ये रास्ते है उन पर भी प्रत्येक व्यक्ति हमेशा और सब कही नही जा सकता है। सब बातो के लिए अलग-अलग 'पास' होता है। मेरे पास इतना ही 'पास' है कि मै इनकी गोलियो के बीच मे एक सीमा तक ही घूम सकती हूँ ओर उस सीमा की परिधि मे कोई गोली मेरे सीने के पार नही जायेगी।

हॉस्टल पहुँचकर मैने दीवाल पर कैलेन्डर टॉगा ओर देखा कि क्रिसमस मे तीन दिन ओर शेष है। वे दिन स्मरण आये जब दशहरे या दीवाली या फिर पजाब के गॉव मे थी तब बैसाखी का पथ भी कितने उत्साह से जोहा करती थी। ईद के बारे मे यही याद आया करता था कि सैयद के साथ खूब गोश्त और मीठी सिवइयाँ थी, बाकी अहमद के साथ तो बम्बई मे ईद, मार खाते गुजरती थी।

टेबल पर अपने बॉक्स से निकालकर आज पहली बार कर्नल टॉमस का चित्र पोछ करके सजा दिया और एक क्षण को उसका वह गोरा भूरे वालो भरा हाथ स्मरण आया, जिस पर मैने तीन चुम्बन, सलमे सितारे की तरह टॉक दिये थे और वह उस क्षण के बाद से दूर, बहुत दूर चला गया। मैने उठकर तौलिये से हाथ-मुँह पोछकर पोथी पढनी प्रारभ की और पढते पढते ही कम्बल मे लिपटी सो गयी। कदाचित लाइट, रात भर जलती रही थी।

फिर तो नित अस्पताल की लॉरी आती थी और बिना किसी भूलचूक के, बिना किसी को क्षम्य किये सतरियो के हाथ रोज सुबह शाम शरीर पर फिरते थे और 'ऑल राइट' सुनने की प्रतीक्षा मे खडी रहती थी। अस्पताल की बँधी हुई ड्यूटी और बँधा हुआ काज। प्रारभ मे जब वृत्ति नही थी तब दवाइयो की तेज गध, घावो का

पीला पीलापन, और घटो ऑपरेशन रूम मे खडे खडे 'फार्क' 'नाइफ' 'ऑइन्ट' वगैरह सुनना पडता था ओर मरीजो की ऑते, लाल गोश्त, चरबी से भरी हुई चमडियाँ, सडे हुए पैर जिनमे कीडे रेगते हुए, ओर भी जाने क्या क्याअकल क ! खाना खाती बेला याद आने लगते थे, और तब शुरू मे खाने पर से उठ भी जाती थी। महू मे यह सब कभी कभी ही देखने को मिलता था, परन्तु यहाँ आने पर तो सिवाय इसके ओर कुछ होता ही नही था। जहाँ मै काम करती थी यह बहुत ही सीरियस केस के लिए, साथ ही कैदियो मे जो अफसर हुआ करते थे उनके लिये अस्पताल था, अधिकतर लोगो की टाँगे ओर हाथ काटे जाते थे । क्योकि युद्ध की गोलियो के कारण इनके पैर छलनी हुए रहते थे । अकलक ! कह नही सकती थी जब उन इटालियन बदियो की टाँगे या हाथ काटकर अलग कर दिये जाते थे तब वे कितने घृणित लगते थे। बालो भरा पैर और खून से लथपथ जिसमे कई जगह पीले, हरे लाल घाव, जिनमे पीली पीली पीप ही पीप पड गयी हो, एकदम कटकर अलग होने पर भयकर वदसूरत लगते है, अकलक ! तुम नही जानते। ओर जानते हो ? लारियाँ ये कटी टाँगे, हाथ, वगैरह तरकारियो डठलो की तरह लादकर ले जाया करती थी। मेरे शरीर मे जाने कितनी कॅपकॅपी भर जाया करती थी ओर जब मेजर जास्टीन साबुन से हाथ धोते हुए पूछा करता था—'डू यू माइन्ड ऑल दैट ?'—कह हँस दिया करता था तब उसका ऊपर का ओठ बहुत देर तक फडका करता था।

"शाम को जब मेजर जास्टीन के साथ राउन्ड पर जाया करती थी तब हम लोगो के साथ प्रत्येक स्पेशल वार्ड का एक-एक सतरी अपनी बदूक ताने आगे-आगे चलता था ओर इतने जोरों से 'ऑर्डर ऑर्म्स' करता था कि कितने ही गहरे सोये हुए व्यक्ति की भी नीद टूट सकती थी । मै मेजर जास्टीन को हाथ मे रिपोर्ट देकर तापमान ओर दवाइयो के बारे मे सब बतलाया करती थी। वह मुस्कराता हुआ मेरी ओर 'स्मार्ट' कहकर रोगी को घूरते हुए बाहर निकल आता था ओर पहरा देनेवाला सतरी बद करनेवाले गार्ड से पूछ लेता था

'लॉक ओ के ?'—

"'लॉक ओ के' कहकर गार्ड पहरा देनेवाले सतरी को ताली देकर आगे बढ जाता। हर पद्रह मिनट पर सतरियो को रात मे टार्च की रोशनी से जाँच करनी पडती थी कि द्वारो के ताले ओर उन तालो के भीतर के बदी सब ठीक है ।

"जब कभी रात के दो बजे या आधीरात मे किसी आवश्यक काज से इन कैदियो के पास जाना पडता था तो प्रारम्भ मे हमेशा कलेजा धक्-धक् किया करता था अकलक ! उनकी बढी हुई दाढियाँ उनके चेहरो को कितना विद्रूप किये रहती थी। उनकी आँखो मे कितनी गहरी निराशा ओर जीवन के प्रति नैराश्य टपका करता था। मुझे लगता था कि उनकी आँखो मे वे कटीले तारो के घेरे, गोल-गोल छाँहो मे हमेशा हमेशा के लिए उनमे बिध गये है, बस गये है। ओर वे आँखे, हमेशा के लिए अधी हो गयी है।

उनमे ज्योति नही रह गयी है, बल्कि वे आँखें अब पत्थर की हो गयी है, जैसी की पत्थर की आँखे हुआ करती है ।

एक रात--

"मै नाइट ड्यूटी पर थी ओर उसी दिन साँझ को एक इटालियन सार्जेंट की दोनो टाँगे काट डालनी पडी थी । वह इतना चीखा चिल्लाया था कि बस ! ! अकलक ! मै देखती हूँ कि व्यक्ति की स्वतत्रता बँधते-बँधते किस सीमा तक बँध जाती है इसका उदाहरण मैने उस रात ऑपरेशन टेबल पर देखा । वह अपने पैरो मे जस्ते की गोलियाँ लिए हुए मर जाना स्वीकार सकता था, परन्तु वह टाँगहीन होकर जीना ओर वह भी बदी का जीवन कभी स्वीकार नही सकता था । उसके कमरे के सामने बहुत कडा पहरा कर दिया गया था ओर मुझे हर दो-दो घटे के बाद रिपोर्ट ओर दवाई के लिए जाना पडता था । मै जिस समय उसके कमरे मे जाती वह मुझे भूखे भेडिये की तरह देखने लगता था । वह इगलिश भी ठीक नही जानता था, उसे मात्र कामचलाऊ कुछ शब्द आते थे । उसकी वे आँखे आज भी मुझे स्मरण पडती है कि जैसे मेरे जीवन क आकाश मे दो जलते हुए नक्षत्र बोल रहे हो, जैसे कि वह उस रात बोल रहा था--

'सिस्तर ! मुझे छोड दो, मुझे यहाँ से भाग जाने दो, मै अपनी इटली जाऊँगा --'

"ओर वह कितनी पीडा के साथ अपनी कटी हुई टाँगे देखता था । आँखो मे कैसा चमकता हुआ पानी भर आता था । उसकी बढी हुई भूरी दाढ़ी से यह स्पष्ट लगता था कि वह अभी तीस वर्ष का भी नही होगा । अपने उज्ज्वल भविष्य के सबध मे उसने बहुत कुछ सोच रखा होगा । क्या मालूम वह इटली का सबसे बडा चित्रकार बनना चाहता होगा । क्या मालूम उसकी प्रेमिका प्रतीक्षा मे बैठी होगी । वह अपने देश का प्रिय कवि भी हो सकता है । कदाचित् लग्न किया हो । उसके फूल जैसी, मेरी रिनी जैसी सोनी बच्ची होगी । उसकी पत्नी को क्या मालूम होगा कि उसके पति की टाँगे काट डाली गयी है । वह शायद इटली का महान नर्तक बनना चाहता होगा--पर अब तो वह टाँगो से हीन है । इटली की राजनीति ने, फाशिस्ती सरकार के जाल ने उसके कलात्मक हाथो मे बदूक थामने को बाध्य किया होगा, और उसे बिना इच्छा के ही ट्रक पर लादकर लडाई के मैदान मे भेज दिया गया होगा । उसके बाद वह पकड लिया गया होगा । अब तो वह दोनो टाँगो से हीन होकर बदूको की छाँहो मे लेटा हुआ जीवन भर इन्ही तारो के घेरे मे दम तोड देने के लिए सड रहा था ।

मै जिस समय उसके कमरे से बाहर आयी, चाँद की मदिम सी ज्योति पीली होकर म्यूनिसिपिल लैम्प की भाँति धीमे धीमे बुझ रही थी । धरती ऐसी लग रही थी जैसे पसर कर, लम्बी होकर आकाश के अदर थककर सो रही हो । धुँधले आकाश मे कुछ तारे क्षीण ज्योति मे सो रहे थे । चारो ओर मिलिट्री पुलिस की साइकिले गुर्राती दौड रही थी । हजारो दूर-दूर लगे हुए म दे लाल कुमकुमे जल रहे थे कि एकाएक पीछे की तरफ जिधर मै

कभी नही गयी थी और जहाँ आधे से अधिक बदी थे–जो सभी जर्मन थे, वहाँ पुलिस की हजारो सीटियाँ चीख रही थी। खोज-ज्योतियाँ (सर्चलाइटे) चारो ओर धरती के समानान्तर एक दूसरेको काटती हुई गोल घेरे बनाती हुई घूमने लगी। मै समझ गयी कि या तो कोई बदी भागा है, या फिर जर्मनो ने विद्रोह किया होगा।

मुझे लगा कि जैसे बैरागढ का यह कटा हुआ बनैला मैदान पूरा का पूरा जाग पडा है। सतरियो की 'ऑल राइट' की हुकारे एक सिरे से दूसरे सिरे तक दौडने लगी थी। ट्रको और लारियो पर सैकडो की सख्या मे मिलिट्री उधर ही दौड रही थी जिधर जर्मन बदी बद थे। छोटी-छोटी मशीनगने भड-भड करती हुई कच्चे-पक्के बने पथो पर दौड रही थी। बडी सतर्कता के साथ बीमार कैदियो की बैरके एक-एक करके जॉची जा रही थी और सतरी आपस मे धीरे-धीरे फुसफुसाकर बाते कर रहे थे––

"साले जर्मनो ने शैतानी की होगी, बडे हरामी के बच्चे है।"––

"नही जी सालो को खिलाओ भी और इनकी शैतानी भी सम्हालो, एक बार भूनने का हुक्म हो जाये तो कीडो की तरह मार-मारकर भून दिये जाये, क्या रक्खा है इनमे ?' ––

और उधर का आकाश मशीनगनो तथा गोलियो की ज्योति से पीला होकर चिल्ला रहा है।

नाइट ड्यूटी करके भोर चार बजे के लगभग जब मै हॉस्टल पहुँची तब तक भी मेरी धुकधुकी बद नही हुई थी और मै अपने लिहाफ मे औधे मुह कानो के पास बहुत सारा कम्बल लपेटकर चेष्टा करने लगी कि अब कोई गोली की आवाज न सुनायी दे, पर मेरी बद ऑखो के सामने से दौड रहे थे उस इटालियन सार्जेट के वे कटे हुए ठूठ जैसे बाकी के हिलते पैर, जिन पर सफेद पट्टियाँ बंधी हुई टिचर की गधवाली, और उसकी वह खूल्वार सी दाढी तथा भावहीन क्रोधी ऑखे––और वह पीला जलता हुआ आकाश जो गोलियो की बोली मे बोल रहा था––जाने कितने जर्मन भून दिये गये होगे, जाने कितनो को अब मारा जा रहा होगा, मार खाते हुए उनके नगे शरीर जिन पर कोडो के लाल-लाल चिन्ह, मारो की हरी पट्टियाँ!! क्या ये इतने भयानक है ? इन्हे मोह माया-ममता नही है ? क्या ये स्वय लडना चाहते थे ? या इन्हे हिटलर और मुसोलिनी की इच्छाओ ने झोक दिया ?

और मै शायद सुबह जब दूसरी लडकियाँ ड्यूटी पर जाने की तैयारियाँ कर रही थी ––तब कही सो पायी थी। जब जागी तो धूप काफी आ चुकी थी, और अभी मे नहा-धोकर अपने केश सँवार ही रही थी कि तब तक मेट्रन ने मुझे सूचना दी कि नीचे मेजर जास्टीन मेरी प्रतीक्षा कर रहे है। उन्हे पहली बार अपने लिए इस प्रकार प्रतीक्षा करते हुए देखकर कुछ आश्चर्य किन्तु हल्का सुख भी हुआ।

मै जब पहुँची तब वे बाहर के लॉन मे खडे अपने कुत्ते के साथ हॉस्टल के छोटे से लॉन के पास हरी घास पर घूम रहे थे। मुझे आता हुआ देखकर उनके चेहरे पर वैसी ही हँसी आ जाती थी जैसी कि किसी मिठाईवाले या गुब्बारेवाले को आता देखकर बच्चो के

मुखो पर आ जाती है। अकलंक ! यह उपमा मेरी नही है, मेजर जास्टीन स्वय कई बार मुझे यह उपमा सुना चुका था – उसने आज फिर वैसे ही गुलाब मेरे बालो मे लगाना चाहा जैसे कि उसने क्रिसमस की सन्ध्या को नये वर्ष के उपलक्ष मे भेट देते समय लगाया था।

उसका वह लाल गुलाब जिसके बारे में हँसकर वह कहा करता था––"रजना ! मै बटालियन हूँ, और तुम बटालियन आफिसर, और इसलिए गुलाव का फूल तुम्हे लगाना चाहिए।"––

मै उसकी इस भाषा को न जानती थी सो तो नही था, पर वह ––बहुत ही सीधा था, साथ ही क्रोधी भी बहुत ! क्रिसमस की सन्ध्या को हम लोग भूपाल के सैनिक क्लब मे जाकर रात भर नृत्य किये थे। अकलक ! वह शराब अधिक तो नही पीता था परन्तु कम पीने पर भी बहुत ज्यादा पी गये का आभास हमेशा देता था। हम लोगो ने रास्ते मे उस साँझ मिलनेवाले सब बच्चो को बहुत सारे गुब्बारे और चाकलेटे बाँटी थी, तब हम लोग भोज के बाद सिनेमा भी गये थे। सिनेमा के बाद उसे फिर नृत्य का शौक हो आया था और इस तरह पूरी रात्रि को उसने उत्सव बना कर ही छोडा। उसकी मेज पर उस सन्ध्या को लिया गया मेरा चित्र, जो कि उसने स्वय ही खीचा था, उसके बाद से सदा रखा रहता था। एक गुलाब नित उस चित्र के सामने भी सजा दिया करता था। वह बहुत हँसमुख व्यक्ति था पर बहुत दुखी था। अकलक ! उसका पिता हॉलैंड के मारकेन टापू का रहनेवाला था जो कि लकडी के जूते तथा लकडी पर तरह-तरह के फूल, पत्तियाँ काढने का काम करता था। जास्टीन, अपने माँ-बाप की आठवी सतान था और इस आठवी सतान के पैदा करने मे उसकी माँ की मृत्यु हो गयी थी। जास्टीन के सब भाई-बहन आवारा थे और वे दिन भर पनीर बेचनेवाले बाजार मे पनीर की चोरी किया करते थे। समुद्र की छोटी-छोटी मछलियाँ कच्ची ही पनीर मे रखकर खाते फिरते थे। जास्टीन, जब आठ वर्ष का हुआ तब तक उसका पिता भी मर चुका था और उसका बडा भाई पागलघर मे बद कर दिया गया था, तथा उसकी बडी बहन को उसके किसी प्रेमी ने छुरा मारकर समुद्र मे फेक दिया था। इस मारकेन टापू से भागकर वह आम्सटरडम् पहुँचा और बेकरीवालो के यहाँ रोटी सेकने का काज करने लगा। वह रात्रिशालाओ मे जाता और पढता था। इस तरह उसने पढा अकलक ! तथा लीडन यूनीवर्सिटी से डाक्टरी पास की। कदाचित तभी उसने लग्न भी किया और बच्चे हुए। ओवरलून नगर मे उसने अपनी डिस्पेसरी खोल रखी थी और उसका इरादा बर्लिन जाकर डाक्टरी मे शोध कार्य करने का था। तब तक जर्मनी ने युद्ध छेड दिया था, जर्मन सेनाए हौलैंड की सीमा पारकर उसके देश मे घुस पडी तथा नगरो को नष्ट करती हुई अदर धँसने लगी। पूरा दक्षिणी-पूर्वी हालैंड नाजियो ने अपने टैको और फौजी बूटो से कुचलकर रख दिया। एक दिन वह अपनी डिस्पेसरी से लौट रहा था। जर्मन विमानो का, सुबह के दो दस्ते के बाद यह तीसरा दस्ता था जो कि इस समय फिर

आक्रमणकरने के लिए गुर्राताहुआ आया था। वह हमले मे बचने के लिए खाइयो की ओर दोडा और विमानो ने बम बरसाना शुरू किया। उस खाई से उसका घर ठीक दो सौ गज की दूरी पर था ओर वह हर बम गिरने के साथ बार-बार देखता था कि कही ऐसा न हो कि कोई बम उसकी बाडी पर भी गिरे और उसके फूलो जसे दो बच्चे ओर मोम सी कोमल उसकी पत्नी ढहकर चूर हो जाये, समाप्त हो जाये। उसने देखा कि विमानो मे बैठे हुए बमघाती इतने नीचे बैठे हुए बम गिरा रहे थे कि ओवरलून नगर का कोई भी घर वे खडा नही देखना चाहते थे। पूरे एक घटे तक बम, ओलो की तरह गिरते रहे ओर सैकडो अट्टालिकाएँ ढह गयी, उसी मे उसकी पत्नी ओर दोनो बच्चे भी समाप्त हो गये।

इसके बाद मेजर जास्टीन सैनिक सर्जन होकर मित्र-राष्ट्रो की सेना के साथ घूमता हुआ भारतवर्ष आया था। मै जब बैरागढ पहुँची थी तो, उसे बेरागढ मे आये हुए केवल आठ महीने हुए थे। अपने परिवार के नष्ट हो जाने के बाद से वह कुछ चिड-चिडा और क्रोधी भी हो गया था। जब कोई जोर से ऊँचे बोलता था तो वह मुझसे हमेशा कहा करता था,

"रजना! लोग बमो के धमाके की तरह क्यो इतना ऊँचा बोलते है?"

मै देख रहा हूँ कि रजना को एक-एक घटना कितनी स्पष्ट, पानी मे धुली हुई पत्ती की बारीक से बारीक नसो की तरह साफ दिखायी देने लगती है। इस तरह रजना अपने जीवन के सारे अनुभवो को चाहे तो घटो मे भी विभाजित करके कह सकती है। रजना को हमेशा एक न एक व्यक्ति मिलता है जो या तो अपनी अच्छाइयो के कारण या अपनी बुराइयो के कारण इसके जीवन का एक अश बनता चला जाता है ओर रजना को इसमे कभी ही आक्रोश आया हो, अन्यथा अपने आप को परिवर्तनो के हाथो मे ढीला छोडते चले जाना ही सुहाया है। —किन्तु ऐसा क्यो?

क्या यह इसकी कमजोरी नही है? पथ मे मिलनेवाले प्रत्येक नुकीले पत्थर से न तो हम ठोकर ही खाते हैं ओर न प्रत्येक सुन्दर बॅगले का रग, डिजाइन तथा लॉन ही स्मरण रहता है। इन सब मे दो एक ही हमारे स्मरण के आकाश मे चमक कर रह जाते है, कुछ दो-एक ही हमारे पैरो को लहूलुहान कर देनेवाले पत्थर भी मिलते है। किन्तु प्रत्येक वस्तु, यदि अपना प्रभाव अकित करना प्रारम्भ कर दे, तो हमारे पास स्वय अपना कहने को कुछ भी शेष न रह जाये।

उसने मेरी ओर अपनी बडी-बडी ऑखे उठायी है—

"क्या, ग्यारह बज गये अकलक!"

"हॉ, और क्या, रजना! तुम क्या समझती हो?"

"यदि ग्यारह न समझती तो क्या ग्यारह कहती?"

ओर रजना ने मेरी ओर तरस की दृष्टि से हँस दिया है, जैसे अकलक अभी तुम्हे

रजना को समझने के लिए बहुत समय लगेगा। मुझे रजना का ऐसा बोलना अपमान सा लगा है ।

"अकलक ! तुमने यह नही पूछा कि मै विगत की घटनाओ मे इतनी उलझी भी थी ओर मुझे वर्तमान के इस क्षण के समान जैसी छोटी वस्तु का भी स्मरण कैसे रहा ? अकलक ! यही तो है जिसने रजना को कभी भी न रुकने दिया ओर न ठहरने दिया। प्रत्येक क्षण मुझे विपरीत परिस्थितियो ने न तन्मय, न घायल कुछ भी तो नही होने दिया। परन्तु आज तक किसी भी क्षण को मैने रोकने की चेष्टा भी नही की, क्योकि रोका वह जाता नही, ओर, यदि यही होता तो मै सैयद को खैबर के दर्रे मे क्यो खोती ? मेरे चाहने पर भी तुम मेरी चाह की परिधि तोडकर क्यो चले गये ? मै जानती हूं कि तुम कभी भी इस सबको समझ नही पाओगे ओर इसीलिए कही यह न सोच लेना कि मै तुम्हे आज यह सब इसलिए सुना रही हूँ कि तुम सब सुनते चले जाओ ओर वितृष्णात्मक सहानुभूति लेकर मेरा न्याय करो। अपना न्याय कराने के लिए मैने तुम्हे आज रोका है, ऐसा कभी मत सोचना अकलक ! रजना आज जब किसी भी बात की अपेक्षा नही करती है तब वह तुम्हारा न्याय लेकर क्या करेगी ?"

किन्तु मै कहता हूँ रजना कि मै न तो यह सब कहता ही हूँ ओर न सोचता ही हूँ।

मुझे इस नारी का, पहले तो अपना विगत कहकर नैकट्य प्रदर्शित करना ओर तत्पश्चात् अपने वर्तमान की दर्प मीनार पर खडे होकर दूसरे को छोटा कहना चुभ रहा है । शायद वह कमजोरी कि, मै इसे प्रेम करता हूं, इसके चेतन मन पर अचेतन रूप से उभर आयी है । यह पूरी कथा सुनाकर अपने जीवनभर का प्रतिशोध लेना चाहती है एक व्यक्ति से, क्योकि इसके निकट मै पुरुष पहले हू ओर सब कुछ बाद मे । शायद इसीलिए यह मुझे अपने सौदर्य के सहस्रफनो से मोह रही है---ओर मोह की सीमा मे आ जाने पर प्रतिशोध अधिक सहज होगा--ऐसा विश्वास इसके मन मे सम्भव है, हो सकता है। क्योकि इसके अदर का व्यक्ति तो कभी का समाप्त हो चुका सा लगता है । इस के उस व्यक्ति के स्मशान पर ही , रजना की सौदर्य-प्रतिमा स्थापित हुई है जो केवल स्वय ही विषमय नही, वरन् चुम्बनो से विष की सृष्टि भी कर सकती है । इसीलिए रजना को चाहकर क्या प्रत्येक व्यक्ति को नही बुझ, मिट जाना पडा ? विष, अन्य की मृत्यु ओर स्वय का जीवन है ।

रजना अन्य के लिए विष का चुम्बन, किन्तु स्वय के लिए योवन और रूप की मुस्कान !!

और मै ग्लानि से भर उठा हूँ।

अब थोडी हल्की बयार चलने लगी है। वायरे मे पानी की नमी ओर मेहदी की तेज गध आ रही है। यूकेलिप्टस की पत्तियाँ हवा म बोल रही है। और साँझ से उदास अशोक तथा यूकेलिप्टस, लगता है, इस वेला एकदम प्रसन्न हो उठे और शायद अपनी पत्तियो की नमी सुखाने की जल्दी कर रहे है, परन्तु हवा पर पानी का दबाव स्पष्ट दिखलायी दे

रहा है। ऐसा लगता है कि वर्षा या तो पास मे कही हो रही है या फिर थोडी देर मे बादल नीचे उतर आयेंगे, और तब छतो, सडको, लॉनो, पार्को, को भिगोना प्रारभ कर देंगे।

"अकलक! सोचते होगे कि मेरा व्यवहार विचित्र होता है। मै इसे नही जानती हूँ यह नही, परन्तु मै क्या कर सकती हूँ? मै जानती हूँ तुम सोच रहे होगे कि मैने व्यर्थ ही तुम्हे सन्ध्या जाने से रोका। किन्तु यह व्यर्थ तो, यदि न मिलते तब हो सकता था, परन्तु जब मिल गये हम लोग, तब न सुनाकर निश्चय मै तुम्हारे निकट अपराध ही करती। अपने निकट तो मैने कई अपराध किये, किन्तु क्या कर्नल टॉमस, वान निकोलस और तुम्हारे निकट कोई अपराध कर सकूँगी? कर्नल टॉमस के लिए भी पथ देखा, पर अब और ठहरना असम्भव है। वह निश्चय ही अब नही रहा है, और वह वान ..गधर्व .अब कहाँ ११ वैसे तो तुम भी नही रहे थे, किन्तु तुम आज अचानक पुरी के मित्र रूपे, समाप्त के पूर्ण विरामचिन्ह की भाँति जब बँगले तक आ ही गये थे तो तुम्हे क्या न न्योतती? न्यौत कर क्या यह सब न कहती?"

मै जानता हूं कि रजना को बात कहना भी आता है और बात को सम्हालना भी।

"तो सुनो अकलक! मुझे सब कुछ समाप्त कर लेने दो तब एकसाथ ही तुमसे क्षमा माँग लूँगी। इतने निकट के व्यक्ति से बार बार क्षमा माँगते हुए लाज जो आ जाती है। क्या करूँ ऐसी लाज तुम नही जानते हम स्त्रियो के लिए बडी सहज है अकलक!"

और तब वह अपनी उँगलियो मे पहने हुए अँगूठी के लाल नग से खेलती हुई कह उठी है—

"मेजर जास्टीन मुझसे अपने हौलेंड के बारे में इस तरह सुनाया करता था जैसे मै भी उसके ही देश की हूँ, कि किस प्रकार इस लडाई ने उसके देश के उत्रेच्ट नगर के चर्चो को बमो से नष्ट कर दिया। वह बहुत ही धार्मिक और केथोलिक चर्च को माननेवाला व्यक्ति था। उसने बरसो तक कई चर्चो मे 'विशप' का भी काज किया था। जब वह बच्चा था तब उसे 'क्वॉयर बॉय' बनकर प्रार्थना गाना अच्छा लगता था, किन्तु वह इतना गदा था कि अपने लकडी के जूते पहनकर किसी भी चर्च मे जाने का साहस नही कर सकता था। तब वह चर्च की खिडकियो के बद शीशो के पीछे बदरो जैसा चढकर प्रार्थना गाता था और चौकीदार के डडो की मार भी इस तरह से चोरी से चर्च पर चढने के लिए खानी पडती थी। उसे ससार मे दो ही चीजो से सबसे अधिक घृणा रही है एक तो, जर्मन सेनाओ से, दूसरे, रूसियो के साम्यवाद से। वह इगलैड का सबसे बडा समर्थक इसलिए था कि उसके यहा के फिलिप ने इगलैड की मेरी स्टूअर्ट के साथ शादी की थी और तब फिलिप इगलैड का भी सम्राट् बना था। वह बहुत ही भाग्यवादी आदमी था। उसे उन दिनो चेम्बरलेन का बार-बार हिटलर से सधि करने का प्रयास बुरा लगता

और वह कहता था कि इसमे भी साम्यवादी रूस की निश्चय कोई चाल है और जिसे ये लोग नही समझ पा रहे हैं। रूस ने जर्मनी से सधि करके पूरे यूरोप को गढ्ढे मे डाल दिया है। हौलैंड की सीमा मे जर्मन टैको को देखकर उसे इगलैड, फ्रास और अमरीका पर क्रोध आता था कि वे क्यो नही हिटलर को स्तालिन से लडवा देते ? हिटलर पूरे यूरोप का शत्रु है तो ये स्तालिन और साम्यवादी रूस पूरी मानवता, विश्व के लिए खतरनाक है। उसका तर्क था कि जब ईश्वर ने ही छोटे-बडो का भेद बनाया है तब गरीब और अमीर वाले सृष्टि के नियम को ये साम्यवादी क्यो तोडना चाहते है? साम्यवादियो का यह कथन कि यह धरती और सारा शासन मजदूर तथा शोषित वर्ग के लिए होना चाहिए, षड्यत्र है उस परम्परागत चली आती हुई आज तक की सम्पूर्ण भद्र सस्कृति को तहस-नहस करने के लिए। मैने देखा है अकलक ! कि जब कभी साम्यवादियो की चर्चा उसके सामने आयी है तो उस जैसा बुद्धिमान् व्यक्ति भी पागलो का सा प्रलाप करता देखा गया । मै नही जानती, क्योकि राजनीति से मेरा सम्बन्ध भी नही है, कि उसकी इस घृणा का क्या कारण था ? सम्राज्ञी जूलियाना का कनाडा चला जाना उसे अच्छा नही लगता था क्योकि उसका कहना था कि यूरोप और अमेरीका की इन राजकीय नीतियो पर रानी को दबाव डालना चाहिये।

"वह मुझसे हमेशा पूछा करता था कि उसका कोई सम्बन्ध यहाँ की राजनीति से तो नही है ? और जब उसे मालूम हुआ कि मै पहले हिन्दू थी और पति ने छोड दिया तब उसे बहुत दु ख हुआ था परन्तु मेरे इसाई हो जाने पर उसने बहुत प्रसन्नता प्रकट की थी। वह गाँधी को मानता था किन्तु उसकी राजनीति को वह भयावह समझता था। वह कहा करता था कि उसका देश अगर यव आदि देशो मे वहाँ के काले लोगो को छूट देता जायगा तो उसे उन उपनिवेशो से हाथ धोना पडेगा। जब कि यव देश की रबड से उसके देश की साफ-सुथरी सडके बनायी जा रही थी——अगर यह लडाई न हुई होती तो उसके देश की धरती कितनी लचीली सडको से अब तक भर गयी होती। मगर वे यव लोग उपद्रव मचाये हुए है जब कि उसके देश को एक तो अपने घर मे लडना पड रहा है, दूसरे जापानियो ने उसके उपनिवेशो पर आक्रमण कर दिया है । ऐसे समय मे यव निवासी अवसर का दुरुपयोग करेगे । वे न तो जापानियो के हाथ मे ही रहेगे और न उसके अपने देश हालैड के ही। ठीक वैसी ही परिस्थिति गाँधी इस भारतवर्ष मे कर रहा है। यहाँ के लोगो को अग्रेज शासन से और क्या चाहिए ? माना कि इस देश पर डचो का भी कभी अधिकार था और अग्रेजो ने वह अधिकार छीन लिया, किन्तु वह केवल इस बात से ही अग्रेजो के हाथ से छीननेवाले गाँधी और उसके साथियो को तो कभी अच्छा नही कह सकता है न ?

"वह अपनी डिनर टेबल पर मुझसे कई बार कह चुका था कि काली जातियो को भड़काने मे रूस का बडा हाथ है और चीन के गृह-युद्ध मे तथा जापान के युद्ध के पीछे

भी रूप का ही हाथ है। क्योकि वह कहा करता था कि साम्यवाद, मजदूरो का साम्राज्यवाद है, जो ईश्वर के बनाये गये अमीर-गरीब के भेद को मिटाने का प्रयास है--जो कि असम्भव है, क्योकि इगलैड, फ्रास, अमरीका, हालैड कोई भी देश ईश्वर और सृष्टि के नियमो के विरोध मे खडे नही हो सकते। इस युद्ध का पक्ष यदि बदल गया तो जर्मनी इस युद्ध मे रूस को समाप्त कर देगा।

मै जानती हूँ अकलक! कि तुम राजनीतिक व्यक्ति हो, तुम उस व्यक्ति के बारे मे कुछ कहना भी चाहोगे कि वह साम्राज्यवादी व्यक्ति था या प्रतिक्रियावादी व्यक्ति था किन्तु मै उसके विपक्ष मे कुछ नही सुन सकती हूँ, क्योकि वह बहुत भला था ओर मैने उसके साथ विवाह भी किया था"--

मुझे फिर एक धक्का लगा है। अपने मन के साथ खेलनेवाली इस नारी को क्या कहूँ? जो कही किसी भी दशा मे भेद नही करना जानती है। राजनीति की बात एक क्षण को अलग भी कर दी जाये, फिर भी जो इस देश के बारे मे इस तरह की धारणा लिये था, जो गाँधी के बारे मे ऐसी प्रतिक्रियावादी बाते करता था, उसके साथ भी इस रमणी का समझौता किस बात के लिए था? शरीर की भख!! कहती है कि बिना चाहे मै रह नही सकती थी और इसलिए अकलक! मैने उस टेनिस के खिलाडी नदलाल से प्रेम किया। उसमे कोई आकर्षण नही था फिर भी उसमे खोज खोजकर गुण आरोपित किये--और कदाचित् मेजर जास्टीन मे आकर्षण ही नही घृणा के अकुर थे, परन्तु उसे भी रजना ने अपनी गोरी बाँहो मे बाँधा होगा, इन्ही ओठो ने उसके ओठो पर चुम्बन टाँके होगे जिन्होने इस देश के बारे मे बुरी भली बाते कही होगी। रजना! तेरा पतन, कोई सीमा रखता है या नही? क्या तू नारी है??

"जानती हूँ अकलक! मेरी इस लग्न वाली बात ने बहुत ही कडवाहट तुम्हारे मन मे पैदा कर दी होगी ओर तुम घृणा से भर गये होगे। एक बात कह दूँ अकलक! कि जिस उच्च वर्ग से मै आती हूँ वहाँ नारी के लिए पुरुष, मात्र पुरुष होता है और हमारे वर्ग के पुरुष के लिए नारी, मात्र विलास का साधन है--प्रसाधन की प्रतिमा!! यदि मैने भी उसी तरह किया तो क्या बुरा किया अकलक? जानती हूँ अगर मै तुम्हारी पत्नी हुई होती तो कभी भी ऐसा नही कर पाती, क्योकि तुम जिस वर्ग से आते हो वहाँ नारी का शरीर होना उतना आवश्यक नही है, जितना कि वह पति के काम मे कितना हाथ बँटा सकती है और वह नारी है या नही? इसीलिए तो मेरे माता पिता ने तुम्हारी उस विवाहवाली बात का मुँहतोड उत्तर तुम्हे दिया था!! और मुझे कदाचित् जीवनभर का यह शाप"!! मै भले ही पतन की इस सीमा पर पहुँच गयी, किन्तु उच्च वर्ग की रक्षा तो हो सकी--।

"जानते हो इस बार मैने अन्तिम रूप से निश्चय किया था कि मै घर बसाकर रहूँगी और यह व्यक्ति मेरे घावो पर मलहम पट्टी कर सकेगा, जब कि मै इसके बमो से नष्ट घर

ओर जब मे नित नयी नयी डिजाइन की साडियाँ पहनती थी तो वह एक क्षण देखता ही रहता था ओर फिर हम लोग आलिगन मे बँध जाते थे ।

उसने उन दिनो अपने हालैड जाने के लिए वस्टर्न जोन के मुख्य कार्यालय को लिखा था। पिछले वर्ष भर से उसे रोका जा रहा था पर इस बार वह जी जान से प्रयत्न कर रहा था कि उसे जाने की अनुमति, एव सुविधा मिल जाये । उसने अपनी गवर्नमेट से भी जोर डलवाने का प्रयत्न किया था और वह रोज आशा करता था कि किसी भी दिन उसे अपने देश जाने का आर्डर आ सकता है। वह मुझसे कहा करता था कि रजना मेरी पत्नी बन कर अवश्य उसके साथ जायेगी क्योकि बिना रजना के अब वह नही रह सकता है। वह इस विचार मे बैठा घटो प्रसन्न रहा करता था ।

साँझ की ड्यूटी के बाद हमेशा हम लोग उधर काफी दूर तक घूमने जाया करते थे जिधर सब बदी बद थे। बदी दो भागो मे बँटे हुए थे--उत्तरी भाग और दक्षिणी भाग, कुल मिलाकर दस हजार से भी अधिक कैदी थे। प्रतिदिन मालगाडियाँ ढेरो सामान, गेहूँ, कच्चा गोश्त, मुर्गियाँ, अण्डे बैरागढ के स्टेशन पर लाती थी । आसपास के छोटे-छोटे गाँवो मे जहाँ कभी पशुओ का काटना नही होता था, अब वहाँ गोश्त की बडी-बडी मडियाँ खुल गयी थी और लोगबाग अपने बैल, गाय, बकरी, गधे और सडक पर आवारा घूमते हुए कुत्ते बिल्ली तक हजारो की सख्या मे काटने लगे थे । आसपास के पचासो कोस तक के गाँवो मे पशु मिलना दूभर होता जा रहा था किन्तु पडोस की रियासतो के राजाओ और नवाबो ने मिलिट्री की पूरी सहायता करने का वायसराय से वायदा किया था और गोश्त के पहाड इस छोटे से स्टेशन पर रोज उतारे जाते थे।

"धूप मे अपनी बनियाने ओर पतलूने पहने वे युद्धबदी जमीन खोदने का, सब्जी उगाने का, खेती करने का काम करते रहते थे। उनके चारो ओर मिलिट्री की हजारो बदूके, मशीनगने हमेशा तैयार खडी रहती थी। दूर-दूर तक काँटो के घेरो की सीमाएँ ही दिखायी देती थी ओर वे नीचा सिर किये भेडो की तरह काम करते रहते थे। अतिम घेरे के दो घेरे पहले से पगवटो मे काँटेवाले तार बिछे हुए थे, इसलिए कि यदि निकलकर भागे तो भाग भी नही सके। रात भर सर्चलाइटे इस अहाते के चप्पे-चप्पे पर घूमती थी। खाना लेने के समय इन्हे बाहर से ही 'फॉल इन' कराया जाता था ओर ये तारो के पास 'क्यू' मे आते उन्हे पानी भी नापकर दिया जाता था। जरा भी गडबडी होने पर हजारो गोलियाँ चल जाती थी ओर बात की बात मे वे खडे के खडे भून दिये जाते थे।

"एक दिन सध्या हम लोग घूमकर लौट ही रहे थे कि बदियो ने आज का काज जल्दी समाप्त कर, अपने-अपने स्थानो की ओर दौडना शुरू किया । जहाँ ये लोग आराम करते और बैठते थे वह भी चारो ओर से पहले बाहर से ही काँटो से घेर दिया जाये इसका प्रबन्ध था और तब यह बाहर का बडा घेरा खोलकर मिलिट्री गारद उस

पासवाले घेरे मे घेरकर रात भर पहरा देती थी। इनके सोने और बैठने के लिए बहुत ही असुविधाजनक जगह बनायी गयी थी ।

"कैदियो को जैसे ही काम छोडकर भागते देखा तो सार्जेट ने चिल्लाकर 'हॉल्ट' का आदेश दिया, पर वे सब के सब बेतहाशा भाग रहे थे। इस पर उसने 'फायर' का हुक्म दिया और चुपचाप रक्खी हुई मशीनगनें पीली लपटें उगलने लगी, कैदियो के चीखने की आवाजें आने लगी। पचासो ढेर कर दिये गये । शेष कैदियो ने अपने दोनो हाथ ऊँचे करते हुए समर्पण कर दिया। कैदियो को ही अपने साथियो की लाशें ढोकर बाहरवाले घेरे तक लानी पडी और जब वे सब अदर के घेरे मे बद कर दिये गये, तब उन लोगो की लाशो को ठोकर मार-मारकर बाहर खीचा जाने लगा । उन कैदियो का तीन दिन का राशन बद कर दिया गया।

"मेरा दम घुटने लगा अकलक ! आदमी की कीमत एक बदूक की गोली !! गोली चली और मानुष भुन गया। मेरा रोम-रोम काप रहा था। मै बहुत डर गयी थी। मे भय के मारे बहुत जोरो से चीख पडना चाहती थी किन्तु मेजर जास्टीन का मेरी कमर मे हाथ और मेरे सिर को उसके कधे का सहारा––सान्त्वना पहुँचा रहा था। मैने निश्चय कर लिया था कि मै यहाँ नही रह सकती कभी नही रह सकती हूँ ।

"मेजर जास्टीन का क्वार्टर दक्षिण दिशा मे एक सिरे पर था । जिसके सामने एक पहाडी नाला कतराकर बहता रहता था । नाले के इस तरफ तक कॉटो के तारो का ऊँचा घेरा था और नाले के उस पार ऊबड़-खाबड धरती––जो कि लाल मिट्टी के कारण धूप मे गेरुआ कपडे की तरह लगा करती थी। उस पर अचार की झाडियॉ, खजूर के लम्बे-लम्बे पेड, जगल, उन्मुक्त हवा मे हिलते रहते थे। उस गेरुआ लाल मिट्टी मे फाख्ताएँ खूब सारी फुदकती रहती थी और कभी-कभी मेजर जास्टीन उन्हे गोली का निशाना भी बना लेता था, जिसे बाहर पहरा देता हुआ गारद का सिपाही ला भी दिया करता था । नाले पर गेरुआ पुता हुआ रेल का पुल था जिस पर से मालगाडियो मे बद जानवरो के सिर दिखायी दिया करते थे और सवारी गाडियो की सवारियो के कभी लाल-पीले लुगडे, वर्ना तरह-तरह के सिर दिखायी देते थे। दोपहर मे अक्सर रविवार को मै जास्टीन के साथ उस नाले मे मछलियो का शिकार करने जाया करती थी, तब रेलवे ट्राली का दोडता हुआ वह नीली वर्दीवाला पैड्समैन ओर सफेद सूट पहने हुए बाबू ओर उस ट्राली की उडती हुई लाल झडी दिखायी पडती थी । छोटी-छोटी घास चरती हुई कभी कोई गाय या भैस मुश्किल से दिखायी देती थी, परन्तु गोबर बीननेवाली या लकडी बटोरनेवाली स्त्रियाँ जरूर, अपनी जॉघो के ऊपर तक लुगडे खोसे उन खॉखरो की झाडियो के बीच से जाती हुई पगडडियो से होती हुई बहुत दूर-दूर तक दिखायी देती थी। बिलो के पास अपना एक पजा अदर डाले हुए खरगोश हमेशा ही मिल जाया करते थे और जास्टीन जब इन्हे मारने के लिए गोली का निशाना साधने का प्रयास करता था तो मेरा मन जाने

कैसा होने लगता था, तब तक गोली 'धाय' आवाज करती हुई उनके नर्म वालो भरे, कोमल हड्डियोवाले शरीरो को छेद देती थी। अपने बडे-बडे सफेद कान लिये खरगोश, जिनके नर्म-नर्म वाल उस जगली हवा मे बहुत मुलामियत के साथ उडते रहते थे, तब मात्र मास की लोथ हो जाया करता था। दूर पर चाँदमारी मे चलती हुई 'थ्री नॉट थ्री' की गोलियाँ 'ठॉय' 'ठॉय' करती हुई दिन भर बोला करती थी। ओर मुझे ऐसा लगा करता था कि यदि इन कटीले तारो के अदर पहुचने पर हवा, पुलिस का आदेश न माने तो कदाचित् गोलियाँ उसका भी शरीर छेदकर छलनी कर सकती थी। लौटते मे जास्टीन के कधे पर लटकते हुए खाकी बैग मे चाँदी की पत्तियो की तरह चमकनेवाली बहुत सारी छोटी-छोटी मछलियाँ हुआ करती थी, जिन्हे शाम को नमक के साथ उबालकर खाना जास्टीन को बहुत प्रिय था। तब वह मारकेन द्वीप के आसपास उत्तरी सागर मे मिलनेवाली मछलियो के प्रकार, बदबू ओर गध की बात चाव से सुनाया करता था। बचपन मे उसे अपने आवारा भाई-बहनो से एक-एक मछली के लिए कितना लडना पडता था और कई बार तो लकडी के जूते से एक दूसरे का सिर तक फोड दिया करते थे और तब घाव पर ढेर सारी बर्फ, धूल की तरह डालने पर कैसी काटती हुई ठडी लगा करती थी। वह अपनी पत्नी का चित्र हमेशा मुझे विवाह के पहले दिखाया करता था ओर कहा करता था कि 'रजना ! मेरे साथ यह पढा करती थी ओर इसका पिता लोगो की कब्रो पर लगानेवाली मूर्तियाँ, परियाँ तथा क्रॉस बनाने के लिए प्रसिद्ध आदमी था। परन्तु इसकी माँ के भाई ने जो कि कब्रे खोदने का काम करता था, अपनी बीबी के लिए अच्छा क्रॉस न बनाने पर इसके पिता को फावडे से मार डाला था।' जास्टीन कहा करता था कि इसकी आँखो जैसी सुन्दर आँखे उसने यूरोप भर मे नही देखी। केवल रजना की आँखे इन आँखो से अच्छी ही नही, कई गुना सुन्दर है, ओर तब वह अपना ऊपर का ओठ हल्के हिलाते हुए मेरी ओर शैतान बच्चो की तरह देखा करता था। यहाँ के दूसरे अग्रेज कमाडर इसके अइग्लिश होने के नाते जास्टीन से असन्तुष्ट ही नही किसी सीमा तक जलते भी रहते थे परन्तु वह मिलिट्री सर्जनो मे प्रथम श्रेणी का माना जाता था। जास्टीन को दुख इसी बात का था कि अपने हालैड मे रहकर शोध कार्य करने का अवसर नही मिल रहा था। वह छोटी से छोटी शारीरिक पीडा को भी सर्जरी से ठीक करने का विचार रखता था। वह जर्मनो को उसके देश को नष्ट करने पर कोसते-कोसते पागल हो जाता था।

"मैने अपना त्यागपत्र दे दिया था, क्योकि जास्टीन के साथ मेरा विवाह निश्चित हो चुका था। मगर अभी तक वह इस प्रसन्नता को दूसरी प्रसन्नता के साथ मिलाना चाहता था और इसलिए वह कहा करता था कि मै जीवन मे जितना कभी प्रसन्न नही हुआ हूँ उतना प्रसन्न होकर उस दिन उत्सव मनाऊँगा।

"जिस दिन एरिया कमाडर ने मेजर जास्टीन को बुलाकर उसे हालैड जाने का आदेश दिया उस समय मै जास्टीन की डायरी पढ रही थी।

'डायरी मे मात्र मूर्खताओ का ही उल्लेख हो'—

यह जास्टीन की धारणा थी, और खिड़की के पास हँसते हुए मैं डायरी पढ रही थी, तभी उसने मुझे दौडते हुए आलिगन मे बाँध अपने हालैड जाने के बारे मे सुनाया।

"जिस समय हम ईसा, बाइबिल और पादरी का आशीष लेकर चर्च से बाहर निकले लोगो ने चुम्बनो से मेरा हाथ भर दिया। मेरा सफेद गाउन, झीना पतला सारस के पखो की तरह चर्च की लीचियो के पेड से आती हुई हवा मे उड रहा था और हम दोनो कार मे चढकर लोगो की प्रसन्नता को चर्च मे ही छोडकर आगे बढ गये।

"हम लोगो ने हालैड पहुँचकर ही हनीमून मनाने का निश्चय किया।"

"जिस समय हम लोग हालैंड के लिए रवाना हुए हमे पहले इगलैंड जाना था क्योकि पेरिस, ब्रूसेल्स की तरफ के सभी नाके, सडके जर्मनो ने बद कर रखी थी। इगलैंड के बाद ही यदि सम्भव हुआ तो हालैंड के लिए किसी जहाज से जाया जा सकेगा। जब मै अपने पति के साथ इगलैंड पहुँची, हालैंड के पूर्वी शहरो ओर प्रदेशो पर जर्मनो के आक्रमण बराबर हो रहे थे और ब्रिटेन और अमरीका की सेनाएँ हालैंड की सीमाओ की रक्षा के लिए भेजी जा रही थी। बेल्जियम के प्रदेश मे भी जर्मनो के घुस पडने की सभावना बढती जा रही थी, इसलिए राटरडम खतरे मे अभी ओर पड सकता था क्योकि सन् चालीस की मई मे, शहर के केन्द्रीय भाग को बिलकुल विध्वस कर दिया गया था। चारो ओर उस समय जर्मन आक्रमण का आतक छाया हुआ था। हालैंड पहुँचकर आम्सटरडम मे सर्जिकल प्रेक्टिस करने का जास्टीन का विचार था।

"राटरडम मे उत्रेच्ट होते हुए जब राते हम लोग आम्सटरडम पहुँचे तो उस समय पूर्वी हवा, अम्सटेल नदी ऊपरे हल्के उड-उडकर कुहरे ओर बादलो को भिगोती चली जा रही थी। अपने पति से सुने गये सत्रहवी शताब्दी के उन डच लोगो के उत्साह पर मुझे हँसी आने लगी, जिन्होने अपने आम्सटरडम को वेनिस की भाँति ही सुन्दर 'वरुण नगर' बनाने के लिए बहुत सी नहरे बनाने की योजना प्रारम्भ की थी ओर उसे 'उत्तर का वेनिस' भी कहना प्रारम्भ कर दिया था। ट्रेन मे बैठे हुए अधकार ओर बिजली के प्रकाश मे लिपटे इस उत्तर के वेनिस से मुझे सहसा मोह हो आया जहाँ कि शेष जीवन अपने पति सगे बिताने का निश्चय करके अपना देश छोडकर आयी थी। इस विचार ने, अपने पहियो के नीचे से गुजरती हुई प्रत्येक सडक, बिजली के खम्भे, साइकिलो पर जाते हुए हैट ओर फ्रॉक से परिचित हो लेने मे ही अपने आप का भला समझा। समुद्र से लड कर धरती छीननेवाले इन डच लोगो की बाहुओ मे अपने परिश्रम पर कितना दृढ विश्वास है—के विचार ने मुझे अपने पति के बाहो पर सिर टेकने के लिए बाध्य कर दिया। मेरा मोह निर पति की बाँहो मे ऐसे ही टिका रहना चाहता था जैसे समुद्र की बाँहो पर धरती का सिर!! और आम्सटरडम का स्टेशन आ गया।

"आम्सटरडम मे मेरे पति जास्टीन का एक बहुत ही पुराना गहरा मित्र रहता था —वान निकोलस। जो कि स्वय अच्छा सगीतज्ञ ओर चित्रकार था। दोनो बचपन मे साथ-साथ पढते थे। वान निकोलस ने स्कूल कालेज के दिनो मे जास्टीन की हर तरह से सहायता भी की थी। वान निकोलस का पिता, उत्तरी हालैंड मे सरकार से समुद्र के भीतर से धरती निकलवाने का ठेका ले लिया करता था, ओर वह एक तरह से हालैंड के राज-नीतिक तथा सार्वजनिक जीवन मे बहुत प्रतिष्ठित व्यक्ति था। वान निकोलस की बहन

मेरिया, पागल थी और वान निकोलस अपने पिता तथा बहन को छोडकर आम्सटरडम वाले अपने बडे मकान मे आकर रहने लगा था। उस दिन स्टेशन पर उतरते ही मेरे पति ने कहा कि––'रजना! यहाँ वान है और सीधे उसके घर ही चलना चाहिए'––ओर हम लोग सीधे उसके यहाँ गये। वान को अपने आने की सूचना हम लोग दे न सके थे। हालैड का यह नगर सगीत एव चित्रकारी का सबसे बडा केन्द्र है, ओर नीचे दक्षिणी हालैड, बम तथा फौजी बूटो से कुचला जा रहा था पर आम्सटरडम की बिजली मे चमचमाती हुई सडको, कुजो ओर लताओ के हरेपन से भरे लदे पार्को मे इतनी राते भी जीवन की प्रसन्नता दिखलायी पड रही थी।

"जिस समय दुआर खोलकर 'अटेण्डेट' ने अपना सिर झुकाकर नमन किया ओर जास्टीन को पहचाना वह स्वामी को सूचना देने के लिए उस बडे जीने से ऊपर चला गया जिस हॉल से होकर हम लोग नीचे के अतिथिवाले कमरे मे जाकर वान निकोलस की प्रतीक्षा कर रहे थे। वान निकोलस को यह आवास अपने पिता से प्राप्त हुआ था ओर यहाँ वह अकेला रहता था।

"हालैड का दक्षिणी-पश्चिमी भाग तो यूरोप की जलवायु की तरह गर्मी मे गरम और सर्दियो मे ठडा रहता है पर केरेबियन समुद्र की गरम गल्फस्ट्रीम के कारण इधर न तो इतनी गर्मी और न सर्दी ही होती है। वान निकोलस अपना सन्ध्या-गाउन पहने था। उन्नत ललाटवाला वह व्यक्ति जिसकी लम्बी नाक उसके मुखे सबसे प्रमुख लगनेवाली, पतले-पतले ओठ ओर हल्के लम्बे बाल परन्तु स्त्रियो की सी ऊँचाईवाला यह व्यवित देखने पर प्रभाव डालता था––कमरे मे प्रवेश करते ही न तो डच और न यूरोपियन रूपरग की एक रमणी को देखकर वह आश्चर्य मे आ गया। परन्तु मेरे पति ने––

'यह मेरी पत्नी रजना जास्टीन, आप भारतीय है'––कहकर मेरा परिचय दिया।

"मेरे लम्बे उजले दस्ताने मे झुका हाथ उसने बहुत ही भद्रता से चूमकर अभिवादन करते हुए हालैड मे स्वागत किया। मुझे उसके इस व्यवहार से बहुत प्रसन्नता हुई। वह अगले महीने ही हालैड के प्रसिद्ध चित्रकार रेमब्राण्ड के 'नाइट वाच' वाले चित्र के आधारे एक सगीत ऑपेरा प्रस्तुत करनेवाला था और उसी की तैयारी मे वह लगा हुआ था। जिस समय वह नम्रतापूर्वक बिदा हुआ, हम लोग अत्यधिक थक चुके थे।

"कदाचित् जास्टीन अपने देश मे बहुत दिनो बाद आया था और आते ही जैसे हालैड की इस शरद्ऋतु की कुहर बॉहो ने उसे प्रगाढ आलिगन मे बॉध लिया और वह गहरी नीद मे सो गया।

"कमरे की सुषमा तथा वैभव, वान निकोलस की कलाप्रियता का परिचय दे रहे थे। प्रत्येक वस्तु सुरुचिपूर्ण तथा रगमेलमयी थी। प्रकाश बुझा दिया गया था। नीचे के तल्ले के इन कमरो से सटा हुआ इस बॅगले का कदाचित् वह बगीचा है, जिसके घने पेडो की काली छायाएँ उस समय लेटी हुई मेरे मुँह के सामने की खिडकियो के शीशो

मे से दिखायी दे रही थी, ओर चद्रमा बिल्कुल बर्फ की तरह उज्ज्वल एव शीत—उगने को हो रहा था। मुझे लगा यह चद्रमा बिल्कुल दूसरा है उससे जिसे लाहोर, बम्बई मे हमेशा देखा करती थी, या महू से चलते हुए उस दिन मेने ट्रेन मे बैठे हुए क्षिप्रा की ठडी कछारो को धोता हुआ जिसे देखा था। मेरा मन हो गया कि हालैड की इस ठडी कुहरे भरी राते भी चलकर देखूँ कि आम्सटेल नदी पर इस चद्रमा की वैसी ही परछाँई पड रही है जैसी कि उस दिन सरपतो से भरी उस झील मे देखी थी? कुहरे के नीले-नीले गुब्बारे धुएँ के छल्लो की तरह चद्रमा के मुखे उड रहे थे और वे यहाँ के आकाश मे बहुत नीचे लग रहे थे। मुझे लगा कि यदि मै बर्फ पर पहननेवाले मारकेन टापू के बने लकडी के जूते पहनकर उत्तर की ओर चलती चली जाऊँ तो निश्चई बर्फ को पार करती हुई इस चद्रमा को पा सकती हूँ। ओर तब यह चद्रमा का गोल, ठडा, विशाल श्वेत कमल, मेरी दोनो अजलियो मे होगा ओर जिसे मै अपनी दोनो जलती पलको पर फेरकर एक गहरे सुख का अनुभव कर सकती हूं। या, मै इस ठडे कमल को अपने जूडे मे लगा सकती हूँ।

"ऊपर के उजालदान खुले हुए थे जिनमे से हल्की ठडक और कुहरा आ रहा था। कमरे के फायरप्लेस की लाल-लाल रोशनी की छाया, सब चीजो को गरमाहट ओर लाली बाँट रही थी। दूर कही से धीमे-धीमे पियानो के स्वर आ रहे थे, मुझे लगा निकोलस निश्चय ही उस 'नाइट वाच' वाले चित्र से सम्बन्धित सगीत ऑपेरा की स्वर-लिपि बना रहा होगा और मै कल्पना करने लगी कि कैसा होगा वह चित्र, ओर वान निकोलस का उस चित्र के भावो को स्वर देने का प्रयास!! मुझे अँगीठी की हल्की ऑच की भाँति सुन्दर, रगीन ओर हल्के मीठे वे दूर से आते हुए पियानो के स्वर लग रहे थे—जैसे चारो ओर इस समय बर्फ की चमेली झर रही है ओर मै पियानो के उन स्वरो मे वह 'नाइट वाच' वाला चित्र देख रही हूं। इसी कल्पना मे मै कब सो गयी मुझे पता न चला, परन्तु बिहान उठने पर मेरे सिरहाने दो फूलो के गुच्छे दिखायी दिये जो इस वेला कुम्हलाये हुए थे। अवश्य ही राते किसी ने मेरे सिरहाने रख दिये होगे।

"दूसरे दिन भोर जास्टीन, अपने मित्र वान निकोलस को ओर मुझे लेकर आम्सटर-डम घुमाने ले जाना चाहता था, परन्तु कुहरा बहुत सबेरे से ही घना घिर आया था। मेरे पति, घूमने के प्रस्ताव को रद्द देखकर कदाचित् कुछ लोगो से मिलने चल दिये और मै वान निकोलस के उस उपवन मे घूमने लगी। एक क्षण को लगा मै निश्चय ही यह सब स्वप्न देख रही हूँ, अन्यथा लीई के साथ दिन-दिन भर बैठकर रगीन कागज के फूलो को काटते-काटते उस लोहे की कैची के कारण मेरी उँगलिया कितनी थककर दर्द करने लगती थी, और तब ऑखो मे पानी आ जाता था, क्योकि इस काटने के बाद तक गोद लगाना शेष रहता था, फिर इन्हे सूखने रखना होता था, तब कही इन्हे लेकर बम्बई की सडको पर बुर्का ओढे दस-पन्द्रह मील से अधिक चक्कर काटना पडता—तब रात रोटी नसीब

हुआ करती। यदि मै इसे सत्य मान लेती हूँ तो फिर वान निकोलस के इस उपवन मे इस तरह आम्सटरडम मे घूमते हुए को क्या मानूँ ?? यहाँ मेरा पति है, और अब मै सदा के लिए यहाँ रहने आयी हूं, कदाचित् अब लाहौर की उन गलियो तथा अनारकली को भी कभी न देख सकूँ।

"जानते हो अकलक! जब हम एकदम विभिन्न परिस्थिति मे पहुँच जाते है तो हम बचपन की रटी हुई सख्यावाली गिनती को ऑख मूँदकर फिर से दुहराने लगते है कि कही हम बदल तो नही गये है? और जब हम देखते है कि प्रारभिक कक्षा की वह गिनती हमे ठीक-ठीक उसी तरह स्मरण है, तव हमे काफी गहरी प्रसन्नता होती है कि नही, हम वही है, बदले कही से नही है। ठीक उसी प्रकार एक-एक घटना हमारे सामने आती है और हम उन सबके बीच मे अपने आप को जब सूत्रित पाते है तव हमे विश्वास हो जाता है कि नही, हम निरन्तर बने हुए है, कही से भी हमारी सज्ञा लुप्त नही हुई है। इन सब विभिन्न परिस्थितियो का सूत्र हमारा 'हम' अखड रूपे है।

"नदलाल के साथ मेरा वह मिलन कितने साफ तरीके पर याद है। मैंने उसे प्रेम करके उपकार से लादा था अकलक! जब कभी कालेज के लॉन पर फ्री पीरियड मे लोग उसे मेरे साथ देखते थे तब मै कनखियो से बराबर देख लिया करती थी कि कितने लोग आहे भर रहे है! कभी किसी की उडती हुई फब्ती कि,

'क्यो यार! पाँचो घी मै है न?'——

सुनने पर मुझे नदलाल से चिढ हो जाती थी——और लडको की भद्दी मोटी सी हँसी बहुत देर तक खिलखिल करती रहती थी। किन्तु अकलक! मुझे हमेशा लगा कि मै निरभ्र आकाश की भॉति ही रही, जिस पर किसी के भी पदचिन्ह आज तक अकित नही हो सके—फिर चाहे वह ऑधी हो या काली पतली रेखाओ मे उडते हुए सारस के झुंड हो, या हरे-हरे तोतो की उडती हुई बदनवार!! तुम इसे मेरा दर्प कहोगे, तुम कहोगे कि यह सव कहकर तुम्हारी दृष्टि मे यदि मै गिर गयी हूँ तो आकाश वालीउपमा कहकर अपने को ऊँचा किया चाहती हूँ——किन्तु क्या ऐसा सोचना सत्य होगा?"

मुझे रजना का इस समय बहक कर स्वय मुझ तक आ जाना अच्छा लगा है क्योकि मै कुछ सोच सकता हूँ। रजना ने जिस भॉति जिया बिलकुल निरुद्देश्य जिया है ठीक उसी रीते वह निर्रथक सोचती भी है। मै नही जानता रजना ने कब मेरे हाथ की अँगूठी का लाल नग छोडा और वह मुझे अपनी कथा सुनाने मे तल्लीन हो गयी थी। रजना कभी किसी व्यक्ति या घटना के प्रति सचमुच का विद्रोह करके उठ खडी हुई हो, ऐसा नही लगता। यह क्यो? पता नही!! या तो छलवश ऐसा करती है या स्वभाववश।

परन्तु अपने आप को कोई कैसे छल सकता है? और इस प्रकार अपने को छलने की ऐसी क्या आवश्यकता आ पडी थी? मुझे तो उसके जीवन के प्रत्येक मोड पर लगता है कि वह चाहती तो अपने विद्रोह का फन उठाकर खडी हो सकती थी जब कि उसने

ऐसा नही किया। विवशता नाम की वस्तु ही गिरने के लिए बाध्य करती है, जब कि रजना के साथ ऐसी विवशता क्या कही थी ? सचमुच का विवश, क्या इसके सामने कभी था ? ––गिरने पर व्यक्ति मे असतोष पैदा होता है जब कि रजना ने अपने प्रत्येक पतन को रस माना। आवेश मे पग उठाने पर भी मनुष्य विवेक आने पर लोटा लेता है, किन्तु जब कोई आवेश मे पूरा जीवन जी जाता है तो इसका अर्थ तो हुआ, कि वह सब कुछ उसके मन को अच्छा लगता था। क्योकि बिना मन के तो जल जैसी वस्तु तक को हम नही पी पाते है फिर यह तो स्तर की सीमाओ का प्रश्न है। जहाँ तन और मन दोनो का मिलना एक नितान्त आवश्यक शर्त है । बिना मन के, दवाई की बाध्यता क्षम्य और समझ मे आती है, किन्तु यह रजना तो अपने तन और मन दोनो को सडाँध भरे पाताली पतनो मे ले गयी।

"देखती हूँ तुम बहुत सोच रहे हो, ठीक है, अब मै तुम्हे रोकना भी नही चाहती–– सुनो, तुम हल्का ड्रिंक लोगे ?"

ओफ ! मेरा मन इसे कितना नीच मानने को कर रहा है, पहले तो ऐसा सब कुछ अनचाहा सुना कर मै वह सब कुछ भूल सकूँ के लिए अब अनचाहा उपचार भी करना चाह रही है––छि छि !

"जी नही, मेरे लिए आवश्यक नही है, आप ही ले।"

मोर मुखे निश्चयई वाक्य का रूखापन आ गया होगा, क्योकि मुझे ऐसा लगा कि मै बहुत तेज नही तो कडवे शब्द अवश्य बोल गया हूँ। और ठीक भी है, मै क्यो बार-बार ––इसे ऐसा नही कहूँ जिसमे बुरा लग जाय––के अकुश से अपने आप पर नियत्रण करता चलूँ ? मेरे पास स्वय इसका कोई उत्तर अब नही होगा कि पूरी गाथा सुनने पर क्या मै इससे प्रेम करने की बात कह भी सकूँगा ? जिसने धूप ओर हवा की भाँति ही अपने को सब के लिए सहज प्राप्य बनाकर वहाँ पहुँचा लिया है, जहाँ से इसे उठाने के लिए (चाहे वह आलिगन या उद्धार जैसी मूर्ख भावना ही क्यो न हो) सामनेवाले को कितना नीचे उतरना होगा, सोचकर ही नाली के किलबिलाते, छोटे लम्बे पतले गिलबिले रबड की तरह नरम-नरम कीडे याद आ जाते है जैसे बहुत सारे हो, एकदम बहुत सारे !! क्या मै कभी इसकी लालसा कर सकूँगा ? ओर जिन्होने ऐसी लालसा की उन्हे क्या मिला ?

मै देख रहा हूँ कि वह कमरे से अभी-अभी बाहर गयी है ओर सोच भी सकता हूँ कि एक क्षण मे हाथ मे बोतल ओर पैग लिये वह आ रही होगी और मुझे जाने क्यो, कदाचित् ब्राह्मण घरे पैदा होने के कारण स्मरण आ रहा है कि शिव की मूर्ति पर एक जलपात्र अभिषेक रूपे टॅगा रहता है, ओर उसमे से जलधारा निरन्तर शिवलिग पर गिरती रहती है । मुझे ऐसा लग रहा है उच्च वर्ग की इन पार्वतियो पर भी अभिषेक रूपे वारुणी इसी प्रकार गिरती रहे तो कदाचित् उपमा मे कही कोई असगति न हो ।

सामने छोटी टेबल रखकर अब उसने अपना पैग पूरा भर लिया है । एक बार

पैग के तरल पदार्थ के रग को ठीक अपनी आँखो मे भरते हुए मेरी ओर ऐसे देख लिया है कि जैसे--शिव तो इस समय वारुणी पान के मूड मे नही है लेकिन पार्वती को तो आज्ञा होगी ही कदाचित्--

और मै देख रहा हूँ रगीन तरलता उसके कठ के नीचे पहुँच रही है ताकि कथा कि धरती और भी मसृण हो जाये, तो क्यूटेक्स रँगे नाखूनोवाले कोमल पैरो को रखने मे अडचन न हो।

दूसरा पैग भरते हुए कह रही है--

"अकलक!"

मेरी इच्छा उत्तर देने की नही हो रही है।

"क्या इस सीमा तक सोच रहे हो? या कुछ बुरा लग रहा है अकलक"।

"जी, क्या कहा आपने?"--

और मै खिडकी की ओर देखना चाह रहा हूँ।

"अच्छा तो व्यावहारिक बनने का प्रयास फिर से किया जा रहा है?"

ओर यह कहते हुए वह कितने जोरो से हँस रही है कि हाथ के पैगवाली लाल शराब हिल रही है ओर उस हिलने से छोटी-छोटी लाल रग की कम्पने हो रही है।

"अकलक! तुम्हे अपनी बदली हुई रजना को देखकर आश्चर्य हो रहा होगा, है न?"

"नही तो?"

"क्यो नही आश्चर्य हो रहा है? तुम्हारी रजना क्या कभी ऐसी थी? नही अकलक! रजना उस समय तक कभी भी ऐसी नही थी। तुम भूलते हो, या फिर तुम मेरे प्रति घृणा के इतने ऊँचे शिखर पर खडे हो कि मै फिर कही तुम्हे न छू लूँ। तुम लोग भले ही अपनी ऊँचाई-नीचाई लेकर आओ, परन्तु ऐसा मैं नही कर पाऊँगी।

"तुम कहोगे मै उस रजना को भूल गया। परन्तु देखती हूँ मुझे कितना सारा सब कुछ साफ-साफ याद है। जब पहले दिन मैने तुम्हे देखा था, तुम लडको का जुलूस लेकर आगे-आगे चल रहे थे, तुम्हारे हाथ मे झडा था। तुम सिर से पैर तक खादी पहने थे। तुम्हे देखकर जानते हो पहली और अतिम बार विचार आया था कि मै अपने जूठे मन से अगर तुम्हे चाहूँगी तो देवता के प्रसाद को निर्माल्य-सा जूठा कर दूँगी--परन्तु स्वार्थ, पवित्रता और अपवित्रता तो नही देखता है न? तुम कहोगे कि जब यह स्वार्थ समझती हो तब फिर इसे प्रेम नाम मत दो, परन्तु अगर तुम ऐसा कहोगे तो मुझे क्लेश होगा। क्योकि स्वार्थ, यदि समर्पण कराता है तो चाह के बधनो मे बँधकर घुल भी जाता है। और, जब वह नही घुलता तब वह मात्र मैथुन बनकर नीचता होता है। मैने कितनी बार सोचा कि मै तुम्हे छू कर भ्रष्ट कर दूगी क्योकि मुझे तुम्हारी पवित्रता पर उतना विश्वास नही था जितना कि मुझे अपने शाप पर, और हुआ भी वही। परन्तु मै पार्को मे बैठ-बैठकर स्वप्न देखनेवाली,

स्वय को कालिदास की शकुन्तला, शेक्सपीयर की जूलियट, ट्रॉय की हेलेन समझने वाली उस पगली रजना को क्या कहती बताओ अकलक ? शेले की सारी कविताएँ मुझे लगती थी उस अग्रेजी कवि ने जैसे मेरे ही विरह मे लिखी है --मेरा ही वह मुख है जिसने अनेको जलयानो का सतरण करवाया और हजारो मस्तूल भस्मीभूत करवाये। रजना के वे कल्पना-पख उसे रावी की उस रेती पर थोडे ही रहने देते थे अकलक ! वह तो डैन्यूब के किनारे, आल्प्स की बर्फ-चोटियो पर पहुचकर अपने स्वर्णिम केश खोले--बर्फ की भाँति उजला गाउन पहने नाइटेगिल की तरह गा उठना चाहती थी कि--

'देखो, मै आ गयी --मे ही वह गीत हू जो चिडियो के कठो मे है, मै ही वह तुम्हारी कल्पना हूँ जिसे तुम आकाश की खिडकियाँ खोल कर इद्रधनुप के महलो मे देखा करते हो'--

"और सब देखते कि हा, मे आ गयी--जलते हुए मस्तूलो पर फिर से रगीन झडियाँ आ जाती। अकलक ! उस असीम वाछामयी रजना के विराट् मोह को क्या मै बाँध सकी कभी ? और मे ही क्या, किसी भी नारी के मन को यदि उन्मुक्तता मिल जाय तो ससार की कोई बाह उसे बाँध सकती है ? तुम समझते हो कि तुम्हारी दो बाँहो ने उसे बाध लिया है, किन्तु यह तुम्हारा भ्रम है ! क्योकि वह सत्य की नारी नही है, वह तुम्हारी धर्म द्वारा बधिता दासी पत्नी है जिसका तुम शरीर बाँध सके हो, और जिसके पास मन तो कभी था ही नही--जब मन नही तो वाछा नही, मोह का तो प्रश्न ही नही उठता। और जो मेरी उस रजना नारी को बाँध सकता था किसी सीमा तक, तो उनमे से एक था अकलक, जो मूर्खो की तरह उस दिन लाहौर की सडको पर गुलमुहर का गुच्छा देकर सदा के लिए अडमान चला गया। रजना से अधिक महत्वपूर्ण उसके लिए उसकी राजनीति थी। दूसरा था वान निकोलस जो गधर्व था--पुरुप नही, रजना आज खो नही गयी, बल्कि टुकडे-टुकडे होकर नष्टभ्रष्ट, खडखड होकर कुरूप निर्लज्ज बनी हँस रही है, तो तुम्हे क्यो आश्चर्य होता है ? अगर रजना आज निर्लज्ज, चरित्रहीन वासना मयी और पतिता लग रही है तो इसका उत्तरदायी कौन--रजना, या अकलक ! या वान निकोलस ??--कदाचित्, कोई नही !!

"लेकिन रजना जहाँ भी रहती, सीमातीत होकर ही रहती। प्रेम वह कर चुकी थी, शेप जीवन उसे उपेक्षा करनी थी और वह उपेक्षा उसने अपनी सामर्थ्य भर की। उपेक्षा वह प्रलय की तरह बहती चली गयी। मनुष्य होने के नाते कुछ मोह हुआ हो, किन्तु उसके अदर की प्रतिक्रिया ने उसे रुकने नही दिया कही। उन दिनो न रुकने का कारण नही जान पायी थी परन्तु आज जानती हूँ, क्योकि ज्योही दोपहरे ताँगे से तुम उतरे थे, जानते हो, दौडती हुई नदी जैसे समुद्र को दूर से ही देखकर समझ जाती है कि नही--वह व्यर्थ ही इतने लम्बे मैदान, जलते मरुस्थल और जगली पहाड पार करने के लिए ही घर से नही चली थी--यही वह समुद्र है, यही उसका चिर अत है, महामिलन है, जहाँ के लिए उसकी अपनी लहरे शेषाइत थी !' अकलक ! तुम मेरे महामिलन

थे, जिसके लिये मैंने अपनी लहरें शेष रखी थी। और जानते हो तुम लँगडाते हुए ठीक वैसे ही आये जैसे तुम लाहौर की सडको पर लँगडाते हुए आया करते थे।"

रजना यह सब कहती है, परन्तु क्या वह यह सब तर्क देकर भी एक क्षण को सिद्ध कर सकेगी कि रजना का सीमातीत तथा असामाजिक व्यवहार उचित था ? अनागरिका है रजना !

वह फिर दूसरा पैग भरना चाह रही है और मै टोकना चाह रहा हूँ--

"रजना ! ज्यादा न ।"

और उसने मुस्कराते हुए पैग नही भरा।

"अगत्या अकलक ! कितने वर्षो को भेदकर आज तुम्हारा आदेश मुझे मिला तो। क्या मुझमे इतनी सामर्थ्य है कि मै तुम्हारा आदेश टाल सकूँ ? कदाचित् नही, क्योकि तुम्हारा आदेश मेरे लिए बिल्वपत्र है, जिसे अपने सिर पर धारणकर अब मै शेष को जी ले जाऊँगी। अकलक ! अब मुझे कोई चिन्ता नही ! ! तुम्हारा आदेश मुझे ठीक तरह याद है--उस दिन विद्यार्थी-सभा के चुनाव के लिए मै तुम्हारे लिए होस्टलो के कमरो मे घूम-घूमकर प्रचार कर रही थी, पोस्टर बनाये थे, सभा-गान किया था, क्या वह सब मैंने तुम्हारे आदेश से नही किया था ? लडके तुम्हे देख-देखकर मुस्कराते थे और मै विभोर हो जाती थी। तुम तब तक पूरी तरह राजनीति मे भी शायद उतर चुके थे। मैंने तुम्हे क्रातिकारियो के मेझे जाने से मना किया और तुमने कितने गुस्से मे मुझसे पूछा था--

'क्यो ? तुम क्यो मना करती हो ? क्योकि तुम्हारे पिता को भी हम एक दिन दूसरे लखपतियो की तरह पैसा देने को बाध्य करेंगे, कदाचित् इसीलिए न ?'--

"और जानते हो मै कितनी फूट-फूटकर रोई भी थी, तुमने मुझे जीवन भर सामने न आने के लिए भी आदेशा था। उस दिन रावी के पानी की लहर को सिर पर धारण करते हुए तुम्हारी वह आज्ञा मान ली थी। तुम्हारी आज्ञा मेरे लिए कवच थी अकलक ! पर तुम चले गये और मेरा कवच भी तुम्हारे साथ चला गया। मै कुण्डल तथा कवचहीन कर्ण की भाँति हो गयी। यदि मै कवचहीन होकर जीवन मैं घायल या रक्तरता हो गयी, तो मेरा क्या दोष इसमे अकलक ? यदि तुम भी मुझे दोषी समझोगे तो मै उस समझने पर रोक नही लगा सकूगी। तुम्ही ने कब पलटकर कवचहीन रजना को देखा, जो आज इतने बरस बाद जब कि मै अपना सारा लेनदेन पूरा कर चुकी हूँ, रजना को कुलटा एव चरित्रहीन कहने आये हो ? जो भी मै हूँ, क्या उसमे तुम कही नही हो ? केवल मै ही हूँ उसमे ? और मैंने क्या किया अकलक ऐसा ?"

"नही रजना ! मै कौन होता हूँ यह सब कहनेवाला ?"

मेरा मन फिर कोमल होना चाह रहा है और मै रजना मे ऐसा कुछ भी तो नही पा रहा हूँ जिसमे मुझे उससे घृणा होनी चाहिए।

"हाँ अकलक ! तुम अपनी ओर से भी कुछ थे मेरे लिए, पर आज तो नही

हो तभी तो ऐसा कह पा रहे हो। काश मै भी ऐसा हो पाती। किन्तु क्या कभी हम ऐसा हो पाती है? निर्लिप्तता, तुम पुरुषो को शोभा देती हो, किन्तु नारी तो प्रजनन के कीचड मे आपूर्ण सनी रहती है अकलक! इसलिए ऐसा सोचना मेरे लिए अशुभ है, और अशुभ का मुकुट पहनकर ही यहाँ से क्या बिदा होना पडेगा?"

ओर वह फिर रोने-रोने को हो गयी है!

मेरा मन भी जाने क्यो खिन्न तथा उदास हो गया है।

रजना ने अपनी जलती ऑखो पर अपने हाथ मे मेरा हाथ लेकर फेरना शुरू कर दिया है।

रजना की ऑखो पर मेरा हाथ धीमे-धीमे फिर रहा है।

"वान निकोलस का वह बॅगला और उपवन थोडे ऊँचाई पर होने के कारण काफी लम्बे बसे हुए नगर का अश यहाँ से बहुत साफ दिखायी देता था। एक ओर बदरगाह दिखायी दे रहा था जिसके बारे मे मुझे वान निकोलस ने बताया था कि उसके पिता फिलिप निकोलस ने सन् १९२१ मे कुछ ठेका इन बदरगाहो के बनवाने का लिया था और इसके लिए घूस मे उन्हे अपनी वह सम्पत्ति जो 'पोल्डर्स' के समये कमायी थी, का आधा भाग सरकारी अफसरो को दे देना पडा था। इस पर लोगो ने उन्हे कहा था कि वह अपनी लडकी की भाति ही पागल हो गया है परन्तु फिलिप निकोलस ने इस बदरगाह के ठेके से, चोगुना-पचगुना ज्यादा ही कमाया और इसीलिए आम्सटरडम के आसपास सैकडो की सख्या मे जो बगीचो वाले गाव है फिलिप ने उनमे से कइयो को खरीद लिया था। गवर्नमेट जावा, मलाया के उपनिवेशो से रबड मॅगवाकर रबड की सडके बनवाना चाह रही है। उसका ठेका भी उन दिनो फिलिप लेने की चिन्ता मे था। वान को अपने पिता फिलिप से बिलकुल प्रेम नही था, क्योकि उन्हे मात्र पैसे के अलावा ओर किसी भी चीज मे सार्थकता नही दिखलायी पडती।

"मै, वान निकोलस के उपवने खडी धुॅध मे लिपटे हुए शहर को देख रही थी, वह कही बाहर से लोटा था ओर मुझे शहर की तरफ बगीचे लगी रेलिग के पास खडी देख, अभिवादन करके मेरे पास हैट उतारकर खडा हो गया। वह उस समय गहरे भूरे रग का सूट पहने था—कोट, जो कि पीछे की ओर से लम्बी काट लेकर सिला हुआ था, वेस्ट कोट मे उसकी सोने की चेन उसकी सॉस के साथ ही ऊपर-नीचे होते हुए हिल रही थी, पतली काट का उसका पैंट और गले मे बहुत ही उम्दा सफेद स्कार्फ लपेटे वह अत्यन्त सुन्दर लग रहा था। बाहर की ठड से लोटने के कारण उसके गालो के पास की हड्डी एकदम लाल चिकनी होकर चमक रही थी। उसकी ऑखो मे हल्की लाली थी जो बतला रही थी कि वह बहुत ड्रिक करता रहा है। उसके पतले-पतले ओठो मे मुस्कान बहुत ही कोमलता के साथ दबी हुई थी। उसका कहना था कि वह इगलैड भी गया है, फ्रास भी गया है, ओर जर्मनी भी, पर हालैड—हालैड ही है, और आम्सटरडम से सुन्दर स्थान जब-

ठडे देशो मे नही है तो गरम मुल्को मे तो क्या होगा (यह ठडे-गरम का तर्क कदाचित उसके सामने खडी महिला अतिथि को ध्यान मे रखकर कहा गया होगा) किन्तु गलत उसने कुछ नही कहा था क्योकि आम्सटरडम मुझे भी बहुत पसद आया।

"वह मुझे मेरे कमरे तक छोड गया और दूसरे पहर यदि ऋतु साफ रही तो आम्सटरडम घूमा जायगा, कहकर अपना लम्बा ऊँचा हैट पहन तथा हाथ मे बेत को हल्के घुमाते हुए कमरे के बाहर निकल गया। मैंने दुआर बद कर लिया सिर्फ उसे छिपकर देखने के ख्याल से कि वह जीना चढते समय कही कूबड निकालकर तो नही चढता या वैसा ही सुन्दर लगता है ? किन्तु वह जीना चढते समय भी सुन्दर लग रहा था। कूबड निकालकर चलनेवाले से हम स्त्रियो को बहुत ही घृणा रहती है ।

"जास्टीन मेरा पति लगभग बारह बजे लौटा ओर वह अपने कई मित्रो, डाक्टरो वगैरह से मिलकर बहुत प्रसन्न था। वह चाहने लगा कि उसकी पत्नी भी उसकी इस प्रसन्नता मे आज साँझे डास की अनुमति देकर उसे कृतज्ञ करे । लच के वाद वान निकोलस, हमे अपने कमरे ले गया और मैंने देखा कि उसके पास आवश्यकता से भी कही अधिक स्थान है और वह यहाँ अकेला, बिल्कुल अकेला रहता है। उसकी अपनी एक चित्रो की गैलरी है, जिसमे पुराने से पुराने चित्रकारो के तथा उसके समकालीन प्रसिद्ध चित्रकारो के छविचित्र हैं । उसने अपने चित्रो की गैलरी बिलकुल अलग बनायी हुई है और जहाँ उसने बचपन की मूर्खताओ वाले चित्रो से लेकर आज तक के बहुत से चित्र एकत्रित कर रखे थे । उसे अपने चित्रो मे, सगीते, और स्वय के व्यक्तित्वे एक बहुत वडा अभाव लगता है । वह मानता है कि उसकी कला मे रगाभरण एव मधुर स्वरगुम्फन भले ही हो किन्तु मूल प्रेरणा का सम्पूर्ण रूपे अभाव है । अपनी कला मे उसे आत्मा का सौदर्य नही लगता था। यह कहते हुए वह कई बार पियानो के परदे की तरह हँसने लगता था। वान निकोलस को सगीत से इतनी अधिक रुचि थी कि वह बचपन मे रात-रात भर कन्सर्ट गेबो, नीदरलैड ऑपेरो मे हमेशा व्यस्त रहता था। वान निकोलस आम्सटरडम का एक बहुत ही प्रसिद्ध व्यक्ति माना जाता था । वह स्वय आरकेस्ट्रा, निर्माण भी करता था और उसने सगीत को कई नये-नये आपेरा-सगीत दिये थे । उसका अपना पियानो पूरे आम्सटरडम मे प्रसिद्ध था। मेरा पति जास्टीन कहता था कि वान निकोलस बचपन मे रात को घर से भाग-भागकर सडको पर बेला बजानेवालो के साथ घूमा करता था। वह भिखारियो, मजदूरो की सगीत-सभाओ मे हमेशा बेला बजाया करता था ।

"मै मानती हूं कि वान का प्रभाव मेरे मन पर होता जा रहा था, किन्तु मै इस बार अपने को सभी प्रकार के सकल्प-विकल्प से परे ले जाना चाहती थी, क्योकि किसी भी दूसरे प्रकार के विचार आने का अर्थ था —भयकर परिवर्तन ! ! मै उन दिनो अपने जास्टीन के साथ अधिक से अधिक रहा करती थी ओर प्रयत्न करती थी कि किसी भी प्रकार

वान मे अकेले मे न मिलूँ, क्योकि मुझे अब अपने पर से बहुत पहले ही विश्वास उठ गया था ।

"राते देर तक जो पियानो की ध्वनि सगे हल्की मद रागिनी उठ-उठकर वान की खिडकी से निकल सुनसान बगीचे एव मुझ तक आती थी जो कि डच भाषा मे होने के कारण समझ मे तो नही आती थी, किन्तु, वह इतनी मद और कॉपती हुई हुआ करती थी कि जैसे यह स्वर प्रिया, पूरे यूरोप ओर समुद्र पार करती हुई मुझे भारतवर्ष से यहाँ खीच लायी है। और अकलक ! कई बार मै रात-रात भर सो नही पाती थी। क्योकि बान पूरी रात गाकर ही बिता दिया करता था। मै तब अपने को इस नये मोह से बचाने के लिए, पास के पलँग पर सोये हुए अपने पति की बॉहो को अपने मन पर ओढकर, जैसे इन स्वर प्रियाओ से वचना चाहती थी ओर जास्टीन मेरे बालो मे हाथ फेरते हुए, मेरे कॉपते मन को अपने भुजपाशो से सतुष्ट कर देता था। किन्तु वे स्वर प्रियाएँ मेरे मन को बारम्बार खिडकी के बाहर बुलाती थी--जो कुहरे के रूप मे शतश रूपो मे घिरती थी। मेरा पति मेरे अधरो पर अधर रखकर कहा करता था--

'रजना ! वान कितना मीठा गाता है ओर इन मधुमयी रातो मे रूप के चद्रमा की भॉति इस वान के ये नाइटेगिल के से स्वर !! जानती हो यह गान क्या है ?--

नाविक !
उत्तरी समुद्र मे बहने वाली गर्म जलधारो मे सम्हलकर आना
कारण कि वहा भाप के बादल गहरे, बहुत गहरे हो जाते है--
तुम लोटकर जब तक नही आओगे
मै सपर के लिए तुम्हार प्रतीक्षा करूँगी।
वीथिकाएँ निर्जन हो जायेगी--
उत्तर दिशाए पतझर भी आ जायेगा,
फूलो के रग
बर्फ की ठडी रूई से ढँक जायेगे ।
परन्तु
मोर मन,
तुम्हारे जहाज के गोल पाल वाले ऊँचे मस्तूल को
दूर-दूर तक के आकाशो मे खोजा करेगा --
उसी रीते
जैसे कि 'ओरीरिया बोलिस' के रगमडल
नक्षत्रो को ध्रुव प्रदेशो खोजते है !!

"ओर मै अपने तन को पति की बॉहो मे छोड, मन उन सगे स्वरप्रियाओ के लिए जाने कहाँ-कहाँ उड़ाने मारती हुई, जाने कब तक सोचा करती और सो जाती थी।

कदाचित् जास्टीन तब मुझे रेपर ओढा मेरे विस्तरे पर मुझे सुला जाता। एक नही अनेको राते मैने इन मोहपाखी यात्रिको के लिए काटी अकलक ! मै समझ नही पाती थी कि क्या करूँ ? क्योकि अब मेरे लिए वान एक स्वप्न था ओर यदि मै स्वप्न के पीछे बराबर भागती रहूँगी तो कैसे क्या होगा ? ओर अकलक ! मै अपने पति से बराबर कहती थी कि वह शीघ्र अपनी डिस्पेसरी खोलकर प्रेक्टिस शुरू कर दे क्योकि वान का घर चाहे मित्र का घर हो, परन्तु हमे अलग रहना ही चाहिए।

"जास्टीन स्वय यही सब करने के लिए उतावला था, परन्तु उन दिनो पूर्वी और दक्षिणी हालैड से बहुत से शरणार्थी आ-आकर आम्सटरडम मे भर गये थे। भागकर आने वालो मे सबसे अधिक तो पैसे वाले थे जो अपने-अपने परिवार लिये हुए उत्तर की ओर भाग आये थे ओर प्रतिदिन आम्सटरडम का स्टेशन ऐसे लोगो के आने से भरा रहता था। जर्मनो का दबाव बढता जा रहा था, प्रत्येक दिन ऐसा लगता था कि यदि जर्मन इसी प्रकार बढते रहे तो वे निश्चय ही हालैड पर अधिकार कर लेगे। महारानी जूलियाना कनाडा जा चुकी थी। सरकार के सामने जीवन-मरण का प्रश्न उपस्थित हो रहा था। सारी सडके फोजी बूटो की कवायद से गूँजती रहती थी, पर जर्मन सेना कही रुकती नजर नही आ रही थी। पैसे वाला वर्ग अपनी फर्मो को, बैको को, बद करके अमरीका भागने मे लगा हुआ था। वान् का पिता भी उत्तरपूर्व के उपनिवेशो मे जापान के आक्रमणो के कारण बराबर चिन्ता मे था, क्योकि उसके रबड के जहाज नही आ पा रहे थे। अब ओर रबड की खरीद करने से उसे हानि होने की सम्भावना थी, क्योकि वर्तमान सरकार के सामने उसके टिके रहने का प्रश्न महत्वपूर्ण हो रहा था। फिलिप निकोलस जर्मनो से गठबधन करने की सोच रहा था, क्योकि वह जान रहा था कि यदि जर्मन जीत गये तो उन्हे यहाँ के पूँजीपति वर्ग की आवश्यकता रहेगी और उसने अर्नहेम के आसपास के मिलिट्री क्षेत्र मे रसद ओर सामान पहुँचाने का ठेका हथिया लिया था। साथ ही उसने आम्सटरडम मे माम ओर मछली के आयात-निर्यात पर भी कब्जा कर लिया था, क्योकि उसने सरकार के सैनिक विभागो को युद्ध-सामग्री खरीदने के लिए हालैड के सभी बैको के डाइरेक्टरो पर जोर डालकर पैसा दिलवाया था।

"उन दिनो बदरगाहो पर सेनाएँ, फौजी गोलाबारूद, भारी-भारी लडाई की मशीने ही दिखलायी पडती थी। छोटा व्यापारी वर्ग ओर बडा पूंजीपति वर्ग दोनो बाजारों से पैसा लूटकर अपने अमरीकन बैको मे भेजते जा रहे थे। खाने की साधारण चीजे, कपडा सब का सब लडाई के मोर्चे पर भेजा रहा था। सारे कल-कारखाने लडाई की वस्तुएँ बनाने मे लगे हुए थे। निम्नवर्ग के सामने लडाई की विभीषिका मुंह खोले खडी थी। फैक्टरियो मे मजदूर अठारह ओर बीस घटे मे भी ज्यादा काम कर रहे थे। डच सरकार तथा व्यापार पर ब्रिटेन ओर अमरीका की सरकारे, फौजी शासन कर रही थी।

"परन्तु अकलक ! वान निकोलस के आर्केस्ट्रा के स्वर फिर भी नित्य राते

उठते थे। जीवन दो भागो मे बँटा हुआ था--उधर ऑपेराघरो मे सिम्फनीज रागनियाँ लहरा रही थी और दूसरी ओर फैक्टरियो मे लडाई का सामान बनाता हुआ मजदूर बीस घटे की कडी मेहनत मे पिसा जा रहा था। मुझे अपने आप से घृणा हो रही थी, किन्तु वान की एक मुस्कान मुझे मोह की रगीन साँझ मे बाँध लेती थी। मै समुद्र तट पर खडी-खडी ब्रान के बारे मे सोचा करती थी--जो कि मेरे पास ही खडा रहा करता था --कि कैसा स्वप्नशील व्यक्ति है, स्वर ओर रगो के माध्यम से अनेक रूपो और भावो की सृष्टि मे विश्व को ओतप्रोत कर देने वाला यह वान, मेरे कितने निकट, बिल्कुल इतने पास जितने कि आलिगन मे कोई व्यक्ति पास आ जाता है--परन्तु,

"ओर अकलक! मुझे लगता कि कही अब ऐसा न हो कि जास्टीन भी मेरे जीवन मे चिकनी घाटी बन जाये और मै फिर वहाँ से फिसल पडूँ। क्योकि फिसलते-फिसलते अब किसी चीज पर मेरा विश्वास नही रह गया है। मैने कितनी बार जास्टीन से अनुनय-विनय की थी,

'जान! किसी भी तरह तुम अव अपना काज शुरू कर दो'--

परन्तु बेचारा जान अपने लाख प्रयत्नो के बाद भी डिस्पेसरी नही खोल पा रहा था क्योकि सरकार उसे बाध्य कर रही थी कि फ्रट पर जाना होगा कारण कि वह मिलिट्री मे एक प्रमुख सर्जन माना जाता था।

"मुझे ठीक याद है अकलक! जब जान के युद्ध मे जाने का निश्चय हो चुका, तब हम लोग मारकेन टापू पर सात दिन विताने गये थे। वान से विदा लेते समय उसकी आँखो का भाव मै समझ रही थी कि--रजना! तुम अवश्य पति सगे जाओ, किन्तु मेरी स्वरप्रियाएँ और रग तुम्हारी प्रतीक्षा करेगे--और उसने फिर मेरा हाथ चूमकर कितनी नम्रता से हैट उतार, झुककर मुझे जहाज पर चढाया था और बहुत देर तक मै डेक पर खडी-खडी देखती रही थी कि उसका वह श्वेत हिलता हुआ रूमाल ऐसा लग रहा था जैसे कुहरे मे कोई बलाका उड रही हो।

"जान ओर मै उस टापू पर पूरे सात दिन रहे ओर मै अनुभव कर रही थी कि मुझे अपने पति को इतना प्यार करना है इस बार कि अपने मन मे ऐसी कोई सधि न रहे जिसमे वान ही क्या ओर भी कोई प्रवेश न कर सके! पहले यह टापू 'जी डेयर जी'-- कहलाता था। यहा के लोगों के लकडी के लट्ठो पर बने मकान बहुत नैनप्रिय लगते है अकलक! हम लोगो ने इस टापू के एकान्त छोर पर एक लट्ठो पर बना लकडी का मकान किराये पर लिया। दिन-दिन भर समुद्री हवा और बर्फ पर अपने पैरो को धँसाते मछलियाँ पकडते हुए हम इतना घूमते थे कि कई बार अपने निवास पर लौटना भी दूभर हो जाता था। किन्तु इस सबके पीछे कितना उत्साह और गहरी प्रसन्नता थी। जान की वे खून की गरमीवाली गोरी बाँहे, अपने कधो पर डाल जीवन भर मै घूमना चाहती थी--

पर प्रत्येक क्षण वान निकोलस अपनी छडी घुमाता हुआ, श्वेत स्कार्फ बाँधे मुस्कराता मेरे सामने खडा हो जाता था, और मैं पागल हो जाती थी।

"जान को जाननेवाले इस टापू पर बहुत थोडे लोग रह गये थे। क्योकि एक तो वह बहुत पहले यहाँ से चला गया था और दूसरे जो साथी थे उनमे से कुछ तो नीचे हालैड मे जाकर बस गये थे और कुछ पोल्डर तथा युद्ध के लिए इस टापू को छोड चुके थे। जब कभी कोई मारकेनी स्त्री अपनी चटकीली रगीन वेशभूषा मे दिखायी पडती थी तो जान को अपनी माँ स्मरण आती थी। इस टापू पर जो भी जान को जानता था वह उसकी विचित्र, किन्तु सुन्दर पत्नी पर आश्चर्य एव प्रसन्नता प्रकट करता था, और जब जान उन्हे बतलाता था कि वह अपनी पत्नी ईस्ट इडिया कम्पनीवाले देश से लाया है तो देहाती मारकेन निवासियो की भूरी सफेद पलके, प्रसन्नता मे बन्दरो की तरह खुलने-मिचने लगती थी।

"मै यहाँ सात दिन से अधिक ठहरना चाहती थी, क्योकि एक तो जान के युद्ध पर जाने मे अभी देरी थी और दूसरे मै वान के प्रभाव को अपने मन से सम्पूर्ण रूपे नष्ट करना चाह रही थी। एक और कारण यह भी था कि अगले सप्ताह जो वान का 'नाइट वाच' वाला ऑपेरा हो रहा था उसमे मै सम्मिलित नही होना चाहती थी। परन्तु मेरा पति जान, अपने मित्र की इस कृति को किसी भी मूल्य पर देखना नही छोड सकता था। मै स्वय से सघर्ष कर रही थी। भला जान को मै कैसे बताती कि वान से मै क्यो दूर रहना चाहती हूँ? और हम लोग आम्सटरडम के लिए ठीक समय पर रवाना हुए।

"जिस दिन हम वापस वान निकोलस के घर पहुँचे, ऑपेरा मे दो दिन और शेष थे। वह उन दिनो, दिन दिन भर रिहर्सल मे व्यस्त रहता था। घर भी बहुत राते लौटा करता था। उस रात जब वह घर देर से लौटा और उसे मालूम हुआ कि हम लोग लौट आये है, तो वह सीधा हम लोगो के कमरे की तरफ आया, क्योकि कमरे मे अभी तक प्रकाश था और उसे पूर्ण विश्वास था कि रजना जाग रही होगी। जब धीरे उसने दुआर खोला, मै यद्यपि कुछ पढ रही थी परन्तु सच बात तो यह थी अकलक! कि मै वान की प्रतीक्षा कर रही थी--मै समझ गयी कि वान ही है और मैने मुडकर देखा तो उसके बाल बहुत ही अस्त व्यस्त तथा मुखे गहरी थकान के काले चिन्ह दिखलायी पड रहे थे। जान पास ही के पलँग पर गहरी नीद मे सो रहा था।

हम दोनो कमरे के बाहर आये और वान के कमरे मे ऊपर पहुँचे। कदाचित रात के तीन से भी ज्यादा हो रहा था। अपने को गरम पानी से स्वस्थ बनाते हुए वान ने पूछा--"

'रजना! यात्रा कैसी रही?'

और मै बैठी हुई वान की आँखो मे पिछले दिनो के विरह का इतिहास पढ रही थी। जब उसने मुझे चुप देखा तो उसने पूछा--

'रजना ! क्या कोई गान सुनना पसद करोगी ?'

ओर मै तो जानती थी कि वान कॉपते स्वरो के रेशमी बधनो मे मेरे मन को बॉध लेगा तारपोर मेरा क्या बस चल सकेगा ? वान के चेहरे पर गहरी प्रसन्नता ओर निरपेक्ष गम्भीरता दोनो साथ साथ दिखलायी पड रही थी। उसकी बगल मे बैठते हुए मैने उसके बालो की लटो को ठीक करना शुरू किया। उसकी आँखो मे जाने कितने इद्रधनुप बनते-मिटते जा रहे थे। उसने आज पहली बार मुझे अपनी बॉहो मे भरकर मेरे सदा के प्यासे मन को चुम्बनो और आलिगनो से भर दिया। अकलक ! कहना तो नही चाहिए पर मुझे लगा कि मै कदाचित् बहुत दिनो से प्यासी थी और वह भी इसी जल की---पर उसी क्षण इस विचार ने कि जान नीचे सो रहा है, वह मेरा पति है, और उसके विश्वासो को मै वान के चुम्बनो द्वारा जूठा कर रही हूँ, मुझे विचलित कर दिया ओर मै तेजी के साथ वान से अपने को छुडाकर नीचे अपने पति के कमरे की ओर भागी । मेरा पति उस समय भी गहरी नीद मे सो रहा था। मैने उसके सोते हुए मुख पर, जिस पर अगीठी की आग की लाल छाया गिरकर उस मुख को ताबे के रग का बनाये हुए थी, अपना एक बहुत हल्का मीठा चुम्बन अकित किया। मै जान को जगाकर अपना तन मन आज पूरी तरह सम्पूर्ण मन सगे अतिम बार तक के लिए दे देने पर तुली हुई थी, परन्तु मेरे मन को हल्की ठेस लगी कि क्या यह अच्छा होगा कि इस गहरी नीद के प्रतिदाने मै अपने हाहाकार से भरे मन और कितने ही आलिगनो की छाया लिये हुए इस तन को दूँ ? मेरा मन बहुत उद्विग्न हो रहा था अकलक ! वान इतनी रात गये पियानो पर वही 'प्रतीक्षा-गान' दोहरा रहा था --

नाविक !
उत्तरी समुद्र मे बहने वाली गर्म जलधारो सम्हलकर आना
कारण कि वहाँ भाप के बादल गहरे, बहुत गहरे हो जाते है--
तुम लौटकर जब तक नही आओगे
मै सपर के लिए तुम्हार प्रतीक्षा करूँगी।
वीथिकाएँ सुनसान हो जाएगी--
उत्तर दिशाए पतझर भी आजायेगा,
फूलो के रग
बर्फ की ठडी रुई से ढॅक जाएगे ।
परन्तु !
मोर मन
तुम्हारे जहाज क गोलपाल वाले ऊँचे मस्तूल को
दूर-दूर तक के आकाशो खोजा करेगा--
उसी रीते

जैसे कि 'ओरीरिया बोलिस' के रगमडल
नक्षत्रो को ध्रुव प्रदेशो खोजते है ! !

"जिस रात वान निकोलस का ऑपेरा होने को था, मेरे पति जास्टीन और वान दोनो के मुख प्रसन्नता से भरे दिखलायी दे रहे थे। जब-जब भी मै वान के साथ आम्स-टरडम मे बाहर निकली, लोगो का ध्यान मेरी ओर आकर्षित हुआ है और मुझे अच्छी तरह मालूम हो गया था कि वान आम्सटरडम का बहुत ही प्रसिद्ध तथा सभ्रान्त व्यक्ति है। अकलक ! हँसोगे, किन्तु सचमुच ही मुझे लोग वान की 'भारतीय प्रेमिका' तक कहने लग थे।

"वह दिन आम्सटरडम का वह सबसे बडा कलात्मक प्रदर्शन का दिन था। जब मै वान और जान के साथ आपेरा घर पहुँची, लोगो का एक दल वान की प्रतीक्षा मे बाहर ही खडा था। वैसे लोग, मुझे पहचानने लगे थे फिर भी कई सभ्रान्त व्यक्तियो से वान ने मेरा परिचय कराया। वान, मुझे और जान को बिठलाकर मच पर चला गया। मुझ अपरिचित को साडी मे देखकर लोगो की दृष्टियाँ उठी की उठी रह जाती थी। अकलक ! मेरी सचेष्ट सज्जा भी चाहे कारण रही हो किन्तु मै लोगो की ओर न देखते हुए भी अनुभव कर रही थी कि वे सब नील नयन मुझे ही देख रहे थे। तभी पर्दा उठा और स्वरगधर्व की भाँति वान निकोलस, जो कि इस आयोजन के लिए विशेष परिधान पहने हुए था—अभिवादन कर मुस्कराते हुए रेम्ब्रेन्ट की कला की महानता मे बोलने लगा। मच के प्रकाशपुज मे वह नारियो की सी ऊँचाईवाला व्यक्ति—किस मत्रमुग्ध भावे मेरी ओर देखते हुए बोल रहा था—मै कई बार सहम उठी थी कि कही जान को कुछ आभास न हो आये। उसकी उस समय की ऑखो मे बिलकुल दूसरी ही भाषा थी कि 'रजना ! तुम मेरी वास्तविक कला हो। तुम ही तो वह हो जिसके कारण मेरी कला प्राणवत होगी, तुम्हे खोजते तो ऑखे पथरा चली थी'—और तब वान का 'नाइट वाच' वाला प्रदर्शन प्रारभ हुआ। पास बैठे हुए लोगो का उत्साह एव प्रसन्नता मेरी ऑखो मे वैसी ही चमक भर जाते थे जैसे बिजलियाँ बादलो की नीली कोरो पर चाँदी की गोटें जड जाती है।

रूप, स्वर एव छवि की दृष्टि से वह आपेरा, काल्पनिक सृष्टि भले ही रहा हो, पर सभी पात्र कितने यथार्थ की भूमि पर खडे थे। इस महान ऑपेरा के सृष्टा को मैने मोहा था—मैने उसे प्रेरणा दी थी—और मुझे लगने लगा कि मै इन सबसे ऊपर हूँ इस महान सृष्टि की आत्मा तो मै हूँ—वान और उसकी ये अभिव्यक्ति के रूप, रग, सगीत मुझ प्रेरणा के सम्मुख कितने बौने है ! ! वान को मैने मोहा है। आमी प्रज्ञा ! !

"जिस समय ऑपेरा समाप्त हुआ जान ने मेरा कधा हिलाते हुए कहा—
'रजना ! चलोगी नही ?'—

"और अकलक ! मै उस समय स्वप्न देख रही थी कि—मै और वान हसमिथन की

मानो चाँदनी भरे आकाशो उडते हुए चद्रमा को पकडने के लिए सतरित है, और वान के पख बारम्बार मेरे अगो को छू रहे है—नीचे धरती पर गोरी चमचमाती बरफ बिछी है—केवल आमी, वान अ।र चद्रमा—कि तभी जान ने मेरा कधा हिलाया । मच पर से बच्चो की भाँति प्रसन्न वान ने दौडते हुए आकर मेरा हाथ थामते हुए पूछा—

'ऑपेरा कैसा था रजना !'

"ओर मुझे पहली बार लगा कि वान बिलकुल बच्चा है । उत्तर देने मे थोडी सी भी देर कर देने का अर्थ होगा कि वान के टुकडे-टुकडे हो जाएगे । मै अपने दोनो हाथो मे उसके काँपते हुए दोनो हाथो को लेकर केवल यही कह सकी—

'वान, तुम समय की मानी विराट् ओर महान !!'

"जिस समय हम लोग बधाइयो और लोगो की प्रसन्न भीड से अलग हुए तब उसने धीरे से कहा था—

'तुम्हारी बधाई मेरे जीवन के आकाश का उज्ज्वल नक्षत्र है रजना !'

"और मेरी बधाई उसके यश के आकाश का सबसे उज्ज्वल नक्षत्र है, यह मै समझ गयी थी ।

"मैने कितने आवेशो उस ऑपेरा के बाद आम्सटरडम की वे चमचमाती हुई सुन्दर विशाल सडके, बग्घी मे बैठे हुए पार की और रास्ते भर वान मेरे बाये हाथ को अपने हाथ से दबाते हुए आया था। दाहिने हाथ पर बैठा हुआ जान कदाचित् इस बात से प्रसन्न हो रहा था कि उसकी पत्नी का मन यहाँ अब लग जायेगा, क्योकि पिछले दिनो से वह इसी बात की चिन्ता मे था ओर कई बार वह उसकी चर्चा भी मुझसे कर चुका था। वह इस समय इस चिन्ता से मुक्त था और उसे विश्वास हो चला था कि उसकी पत्नी को अब हालैंड प्रिय हो जायेगा। उसकी इस प्रसन्नता की झलक बग्घी मे आते हुए हल्के प्रकाशो स्पष्ट दिखायी पड रही थी।

"रात बहुत देर-तक हम लोगो ने उस 'नाइट वाच' वाले ऑपेरा की चर्चा की। जान, जो कि हमेशा वान निकोलस की कला का प्रशसक रहा है, उस रात बहुत प्रभावित शब्दो मे कह रहा था कि युद्धोत्तरकालीन कला और सगीत पर वान का प्रभाव गहरा ओर परिपक्व रूपे आ रहा है । हम लोग कला की बातो मे उलझे हुए थे और हालैंड की सडके सो रही थी। पूर्वी ओर दक्षिणी हालैंड कदाचित् जर्मन बमो से छलनी हो रहे होगे। वहाँ का आकाश उस समय भी पीली लपटो मे लिपटा हुआ गरम हो गया होगा, परन्तु आम्सटरडम तक भी वान निकोलस के ऑपेरा के मन्द्र स्वरो मे तन्मय था ओर अब अपने-अपने गरम कमरो, नाइट सूटो मे लिपटा हुआ सोने की तैयारी कर रहा था। वान की चलती बेला की मुस्कान मुझे अभी तक स्मरण है अकलक ! जैसे नील गगन के पियानो की सगीत की उजली रीड हो !!

"वान के साथ ही मैने फ़िलिप निकोलस को एक बार देखा था, तब फ़िलिप

अपने पैसो के बल पर हालैंड की राजनीति मे प्रवेश करना चाह रहा था। उन दिनो फिलिप ने 'कैथोलिक पीपुल्स पार्टी' को अपने पैसो से क्रय लिया था। वान को वह बराबर अपने व्यापार के किसी न किसी विभाग मे लगाना चाहता था ताकि वह राजनीति मे खुलकर सामने आ सके, किन्तु वान के कलात्मक व्यक्तित्व के सामने फिलिप चुप रह जाया करता था। पिता-पुत्र के सम्बन्ध अदर से काफी कडवे थे क्योकि फिलिप ने साठ साल की उम्र मे वान की इच्छा के विरुद्ध एक कैथोलिक वृद्धा से पाँचवी बार विवाह किया था। फिलिप ने यह विवाह मात्र अपने राजनीतिक महत्त्व को बढाने के लिए किया था, क्योकि यह वृद्धा उत्रेच्ट के सभी पादरियो पर अपना प्रभाव रखती थी, और इस विवाह से कैथोलिक पादरियो के बीच फिलिप ने अपना राजनीतिक महत्त्व बढा लिया था। फिलिप की यह नयी पत्नी उत्रेच्ट से भागकर थोडे दिन पहले आम्सटरडम मे आकर फिलिप के साथ ही रहने लगी थी और इसका नाम मेरी था। मेरी के माता-पिता दोनो कनाडियन थे, परन्तु बहुत पहले ही वे हालैंड मे आकर बस गये थे। मेरी ने अपनी बहुत सारी ऊस्टरबीक और होल्टन के पास की धरती लडाई की कब्रगाहो के लिए इगलैंड और कनाडा की सरकारो को दे दी थी, और अब वह अपने पति फिलिप के पास रहने चली आयी थी। अपनी पत्नी द्वारा युद्ध की कब्रगाहो के लिए जमीन दिलवाने पर सभी मिलिट्री अफसरो के बीच मे भी फिलिप का मान बढ गया था। वान, अपने पिता की इस पत्नी से मिलने कभी नही गया था, बल्कि वह फिलिप की दूसरी किसी भी पत्नी से मिलने पहले भी कभी नही गया था। पुत्र के इस आचरण से फिलिप बहुत नाराज रहा करता था, परन्तु वान के व्यक्तित्व के सामने फिलिप को सदा ही चुप रह जाना पडता था। वान शादी करने का कभी पक्षपाती नही था, क्योकि एक बार वह प्रेम मे बह गया था। प्रेमिका के धोखा देने पर जीवन भर के लिए विवाह न करने का सकल्प कर चुका था—और अकलक! मेरा दुर्भाग्य कि वही वान रजना के बिना एक पल का जीवन भी भारी समझने लगा।

"उन दिनो जास्टीन जाने की तैयारी मे लगा था और उसे जल्दी ही चला जाना चाहिए था, परन्तु मै गर्भवती थी, और वह लडाई पर जा रहा था इसलिए हम लोग अधिक से अधिक साथ रहना चाह रहे थे। जिस दिन उसके जाने का मुहूर्त आ ही गया वान ने और मैने निश्चय किया कि जान को उत्रेच्ट तक पहुँचाया जायगा, जहाँ वह रिपोर्ट करने के बाद आगे मोर्चे पर चला जायगा। जब मैने भी उत्रेच्ट तक चलने की बात कही थी, मुझे अभी तक याद है अकलक! जान की आँखो मे जल भर आया था और वह मेरे बच्चे की तरह मेरी जाँघो पर एक क्षण सिर रखकर झुक गया। मै जानती हूँ वह एक बहुत सीधा व्यक्ति था, उसने मुझे बहुत चाहा, और पत्नी की तरह मैने भी उसे सतुष्ट किया। परतु वान निकोलस ने बीच मे आकर मुझे उसके प्रति ईमानदार नही बने रहने दिया। जान के मना करने पर भी वान ने उसे मजबूर कर दिया था कि रजना,

इस देश से बिलकुल अपरिचित है, फिर जान लडाई पर जा रहा है, तीसरे रजना गर्भवती है, इसलिए रजना का अलग प्रबन्ध नही किया जा सकता। जब सब ठीक हो जायगा तब जान को अपने पैरो पर अलग तो खडा होना ही है। जान ने कितनी जोरो से वान की बाँहे दोनो हाथो मे हिलाते हुए कहा था प्लेटफार्म पर कि--

'वान! तुम केवल सगीतज्ञ और चित्रकार ही नही हो एक पूर्ण मनुष्य भी हो' और वान केवल हँस दिया था।

जब जास्टीन उत्रेच्ट से आगे फ्रट पर जाने के लिए विदा हुआ, मुझे सच ही बहुत बुरा लगा ओर मैने पहली बार जान के कधे पर रोते हुए सिर रख दिया था। मेरे आँसुओ ने उसका कधा भिगो दिया था ओर कदाचित् उसके कधे पर के वे मिलिट्री तारे भी भीग गये थे। उसने मेरे गालो पर थपकियाँ देते हुए कहा था --

'रजना! अपने जान को कमजोर न बनाओ--फिर वान तो है ही, चिन्ता किस बात की?'

उत्रेच्ट मे वान ने मुझे बहुत घुमाया। वहाँ के चर्चो की ऊंचाइयाँ देखते देखते अकलक! आज तक मेरी गर्दन दर्द करती है। यहा से बहुत से लोग भागकर उत्तर की ओर चले गये थे। रात रात भर विमानो की 'गू' 'गूँ' नीद हराम कर देती थी, क्योकि पास ही मे अर्नहैम, ऊस्टरबीक वाले लडाई के फ्रट थे जहा घमासान युद्ध हो रहा था।

"उत्रेच्ट और आम्सटरडम के रास्ते भर वान मुझे प्रसन्न रखने का प्रयत्न करता रहा क्योकि जान को बिदा देते समय मेरी जो मानसिक स्थिति हो गयी थी वह उसे मालूम थी ओर उसने ट्रेन मे मुझे बताया कि वह जास्टीन को सबसे अधिक स्नेह करता है। रास्ते भर वान मुझे अपने देश के बारे मे बताता रहा कि कहाँ क्या हुआ है। किस तरह उसके देशवासियो ने इस धरती को समुद्र की डाढो मे से लड-लडकर छीना है और मुझे वराह अवतार की वात याद आ गयी। उसने भारत के बारे मे बहुत कम पढा था परन्तु वह यहाँ के सगीत और चित्रकारी के विषय मे जानता था, तानसेन ओर अजन्ता दोनो ही नाम उसके लिए परिचित थे। उसने कितनी नम्रता तथा कोमलता के साथ हँसते हुए कहा था कि--

'रजना! जान को लौट आने दो और अब की बार तुम्हारे साथ तुम्हारा भारत देखूगा तथा तानसेन की कब्र पर एक आपेरा तैयार करूँगा, साथ ही सुना है कि अजन्ता की चित्रकारी ससार की सर्वश्रेष्ठ चित्रकारी है, मै उन चित्रकारो की महान कला के सम्मुख प्रार्थना मे नतमस्तक होना चाहता हूँ।'--

"और हमारी ट्रेन उस आम्सटरडम प्रदेश के गुलाबी लबे फूलो से भरी हुई धरती के बीच मे से चली जा रही थी।

"जिन दिनो मुझे बच्चा होने वाला था, युद्ध की जलती लपटो के बीचे से बडी मुश्किलो से जान आठ दिन के लिए आ सका था। जिस साझ मै अस्पताल मे दर्द से

परेशान थी, जास्टीन और वान निकोलस दोनो ही बाहर नवागान्तुक प्राणी की प्रतीक्षा मे बैठे हुए थे। जब नर्स ने जाकर उन लोगो को सूचना दी कि 'एक लडका' तब जान पागलो की भाँति दौडता हुआ आकर अपने खुरदरे काँपते हुए हाथो से मेरा हाथ दबाने लगा था। मेरे चेहरे पर कदाचित् पहली और अतिम बार एक वास्तविक पत्नी के माँ बनने की स्वस्थ हँसी आयी थी और वान हम दोनो को देख-देखकर मेरे पैताने पलँग की रेलिग पर कोहनी टिकाये अपनी छडी ऊँगलियो मे नचा रहा था और एक क्षण को अकलक! मेरे मन मे जाने कहाँ से यह भाव आया जिसके लिए, मै अपने आप को कभी भी क्षमा नही कर सकती––

'काश, यह वान की सतान होती'––––

ऐसा क्यो हुआ अकलक!!––और तत्क्षण मैने वान की ओर से अपनी आँखे हटाकर जान के सर्जनवाले हाथ, प्रसव के कारण अपने पीले चिकने गालो पर लेकर फेरना शुरू किया। मै अनुभव करने लगी कि यदि ये हाथ न होगे तो मै कही भी, कभी भी भटक सकती हूँ। किन्तु ये हाथ इतने सबल नही है कि स्मृति मे भी बल दे सके और इसीलिए कि अब मै स्वय से डरती हूँ––इसलिए इन हाथो को अपने पास चाहती हूँ, पर यह भी जानती हूँ कि इन हाथो का महत्त्व जान के देश के लोगो के लिए बहुत अधिक है, लोगो की गोली खायी टाँगो और बाँहो के लिए ये हाथ जरूरी है, दवा है और मै स्वार्थी बनकर इन हाथो को केवल अपना बनाकर नही रख सकूँगी।

"जान ने नर्स से बच्चे को लेकर अपने दोनो फैले हाथो पर लिटा लिया था और कितना प्रसन्न होते हुए कहा था ––

'रजना! तुमने हालैड को एक और सर्जन तथा सिपाही दिया जो बीमारो की सहायता करेगा साथ ही खूँख्वार जर्मनो से लडेगा भी।'––

और नर्स ने हँसते हुए बच्चे को लेकर मेरे पास लिटा दिया था। वान ने जान को टोकते हुए कहा था ––

'रजना! मैने इसीलिए कहा था कि बच्चा जान को कभी मत देना, वरना जान इसे सिपाही और सर्जन बना देगा। तुम इसे या तो अपने साथ रखना जिसमें यह बहुत सुन्दर हो, या फिर मुझे दे देना जिसमे यह एक कलाकार बन सके।'––और दोनो मित्र हँसने लगे थे––

"मेरा पति जान तब वापस फ्रट पर जा चुका था जब मै अस्पताल से लौटकर आयी थी। वान निकोलस उन दिनो चौबीसो घटे मेरी देखभाल किया करता था और मेरे बच्चे के साथ खेला करता था। हँसते हुए कहा करता था––

'पता नही आकृति तो रजना की पायी है मगर शक है कि कही जान के जैसा मिलिट्री दिमाग न हो।'

और इस प्रकार मै हँसते हुए स्वस्थ हो रही थी।

"वान निकोलस कई बार मेरे बच्चे को इतना अधिक स्नेह करता था कि जैसे उसकी अपनी ही वह सन्तान हो। जब वह थोडा बडा हुआ तब वान उसको अपने साथ ऊपर ले जाकर पियानो के पास लिटा देता था और अपने देश की लोरियाँ गाया करता था। हमेशा हँसकर वान कहा करता था कि--

'तुम उसे और कोई भाषा सिखा दोगी और बेचारा बच्चा डच सीखने से वंचित रह जायेगा तो उसे हालैंड छोड़कर भागना पडेगा!'--

कहते हुए वह बच्चे को जाने किस-किस तरह के फूलो के नाम, रगो के नाम और वाद्य-यत्रो के नाम सिखाता रहता था। बच्चे की आया को उसने कडा आदेश दे रखा था कि इस बच्चे को दूसरे बच्चो की अपेक्षा जल्द और अधिक शुद्ध डच आनी चाहिए।

"वान मेरे हाथ पर अपनी उँगलियाँ फेरते हुए दूर आया की गोदी मे जाते हुए बच्चे को देख-देखकर कहता था कि मै इसे वान निकोलस से कही अच्छा सगीतज्ञ और चित्रकार इसलिए बना सकूगा क्योकि इसे सस्कार रूपे अपनी माँ के देश का सगीत और चित्रकारी भी तो मिलेगी।--और मै वान के इन विचारो मे कितना खो जाती थी कि मेरा पुत्र एक दिन सगीतज्ञ और चित्रकार बनेगा जब कि इसका पिता प्रसिद्ध सर्जन है और इसकी माता? और मै अपने को किसी भी चीज पर टिकाना चाहने लगी, लेकिन फटी-फटी आखो से स्वय से प्रश्न करने लगती थी कि मै क्या हूँ?--कदाचित् सुन्दर, पर सुन्दरता तो शरीर का गुण है, क्या इस गुण पर विश्वास किया जा सकता है? नही!!

"वान के निकट बैठकर मुझे इतनी प्रसन्नता और इतनी मिठास का अनुभव क्यो होता है? इसके बारे मे मै आज तक नही जान पायी।

एक साँझ--

"आया मेरे बच्चे को लेकर बाहर घूमने गयी थी और मै दिन भर वान के पास, बहुत सारे पत्रो के लिखने के झमेले मे जा नही सकी थी। गोधूली को जब मै ऊपर उसके पास गयी वह सिर नीचा करके कोई चित्र बना रहा था। लाइट जल रही थी। आज सुबह से ही गगने धूप इतनी उजली फैली थी कि पूरा आम्सटरडम एक खिले हुए सा... सूरजमुखी की तरह लग रहा था। मेरी समझ मे यह नही आया कि वान लाइट जलाकर दिन के इस चौथे पहर मे क्या कर रहा है? ठीक है, चित्र बनाये, यह तो इसका काज ही है पर दिन के प्रकाश मे लाइट की क्या आवश्यकता?

"मै जब पास मे पहुची वह अपनी टेबल पर झुका हुआ इतना तन्मय था कि मेरे आने की आहट भी उसे नही हुई। वह पहले 'वाश' की तैयारी कर चुका था। मुझे लगा कि किसी स्त्री का चित्र है और कदाचित् वान ने रात इसी के पीछे काट दी थी। दिन हो आया, धूप भी आज है --इन सबका कुछ ध्यान ही नही है इसे।

और जब मैंने टेबल लैम्प को बुझाया तब वह चौका ओर एक क्षण मेरी और देखते हुए मुझे अपने आलिंगने भरते हुए कहा--

"जानती हो किसका चित्र है ?"

"मै नही जानती"--

"तो, फिर कल देखना"--

ओर कहते हुए मेरे बालो को सूँघने लगा । मै समझ गयी कि वह मेरी ही छवि है जिसने वान को रात भर सोने नही दिया है।

"जब मेरा चित्र वह पूरा कर चुका ओर बडे गर्व से उसने अपने कमरे के ठीक बीचे टाँगा वहाँ, जहाँ पहले उसने 'प्रिस आफ ऑरेन्ज' सौम्य विलियम का चित्र टँगा था। और जब वह मुझे तेडने नीचे आया उस समय मै एक पत्र उसे लिखने बैठी थी ओर जो आधे से ज्यादा भी हो गया था। उसे इस तरह एकदम प्रसन्न, बाल बिखराये और ढीली कमीज जिसकी आस्तीने चढी हुई तथा तग मोहरी का पैंट पहने आते देखा तो मै एकदम पीली पड गयी। मै चाहने लगी कि उस पर मेरी मनोदशा अभिव्यक्त न हो ओर मैंने बहुत ही फीकी हँसी हँसते हुए उसका स्वागत किया था। मुझे परेशान देखकर भी वह समझ नही पाया था ओर हँसते हुए मेरी कमर मे हाथ डालते हुए कहा--

"रजना ! चलो ऊपर एक महिला आयी है तुम्हे उनसे मिलाना है।"

ओर मै जान रही थी कि उसने मेरा चित्र पूरा कर लिया है। जब वह सौम्य विलियम का चित्र उतार रहा था ओर मेरा चित्र टाँग रहा था तब मै उसे छुपकर देख आयी थी ओर तभी पत्र लिखने बैठी थी। मै जान रही थी कि वान मेरे लिए पागल है ओर मै कदाचित् वान को उससे भी अधिक चाहने लगी थी। किन्तु मुझे जान और अपने बच्चे के प्रति ईमानदार बने रहना है--के विचार ने पत्र लिखने के लिए बाध्य किया था। जिस समय वह मुझे लेकर अपने कमरे मे पहुँचा तो आशा कर रहा होगा कि रजना शायद प्रसन्नता से भर जायेगी ओर वह उसे चुम्बनो से उसी तरह भर देगी जैसे भोर, फूल के पखो को भर देती है ।

"किन्तु जब वान ने देखा कि मेरे चेहरे पर उसके अनुमान के अनुपाने एक अश भी प्रसन्नता नही है तब उसके उत्साह पर पानी फिर गया। अकलक ! यह नही था कि मै अपने आपको वान निकोलस की चित्र गैलरी मे देखकर प्रसन्न नही हुई थी, पर मै क्या करती बताओ ? वह जिस गति मे मेरी ओर बढ रहा था, उसी गति से मुझे पीछे हटना था, तभी तो दूरी यथावत् रह सकती थी, अन्यथा मै बहुत पहले ही वान से टकरा गयी होती। किन्तु अकलक ! मै जो यह कह रही हूँ यह मिथ्यात्मक सत्य है , या तुम चाहो तो अर्ध-सत्य की सज्ञा भी दे सकते हो। मेरे मन मे कही छुपा हुआ यह भी एक भाव था कि सौदर्यमयी रजना को दर्प करने का यह प्रथम अवसर प्राप्त हुआ है । जबकि वान निकोलस जैसा

रूपवान, कलावान, धनवान, ज्ञानवान तथा महान कलाकार एक प्रेमी के रूपे प्राप्त हुआ है। तब तुम बताओ कि मेरे अदर की दर्पमयी सुन्दरी हेलेन का अभिमान करना, क्या युक्तिसगत, सहज नही था ? रजना के अतरतम दर्प को गोरव के उच्च शिखरो तक पहुँचाने का श्रेय चित्रकार वान निकोलस को था। उस समय अकलक ! वान निकोलस की कला की प्रेरणा सुन्दरी रजना ने यदि कलाकार को तृणवत् समझा तो क्या तुम नारी का यह मिथ्या अभिमान समझोगे ?

"ओर बेचारा वान उस समय कितनी वेदना से सिर झुकाकर खडा हो गया जैसे उसने रजना के निकट, उस नारी के निकट, जिसे वह जीवन मे सब कुछ मानकर चल रहा है एक ऐसा अपराध किया है जिसे वह कलात्मक मान रहा था। अपनी दृष्टि मे मेरी इस छवि को निर्मित करके उसने ससार के सभी नारी-चित्रो को पीछे छोड दिया था। अकलक ! मैने उसके निकट क्या अपराध नही किया ? क्या मे नही जानती थी कि वह मुझे अत्यत प्रेम करता है। मैने अपने आप को तभी क्यो नही उससे उसी भॉति अलग कर लिया, जैसे हम बिजली छू लेने पर झटका खाकर अलग हो जाते है। ओर उस दिन अकलक ! उसकी कला की प्रेरणा के चरम क्षणो मे मैने अपने आप को धोखा दिया और अनायास ही अनजाने ठीक उसी तरह शतश खड मे वान के टुकडे-टुकडे हो गये—— जैसे शीशे का बना हुआ इद्रफूल किसी मूर्ख के हाथो से गिर जाये ओर वह मूर्ख अपने हाथ भी काट बैठे ! ! ——किन्तु अतरतम मे बैठी हुई दर्पमयी सुन्दरी रजना को कही हल्के प्रतिहिसा का सतोष भी था, जिसे आज कह देने मे मुझे कोई सकोच नही क्योकि मेरे लिए अब शेप कुछ नही है। आर शेप की अकलक ! बालो ! !

"वान जाकर अपनी टेबल पर सिर थामकर बैठ गया ओर मै अपनी भूल ठीक करने के लिए उसके कधे पर हाथ रखकर खडी हो गयी।

"वान !"

परन्तु वान पत्थर के बस्ट की भॉति चुप था ——

"रजना का 'वान' पुकारने का ढग इस तरह का था कि मै चौक पडा हूँ, और मेरी वे सारी चेतनाएँ वापस लौट रही है जिन सब पर रजना का प्रभाव था। कदाचित् बारह से अधिक ही होगे। सुबह जो रग आँखो मे गिरा था वह इस समय तक भी जल रहा है। और रग का ध्यान आते ही मुझे लगा कि इस नारी ने मुझे इतनी बार 'अकलक' 'अकलक' कहकर मुझसे अपना नाम तक छीन लिया है। मुझे एक क्षण को इस सामने बैठी हुई नारी की साहसिकता पर ईर्ष्या हुई जो जीवन न जीकर, उपन्यास जीकर मेरे सामने सवेरे से बैठी हुई है। मै सोचने लगा हूँ कि कभी एक क्षण को मुझे उपन्यास की एक पक्ति ही जीने के लिए मिल जाती।

दूर पर बारह की गजर बज रही है और मुझे याद आ रहा है कि हौजरी मे काम करते हुए रातपाली के मजदूर बगासी ले रहे होगे। कुछ अपने बगलवालो को सॉचा देखे

के लिए कहकर गदे होटलो मे बैठे चाय पी रहे होगे तथा सस्ती सी सिगरेट पीते हुए खो-खो खॉस रहे होगे ओर आज की इस महँगाई पर नेहरू सरकार को गालियाँ दे रहे होगे कि––

"अरे यार, ये सब चोर इकट्ठा हुए है"––

ओर उसके बाद अपनी नीली खाकी पतलूने तथा गाढे के पाजामो ओर कमीजो मे काटती हुई मैल को खुजलाते हुए वापस काम पर जा रहे होगे ओर अपने गदे हाथो से उजली बनियाने 'खटा खट्' बुनते चले जा रहे होगे।

मै इस तरह बहुत कुछ सोच सकता था पर मेरे हाथो पर रजना का गदराया हुआ कोमल हाथ फिर रहा है ओर मै जानता हूँ कि भावुक होने की सीमा पर पहुँच चुका हूँ। सच तो यह है कि यह मेरे सामने बैठी हुई नारी मेरी इस कमजोरी को भी भली भाँति पहचान गयी है ओर कदाचित् यह सब इसीलिए है भी। मैने हाथ हटाना चाहा है, पर हँसकर उसने मेरा हाथ दाबते हुए कहा––

"क्या तुम मुझे सचमुच ऐसा समझते हो अकलक!"––

मै समझ नही पा रहा हूँ कि इसका मतलब 'ऐसा' से क्या है? यदि कुछ नीच या चरित्रहीन से है तो क्या मै गलत सोचूँगा? पर नही जी, मुझे क्या रजना से!! मै अनायास ही आया था आज, और अब बिहान होने मे कोई विशेष देर भी नही है जब कि मै कानपुर होता हुआ कुछ दिनो मे वापस विजगापट्टम पहुँच जाऊँगा जहाँ मेरी पत्नी है, मेरी बच्ची है, कमरा है, पुस्तके है और मेरे मित्र है––तब रजना कही भी तो नही होगी।

परन्तु क्या मै सचमुच ही रजना से अपने को एकदम अलग रखकर देख सकता हूँ? सोच ले जाना इस समय तो सम्भव है, किन्तु विहाने यही सब सोचना मेरे मन को चाकू की तरह धीरे-धीरे उसी तरह काटेगा जैसे बकरे की गर्दन!! मै रजना को बहुत ध्यान से देख रहा हूँ––

"क्या है अकलक!"––कितने स्नेह से उसने कहा है।

रजना के इस मोहक प्रश्न का मेरे पास क्या उत्तर है?

"तुम सोच रहे होगे कि वान के निकट मेरा वह रूप, दर्प, प्रेम, सब छल था। किन्तु अकलक! मै उसे प्रेम करती थी––हो सकता है तुम उसे छलनामय का रूप दो, यदि मेरे प्रेम मे छलना का कोई अश हुआ तो मै उसे परिस्थिति ही कहूँगी। क्या तुम इस सबमे दोप मुझे ही दोगे? जानती हूँ हम काज कर चुकने पर उसी तरह अपना कधा हटा लेना चाहते है, जैसे शव को ले जानेवाले थोडी-थोडी देर मे उस शव को किसी दूसरे के कधे पर लाद देना चाहते है। ठीक भी तो है, प्रत्येक तो शिव की भाँति सती का शव लिये पूरी पृथ्वी की प्रदक्षिणा करने से रहा! यदि मैने भी वही किया तो क्या बुरा किया? जानती हूँ तुम कहोगे कि मै क्यो बुरा मानूँगा? ठीक

है कि ओठो का कहा हुआ यदि मन का भी हो जाया करता तो मुझे अपनी ओर से कुछ भी कहने को नही। ''

मैं इसका प्रतिवाद करूँगा क्योकि यह तर्क से किसी के सामने भी सिद्ध कर सकती है जो कुछ उसने किया वही ठीक था।

''देखो रजना! तुमने अपने व्यक्तित्व को इतना फैला दिया कि उसमे की सारी गहराई नष्ट ही गयी, अ।र सम्पर्क मे आनेवाला छोटे से छोटा व्यक्ति भी तुम्हे आर-पार देख सका। तुम्हारे विशाल फैलाव का आतक कही भी तो गहरा नही था, तभी तो आज सब स्थाने सूखकर अपने विगत को मात्र रेगिस्तान के रूपे देख पा रही हो जो प्यासा है, जिसमे पानी के नाम पर एक बूँद भी नही।''——

''मै देखती हूँ कि तुम्हारी इस उपमा को ठीक मानकर तो मुझे लगेगा कि मेने सब गलत किया।''——

रजना ने सामने का दीवारो मे कही देखते हुए कहा।

''न मानने को तो कोई प्रश्न ही नही अकलक! न तो तुम्हारी उपमा ही और न मेरा पश्चात्ताप ही विगत की अजगर जैसी चट्टानो को रगफूल वाले कदम्ब मे परिणत कर सकते है। इसीलिए तो विश्लेषण करके तुम मुझमे दूर ही जाओगे ओर और पश्चाताप करके मे अपनी ही दृष्टि मे गिर जाऊँगी। इसाइयो मे जानते हो अतिम क्षणो मे सब स्वीकार कर लेने पर पादरियो का कहना है कि ईश्वर क्षमा करू देता है। अकलक! कितनी मज की बात है। उस एक स्वर्गीय क्षमा को प्राप्त करने के लिए जानते हो कितना बडा बलिदान तुम्हे देना होता है? पूरा जीवन!! परिताप के प्रति-दान मे मिलती है ईश्वर की क्षमा!——कोन जाने कैसी होती है वह क्षमा?? ओर पता नही मिलती भी है या नही—क्योकि तब हम सुख-दुख अनुभव करनेवाले इस शरीर ओर मन दोनो को त्यागने के जलते तटो पर होते है। इसके आगे किसने देखा कोई लोक है भी!!''

मै देख रहा हूं कि वह झूठ कहती है कि उसे पश्चात्ताप नही हो रहा है——तब यह बार-बार आँखो मे हल्की नमी क्यो?

''जानते हो अकलक! तुम अपने मित्र से मिलने आये, यह सब सुनने नही आये थे। दोपहर से लेकर पूरी रात थकाने के लिए रजना तुम्हे फिर मिल जायगी, इसकी भी तुम्हे कल्पना नही थी और बिना कुछ विरोध किये चुपचाप सुनने के लिए तुम बाध्य हुए हो। क्या, बहुत कुछ ऐसी ही बाध्यता मेरे पूरे जीवन के जीने मे नही अनुभव कर सकते? सहानुभूति क्या 'स्व' के लिए ही स्वीकारोगे, अन्य के लिए नही?''

और वह मेरी ओर फटी हुई आँखो से देख रही है जिनमे लाल रग के डोरे अँजे हुए है।

"अकलक ! अभी कथा की परिसमाप्ति थोडे ही हुई है कि मै तुम्हारे निर्णय ओर विश्लेषण को अतिम मान लूँ---जानते हो मैने अपने बच्चे का नाम तुम्हारे नाम से मिलता-जुलता 'असित' रक्खा था, और बप्तिस्मा के दिन जान और वान दोनो ने मिलकर उसका पूरा नाम 'विन्सेट वान असित' रख दिया था। मै उसे 'असित' पुकारती थी, वान उसे 'विन्सेट' पुकारता था और कभी-कभी छुट्टियो मे आने पर जान उसे 'वान दी यगर' कहता था।

"मै उन दिनो बहुत प्रसन्न थी अकलक ! असित को वान दिन भर खेलने के लिए फूल, रग और वाद्यो से घेर देता था। जान को कदाचित् सबसे अधिक प्रसन्नता थी कि उसकी पत्नी आम्सटरडम मे बहुत प्रसन्न है, और इसका कारण वह वान को मानता था ? मै असित को बुलाती ही रहती थी ओर वह वान की ओर देखकर मुस्कराता हुआ अपने छोटे हाथो से आने के लिए मना कर देता था। मै उन दोनो को एक साथ देखती ओर मेरा मन एक हल्की उदासी से भर जाता था---कि वान को इस इतने गहरे प्रेम का प्रतिदान मैने क्या दिया है !! कदाचित यही कि वह मेरे लिए हमेशा विकल बना रहे !! नैकट्य की विभीषिका !!

मुझे उसने समाज के जिस वर्ग की एक प्रतिष्ठित महिला बना दिया था साथ ही मेरे उस चित्र के कारण मै दूर-दूर तक प्रसिद्ध हो गयी थी---वे ऊंचाई के सबसे ऊँचे कगूरे थे जहाँ से पूरा आम्सटरडम, पूरा हालैड रेगता हुआ लगता था। मै नारी से कला-आत्मा बनी अकलक ! किन्तु जाने दो।

"उस रात 'नाइट वाच' के कार्यक्रम पर आलोचना करते हुए उसने कहा था,---

'रजना ! आज के पहले तक भी वान ने स्वर ओर रग की कल्पना-सृष्टि से हालैड की कला को सॅवारा अवश्य था, परन्तु क्या उनमे बासी फूल की सी या कब्र पर चढाये फूल की भाँति एक गहरी उदासी नही थी ? यह ठीक है, हालैड ने उसकी उन कृतियो को भी कला माना, पर ऐसा लगता था कि मै किसी की चिर प्रतीक्षा कर रहा था। जिस दिन जान के साथ हालैड मे तुम उतरी मुझे लगा कि मै जिन मस्तूलो की प्रतीक्षा कर रहा था वे मस्तूल धीमे-धीमे लौटते हुए मेरे कुहरे भरे तटो पर आ रहे है और आज की रात जो कुछ भी मैने दिया वह रजना का दान है,---जान तो निमित्त मात्र है।'---

'रजना ! परन्तु वे मस्तूल किसी दूसरे पोत के मस्तूल हो चुके थे, कदाचित् कुछ क्षणो का व्यवधान हुआ था, किन्तु इससे क्या होता है, मै फिर प्रतीक्षा करूँगा कि वे मस्तूल फिर कभी मेरे तटो पर, मेरे ही पोत के बनकर लौटे---प्रतीक्षा करना मेरा धर्म है---ओर प्रतीक्षा कर भी रहा हूँ रजना। तुम खेद क्यो करती हो ??'

"नित रात को सोने से पूर्व वह मस्तूल वाला 'प्रतीक्षा-गान' जरूर सुनायी पडता और बेचैन होकर अपने पति के विचारो मे खोयी बच्चे से लिपटकर सोना चाहती थी

कि मै कही भटक न जाऊँ—परन्तु असित, मेरे पास न होकर वान के कमरे मे पलग पर लेटा होता, और मेरा पति घायल सिपाहियो के पैरो मे धँसी जस्ते की जर्मन गोलियो को अपनी पूरी ताकत से निकालता रहा होगा —चारो ओर बम बरसते होगे,—'धुम' 'धम' और वान का पियानो प्रतीक्षा के गान स्वर बजाता रहता—

'मेरे नाविक, मै प्रतीक्षा कर रहा हूँ—दूर-दूर के आकाशो मे मस्तूल!!

"मेरे अदर बैठी हुई नारी क्या निर्णय कर पाती अकलक! क्योकि मै डरती थी कि यदि वान जैसा कलाकार मेरे छू लेने पर शाप-भ्रष्ट हो गया तो मै कही की भी नही रहूँगी—तुम इसे भी मेरी छलना ही कहोगे, ठीक है मैने निश्चय कर लिया था कि अब की जान लौट आये और फिर मै यहाँ से चली जाऊँगी।

'वान को जब कभी मै दूर चले जाने के लिए कहती थी तो वह हँसकर कह दिया करता था—

'अपनी ओर से चेष्टा कर सकती हो, मै तुम्हे रोकूँगा तो नही, परन्तु यह तुम्हारा भ्रम होगा कि वान से दूर चले जाने पर तुम उसका, उसकी कला का भला करोगी। हाँ, जीवित रहना चाहता हूँ, पहले कदाचित् कला के लिए जीवित रहना चाहता था और अब कला तथा विन्सेट दोनो के लिए!! क्योकि, विन्सेट एक महान सगीतज्ञ और चित्रकार बनेगा, कारण कि वह वान की तरह टूटे-फूटे व्यक्तित्त्व वाला भी नही बनेगा। पश्चिम की वाद्य-कला को विन्सेट पूर्व के रस और आत्मा से परिपूर्ण करेगा। मै इसे विन्सेट क्यो कहता हूँ? इसलिए कि 'विन्सेट वान गो' को 'माँवे' जैसे महान कलाकार ने हालैंड की सारी कलाओ मे दक्ष करके ससार को एक चित्रकार दिया। हो सकता है, 'विसेन्ट वान असित' 'स्टिल लाइफ विद आइ राइजेज' जैसी अन्यतम कृतियाँ जिनमे पूर्वीय भाव और आत्मा दोनो हो—दे सके। वान यदि विन्सेट के साथ यह सब कर सका रजना! तो वान का कला का ऋण, तुम्हारे प्रति कर्त्तव्य, सब पूरा कर सकेगा'—

और वह दूर गगन मे उडते किसी समुद्री काक को देखने लगता।

"और मै पागल हो उठती थी!

"वान का वह प्रेम मुझे हमेशा, वेस्टर्न टॉरेन के चर्च पर लगे पवित्र क्रॉस की तरह ही दिव्य महान् लगा करता था। चर्च मे प्रार्थना करते हुए बच्चो के स्वरो मे भी मुझे वान का वह 'प्रतीक्षा गान' सुनायी देता था और मै तब अपने और वान के बीच मे बैठे हुए असित को एक क्षण के लिए सटा लेती थी। वान चर्च जाने मे विश्वास नही करता था, परतु रंजना के लिए वह सब कुछ कर सकता था। रॉयल पैलेस पर बने रोमन त्रिभुज की उन तीनो मूर्त्तियो की तरह वान का विश्वास कितना उजला, मासल तथा कलात्मक था।

जिन दिनो असित बीमार पडा, पतझर बीत चुका था। वान उन दिनो लैंडस्केप मे नये-नये प्रयोग कर रहा था। पहले तो वह समझा कि विन्सेट की तबियत मामूली

खराब होगी, और वह प्रयोगो मे दिन भर डूबा रहता। किन्तु एक दिन सहसा जब मैंने देखा कि असित की बीमारी बढती जा रही है, तब वान को चिन्ता हुई और उस दिन से उसने अपने रग और ब्रश रख दिये । असित चार वर्ष का हो गया था। उसकी वेशभूषा पर वान का ही अधिक प्रभाव था---साथ ही यह कह दूँ अकलक ! कि नाम मात्र को मेरा और जान का पुत्र था अन्यथा वह वान को ही सब कुछ मानता था। वान किमी भी मूल्य पर जान को असित की बीमारी की सूचना नही देना चाहता था और, उसने असित के लिए आम्सटरडम के बडे से बडे डाक्टर को बुलवाया। मुझे जाने क्यो इस बार बहुत डर लग रहा था कि असित को हालैंड का क्या ससार का कोई डाक्टर बचा नही सकेगा, किन्तु वान के लिए यह जीवन-मरण का प्रश्न बना हुआ था। वह अपना सब कुछ देकर भी विन्सेंट को बचाने पर तुला हुआ था। उन दिनो वान के पिता फिलिप निकोलस वान से बहुत असतुष्ट था, इसलिए उसे पैसो की तगी भी बहुत थी। जिसे उसने मुझ पर कभी भी व्यक्त नही होने दिया था।

"लगभग छह महीने तक असित बीमार रहा और मैंने देखा कि रात-रात भर वान ने मुझे जागने न देकर स्वय जागकर मेरे असित को बचा लिया। और जिस दिन असित के ओठो पर छह महीने बाद पहली बार मुस्कान आयी, वान की आँखो मे इतनी प्रसन्नता, जल बनकर आने लगी कि वह वहाँ से उठकर अपने कमरे चला गया।

"मैं पीछे-पीछे उसके कमरे तक पहुँची, कदाचित् कई महीनो बाद मैं उस दिन उसके कमरे मे गयी थी। वान उन दिनो बहुत कमजोर हो गया था। उसका कमरा भी अस्त-व्यस्त था और मैं अनुभव कर रही थी कि वान और असित दोनो, एक दूसरे को कितना अधिक चाहते है। मैंने कमरे मे पहुँचते ही देखा कि वान के बहुत से चित्र गायब है। मेरे पूछने पर भी वह मौन रहा। मुझे बाद मे पता चला कि असित की बीमारी मे उसे अपने चित्र बेचने पडे थे और उसने अपनी कला बेचकर मेरे पुत्र की प्राणरक्षा की थी अकलक ! जिस दिन मुझे यह पता चला था मैं वान के कधे पर अपना सिर रखकर कितना रोयी थी। मैं जानती थी कि वान को इसके प्रतिदान तो क्या, वैसे भी सब कुछ देकर मैं उसके प्रेम की ऊँचाइयो तक नही पहुँच सकती थी—और वह मेरे मुख को अपनी दोनो हथेलियो मे जलफूलो की तरह समेटे कहने लगा--

'रजना ! जो मुझे नही मिल सकता, मैं उसकी कामना कर सकता हूँ, किन्तु अपनी कामना पूर्ति के लिए नीचे स्तर तक उतर जाऊँ तो वह नही होगा '--

"और मेरे सामने की उस कमरे की दीवारे, दो तैल चित्र, जिनमे समुद्र किनारे की सझा और पतझर के नगे पेड बने हुए थे---सब घूमने लगे थे, ! !

"निराकरण हम कई बार नही पाना चाहते और कामना करते है कि जहाँ हम है, जो हम देख रहे है, वहाँ तक सब वैसा ही बना रहे तो हमे सतोष होगा, परम सतोष होगा। परन्तु अकलक ! परम सतोष हुआ नही कि सृष्टि उसी दिन

ताश के महल की मानी ढहकर बिखर जायेगी। तभी तो चलते हुए क्रम मे ये व्यतिक्रम आते है, ओर जिसके जीवन मे ये व्यतिक्रम जितने ही अधिक आते है उसका जीवन जापान के लकडी के घरो की तरह छिन्न-भिन्न होता रहता है। लकडियाँ जोडकर घर फिर खडा हो जाता है--परन्तु सम्पूर्ण रूपे घर कभी नष्ट नही होता। परन्तु यह सामनेवाले का मात्र प्रवचन समझना चाहिए। आज मै अपने ऊपरे भी ऐसा ही प्रवचन कर सकती हूँ, पर उन दिनो, उन दिनो तो मै यह सोचकर भी कॉप जाया करती थी कि क्या कभी वान से अलग जा सकूँगी ?

जान के बराबर पत्र आते रहते थे, पर कुछ दिनो से जान के पत्र आने बद से हो गये थे। अर्नहेम के पास जर्मन फिर तेज हो रहे थे। पिछले दिनो से लडाई मे बहुत तेजी आ गयी, थी। कदाचित् १७ सितम्बर १९४४ को रविवार था जिस दिन वान को लेकर मै चर्च गयी थी। आसपास के लॉनो मे तब बहुत कम बच्चे दिखायी पडते थे। धीरे-धीरे सभी के घरो के कोई न कोई आये दिन लडाई मे काम आते जा रहे थे। हालैंड का पूर्वी भाग धीरे-धीरे एक बडी कब्रगाह बनता जा रहा था। इस दिन जनरल उरक्यूहार्ट के कमाण्ड मे आठ हजार सैनिक ऊस्टरबीक और वूल्फबेझ के पास उतरे थे, और वह अर्नहेम पर स्थित राइन नदी के पुल की तरफ से बढना शुरू किया था। दक्षिण की ओर से आती हुई मोटगुमरी की सेना के लिए यदि यह पुल वाला रास्ता साफ हो जाता तो मित्र राष्ट्रो के हाथो मे इसका अधिकार हो जाता। परन्तु जर्मन सेना ने जो कि सख्या और अस्त्र दोनो मे ही मित्र राष्ट्रो से अधिक शक्तिशाली थी अधिकार न होने दिया। पुल से लगे 'वान लिम्बर्ग स्टीरम' स्कूल के पास अग्रेज पराजित हुए। जर्मन सेना ने मित्र राष्ट्रो पर पीछे से हमला बोलकर, सारे अस्पताल, रक्षा पक्तियाँ ओर रक्षा शिविरो को नष्ट कर दिया। जान जिस अस्पताल मे था उस पर भी जर्मन विमानो ने खूब गोलाबारी की, ओर आगे बढती हुई जर्मन सेना ने सब तहस-नहस कर दिया।

सोमवार वासर था। अर्नहेम की इस लडाई का समाचार आम्सटरडम मे भयावह रूपे फैल गया कि जर्मन सेनाएँ जिस प्रचड गति से बढ रही है उस हिसाब से तो किसी भी दिन उत्रेच्ट को तहसनहस कर देगी, ओर फिर तो सीधी सडक की भाँति वे आम्सटरडम पहुँच सकती है। अर्नहेम मे जो कुछ हुआ था वह अपनी पूरी भयानकता के साथ आम्सटरडम के घरे-घरे पहुँच चुका था कि

"वहाँ एक भी नही बचा।"--

"मै बेचैन हो उठी क्योकि मुझे जान के बारे मे कई दिनो से पत्र न आने के कारण चिन्ता थी ही। उसी दिन शाम को अखबार मे जिन-जिन लोगो को अर्नहेम की लडाई मे काम आना पडा उसमे जास्टीन का भी नाम पढकर मै बेहोश हो गयी।

जिस समय मै होश मे आयी, साँझ बीते काफी समय हो चुका था। और, मैने

अपने सिरहाने वान तथा असित को बैठे पाया। मुझे असित को देखकर फूट-फूटकर रोना आ गया। आज मै और मेरा लडका असित फिर समय के प्रहारो द्वारा परिवर्तन के द्वारे खडे कर दिये गये थे । वान की समझ मे यह नही आ रहा था कि वह किस तरह मुझे सान्त्वना दे। उसे स्वय ही अपने मित्र जास्टीन के मर जाने का बहुत शोक था।

वान के कारण मुझे आम्सटरडम मे अनेक लोग जानते थे इसलिए लोगो ने, जास्टीन जैसे सर्जन के मर जाने पर उसकी पत्नी को सात्वना देना अपना सामाजिक शिष्टाचार समझा ।

"मै फिर एक बार बाध्य हुई कि अपने लिए कोई अन्य मार्ग निश्चित करूँ, परन्तु वान किसी भी प्रकार आम्सटरडम से चले जाने या हालैड छोडकर वापस देश लौट जाऊँ, का पक्षपाती नही था, और मै वान के कथन की उपेक्षा भी नही कर सकती थी। वान की चिन्ता भी अब मेरे लिए दिनो दिन बढती जा रही थी। वह मेरे लिए दिन प्रतिदिन अधिक चितित रहा करता था। वह मुझे लेकर अपने बगीचेवाले गॉवो मे सप्ताहो के लिए घूमने जाया करता था।

"समुद्र के किनारे मीलो फैले हुए लम्बे ये उपवन, डचो की पुरुषार्थी बॉहो के प्रतीक थे। मेरा मन कही और न भटक जाये इसलिए वान जैसा कलाकार मेरी छोटी से छोटी इच्छाओ की पूर्त्ति के लिए कृतसकल्प रहा करता था और मै धीरे-धीरे जान के दु ख को कम कर सकी। वर्षान्त होते-होते जान, हम लोगो की चर्चा का विषय बन गया। उन दिनो जब मैने बहुत जोर दिया कि नही, मै जान की कब्र पर फूल चढाने जाना चाहती हूँ, तब वान ने कितने दु ख से अपने ऑसुओ को रोका था, क्योकि लडाई का भय यद्यपि कम हो गया था और जर्मन धीरे-धीरे खदेडे जाने लगे थे, पर वह जानता था कि रजना जब उन कब्रगाहो को देखेगी तो उसके कोमल मन को कितनी ठेस पहुँचेगी। परन्तु, वह मेरे आग्रह को भी जानता था, और साथ ही अपने मन को भी कि वह किसी भी मूल्य पर रजना की इस इच्छा की पूर्ति करेगा ही।

"और हम अर्नहेम गये—

चैत्र का वह अतिम सप्ताह था—

"पूर्वी हालैड को जर्मन सेनाओ ने एकदम कब्रगाह बना दिया था। उत्रेच्ट के बाद हालैड उजाड, वीरान तथा सुनसान हो गया था। सडके, मकान, शहर सब ध्वस्त कर दिये गये थे । गिरजाघरो की टूटी मीनारे, चैत्र की उस उजली धूप मे तथा खुले आसमान मे एक लूले आदमी की बॉह जैसी लग रही थी । फैक्ट्रियो के टुकडे टुकडे कर दिये गये थे। स्टेशनो की आधी दीवारो पर गिद्ध बैठे हुए चीखे भर रहे थे, जली हुई दीवालो की छतो की फ्रेमे, आधी पिघली हुई झूलती हुई दिखायी दे रही थी। कभी इन सब चीजो मे भी जीवन था, परन्तु आज तो वे आधेजले शव की

भाँति दिखायी दे रही थी। रेल्वे गोदामो की टिने, दोपहरी की इस हवा मे खड-खड करती हुई कह रही हो जैसे––

'अब यहा कोई जीवन शेष नही है हमे मत घूरो'––

टूटे पडे वेगन, कुछ उल्टे पडे हुए, कुछ तिरछे हुए ऊपर, आसमान मे जाते हुए विमानो की कर्कश आवाजो को भय से देख रहे थे। लोग कही-कही मलवा हटाने मे लगे थे। वे बाँध, जिन्हे बाँधकर हालैंड के लोगो ने समुद्र की तूफानी डाढो मे से धरती को छीना था, जर्मनो द्वारा तोड दिये गये थे। कई स्थानो पर धरती फिर जलाप्लावित हो गयी थी। पश्चिमी हालैंड के कई बाँध तोडकर जर्मनो ने पूरे हालैंड की रीढ ही तोड देना चाही थी।

"साँझ होते-होते वान, असित और मै अर्नहेम पहुँचे। परन्तु हम उस बेला कब्रगाहो की ओर न जा सके, क्योकि वह लडाई का क्षेत्र अभी भी माना गया था और साँझोपरात वहाँ जाना असम्भव था। रात भर हम लोग एक बहुत ही छोटे और असुविधापूर्ण वाले होटल मे ठहरे। मुझे उस रात जाने क्यो नीद नही आयी, प्रत्येक क्षण उन कब्रगाहो मे से जो कि दूर पर इस खुली चैतिया चाँदनी मे दिखायी दे रही थी––हजारो सिपाही लडते हुए दिखायी देते थे। और जान उन सब की टाँगो और हाथो मे से जस्ते की गोलियाँ निकालता हुआ हाँफ रहा सा लगता था। उसकी फ्रेंचकट भूरी डाढी युक्त आकृति, बिखरे-बिखरे बाल और फटी कमीज––जैसे वह थककर 'रजना' 'रजना' पुकार रहा हो––मे रह-रहकर चीख पडती थी और वान रात भर मेरे सिरहाने बैठा बैठा बाल सहलाता हुआ कहता रहा ––

"पागल न बनो रजना"––

तब जाकर कही भोर हुई ––

"असित को जगा हम लोग सिमीटरीज की ओर बढे। भिनसार हवा निदासी ऊँघती बह रही थी। सडक कभी अच्छी रही होगी, परन्तु गोलो ने उसे कई स्थानो तोड-फोड डाला था, तथा दोनो ओर गिरे हुए मकान खडे थे जो सब घायल सिपाहियो की तरह लग रहे थे––जिन्हे बदी कर लिया गया हो और अब वे सब कँटीले तारो मे घिरे चुप है। हमारे दोनो ओर जीप पर बैठे हुई मिलिट्री के अफसर, लारियाँ गुजर रही थी। यह ब्रिटिश कब्रगाह थी जहाँ जास्टीन की कब्र बनी हुई थी। मिलिट्री के पहरो मे काँटे से घिरे इस कब्रिस्तान मे, मैं अपने पति की कब्र पर फूल चढाने आयी थी।

"अकलक! उस लम्बी कब्रगाह मे वे सफेद क्रॉस चिन्ह खोमे कब्रे, जैसे अपने प्रिय व्यक्तियो की प्रत्येक क्षण प्रतीक्षा करती हुई लग रही थी। कुछ कब्रो पर कल के बासी फूलो की गोल मालाएँ रखी हुई थी। उन मृत सैनिको की कब्रे उस समय प्रातीय ओस मे भीगी हुई एक गहरी मौन मे लेटी हुई थी। मै जितने जल्दी हो सकता था अपने जान की कब्र पर पहुँचना चाह रही थी। बडी दूर से सफेद क्रॉस पर जान का नाम

लिखा हुआ था——जैसे वह रात भर मुझे पुकारती रही हो कि ——

'रजना मै यहाँ हूँ'——

"और मै आँसुओ मे डूबी, भीगा मन ले उसकी कब्र से लिपट गयी। पीछे-पीछे वान और असित आ रहे थे। वान आँसुओ मे डूबा हुआ मेरे वच्चे का हाथ थामे खडा था और असित का एक हाथ मेरे कधे पर था। मैने घुटने के वल बैठकर फूलमाला चढायी। एक कतार मे खडी हुई नर्सो की तरह वे उजली कब्रे——प्रात कालीन आकाश कदाचित चुप थी। इनको चुप करने के लिए जर्मनो ने गोले बरसाये थे और इन बोलते हुए मानुषो की जगह जव तक चुप रहनेवाले क्रॉस नही लग गये, सगीने, बम और गोलाबारी होती रही थी। मुझे लगा कि जान अब हमेशा यही पडा रहेगा, और अब शायद मै भी न आ सकूँ। जव दूसरो की कब्रो पर लोग फूलमाला चढाने जायेगे, मेरे जान की कब्र अपनी प्यासी आँखो से रजना और असित तथा अपने मित्र वान का पथ जोहा करेगी।

"मेरा पति जो कभी व्यक्ति था, आज मात्र एक क्रॉस लगी कब्र!!

"तुम कहोगे अकलक! कि मै नीच थी जो जान जैसे पति को वर्ष भर मे भूल चली। मै तुम्हे ऐसे सोचने से रोकनेवाली कौन हूँगी, किन्तु वान जो कि जीवित मेरे लिए घुला जा रहा था, मेरी चिन्ता का कारण बनता जा रहा था। मै जानती थी कि जान को अब लौटाया तो नही जा सकता था, किन्तु वान को भी तो खोया नही जा सकता था मै पूर्ण रूपे आश्वस्त हो गयी थी कि मेरी छाया भी अगर वान को छू गयी तो, यह वान भी दूसरे सब व्यक्तियो की तरह बालू के महल की भाँति ढह जायगा और मै अपने को वान से वचाना चाह रही थी। अपने लिए नही——स्वय उसके लिए, उसकी कला के लिए और मेरे अपने बच्चे के लिए, जिसका कि वह पिता और माता सब कुछ था।

मै मानती हूँ कि वान ने उन दिनो बहुत सुन्दर चित्र वनाये। वह कब्रगाहो का एक चित्र बना रहा था। परन्तु वान प्रत्येक क्षण मेरे जीवन मे पास और बहुत पास आता चला जा रहा था। मै अपने आप को समेटने के स्थाने ढीला करती जा रही थी। वान उन दिनो बहुत प्रसन्न रहने लगा था। वह अपने चित्रो के आधार पर ऑपेरा भी लिख लिखकर प्रदर्शित करता था। वापस लौट जाने का मेरा प्रत्येक निर्णय, उसकी उदासी की एक रेखा के सामने टिक नही पाता था। मै अपने को उससे हमेशा के लिए अलग रखने मे ही भला समझ रही थी, परन्तु वह बेतहाशा दौड रहा था जैसे कोई बर्फ पर स्केटिग कर रहा हो। अब असित भी पाँच वर्ष से ज्यादा का ही हो गया था, वह बहुत ही सुन्दर बिल्कुल वान की तरह ही डच बोलने लगा था। वह रगो का मेल मिलाना उन दिनो सीख रहा था। जव कभी वान अपने ऑपेरा की रागनियाँ बनाता था, असित उसके पास घटो बैठा रहता था और वान उसे एक बार सिखलाकर वैसे ही पियानो बजाते हुए गाने के लिए कहता था। और जब वह बिल्कुल वान की ही

तरह पियानो पर गा लेता, तब वान पागलो की तरह उसे उठाकर चूमने लगता। मेरे मन को कितनी ठेस लगती थी कि, इसी वान को, इसकी कला के लिए मुझे छोडना होगा और मै अथाह दुख से भर उठती थी।

"वान की समझ मे यह नही आता था कि मुझे ऐसा क्या दुख है जिसे मे कभी भी न तो बूझ पाती हूँ और न कह ही पाती हूँ—इस तरह की चर्चा हो आने पर उसके मुख पर गम्भीरता आ जाती थी। कभी-कभी मै स्वय कॉप उठती थी कि रजना ओर असित के बिना इस वान का क्या होगा? अकलक! कदाचित् मै अपने अलग होने का विचार उससे बहुत धीमे-धीमे उस पर प्रकट करती, जिसमे उसे ठेस न लगे। क्योकि वान के साथ रजना स्वार्थी कभी नही होना चाहती थी मैने उसे तभी इतना चाह लिया था, अब मै उसे फिर चाहकर पथभ्रष्ट ही करती, उस पर शाप की छाया ही डालती। वान मेरे निकट पुरुष से पहले कलाकार के रूपे आया था और उन दिनो पुरुष के रूप मे मेरे लिए पति था ही। अब इस वान मे ही दोनो को एक साथ देखने का अर्थ था कि मै वान से विवाह करूँ। मेरे विवाह के अशुभ पख इसे अवश्य ही ग्रस लेगे, ऐसी मेरी धारणा हो चली थी और वान के न रहने की कल्पना से ही मेरा रोम-रोम कॉप उठता था—यदि मेरे कारण वान को कुछ हो गया तो तुम्ही बताओ अकलक! क्या फिर मुझ जैसा दूसरा पतित व्यक्ति हो सकता था? या फिर मेरे लिए जीवन सम्भव था? यदि मै वान के न रहने पर जीवित रहती तो, उसका अर्थ होता कि रजना मात्र शरीर है उसमे आत्मा की छाया तक नही!!

"उस दिन आसमान बहुत साफ था। पीली धूप, नभ की नीली दीवारो मे ठीक वैसे ही चमक रही थी जैसे दिशाओ के सगमरमर के खभो से मेघराजा के नीले महल मे बडे-बडे पीले रेशम के परदे टॅगे हो। हम लोग समुद्र नहाने के लिए गये। समुद्र के किनारे और दिनो की अपेक्षा आज कोसो तक धुले-धुले लग रहे थे। लडाई बद हो चुकी थी, पिछले सप्ताह ही हम लोगो ने पूरे आम्सटरडम के लोगो के साथ मित्र राष्ट्रो की विजय खूब नाच-गाकर, दिवालियाँ मनाकर तथा आसमान मे रगबिरगे गुब्बारे छोडकर मनायी थी, परन्तु मेरे मन पर जान को लेकर हल्का विषाद भी था। समुद्र मे नहाते हुए वान ने आज पहली बार छाती तक गहरे समुद्र जल मे मेरा हाथ थामकर कहा—

'रजना! मै तुमसे विवाह करना चाहता हूँ—क्या तुम भी ..'

और मै एक क्षण के लिए कॉप गयी अकलक! समुद्र का जल एकदम मुझे बहुत ठडा लगने लगा जैसे मुझे ज्वर हो आया हो। मुझे वान के साथ विवाह कभी नही करना चाहिए, यह धारणा पक्की हो चुकी थी, और मे कभी भी वह स्थिति नही चाहती थी कि वान विवाह के लिए प्रस्ताव रखे और मुझे गहरा सुख होते हुए भी अस्वीकार करना पडे।

"वान की मूर्खता ने मुझे उसी क्षण, चारो ओर समुद्र जले घिरे हुए यह

मैंने वान से असित को साथ मे ले जाने के लिए कहा, परन्तु उसने मुझे ऐसा करने मे इन्कार किया, किन्तु मैंने उससे जिद की क्योकि कुछ भी हो मै उसकी माँ हूँ---जिसका अर्थ था कि वान, तुम कुछ भी हो अगत्या असित के पिता के मित्र ही तो हो। उसने हँसते हुए कहा था---

'रजना ! उसी से पूछ लो, यदि वह जाने को तैयार हो तो मुझे क्या आपत्ति हो सकती है ?---'

'असित आया, और मैंने देखा कि वान की साश्रु आँखो मे कितनी पीडा और दु ख दोनो एक माथ है। असित, बिलकुल वान के जैसे ही कपडे पहने था। वान ने उसका हाथ पकडते हुए कहा ---

'विन्सेंट ! तुम्हारी ममी जा रही है, और तुम्हे ले जाना चाहती है'---

''अकलक ! असित ने मेरे सारे दर्प, गर्व और माँ होने का अधिकार अपने उस एक वाक्य से ध्वस्त कर दिया---

'ममी कही भी जाये, मै वान को छोडकर नही जा सकता।'---

''मेरा ही हाड मास, रक्त मुझसे विद्रोह कर रहा था, और मै चुपचाप सुन रही थी। असित के लिए वान सब कुछ था और मै उसकी माँ होते हुए भी कुछ नही थी। उसने वान का हाथ इस तरह पकड लिया जैसे सामने खडी हुई यह अपरिचित स्त्री, उसे कही घसीट कर ले जाना चाहती है। वे दोनो मेरे कमरे से चले गये।

''और मै फूट फूटकर रो पडी अकलक !!

''प्रत्येक व्यक्ति मुझसे रूठकर या रुष्ट होकर या विद्रोह करके आज तक विदा होता गया। मै कौन तटे लगूँगी यह समझ मे नही आ रहा था। एक क्षण को यह भाव जगा कि जब असित भी नही जा रहा है तब वापस भारतवर्ष जाकर ही क्या होगा ? वान का मुझ पर कितना प्रेम है, मै उसे ठुकराकर, अपनी सतान से अलग होकर, वापस अपने देश, या कही भी जाकर क्या पाऊँगी'?? परन्तु रजना के अदर बैठी दर्पमयी को यह अपमानजनक लग रहा था कि रजना कमजोर बने। आज तक जब वह बढती ही आयी है तब उसे ऐसी क्यो झिझक होनी चाहिए ?

और मैंने सध्या की गाडी से विदा होने का निश्चय कर लिया ---

शाम को वान और असित मुझे स्टेशन पर छोडने आये। वान की आँखो मे आँसू रह-रहकर आ रहे थे। मै भी कम दुखी नही थी, परन्तु मेरे लिए लौटना भी सम्भव नही था। वान ने गाडी चलती बेला एक बार फिर पूछा था---

'रजना ! क्या यही अतिम निर्णय समझूँ ?' ---

''मैंने असित को प्यार करते हुए कहा था---

'वान ! रजना को निर्णयो की सीमा के परे मुझे अब ले ही जाना होगा, रोको मत, भले ही आगे मेरे लिए गति न हो।'

"और अकलक ! आम्सटरडम स्टेशन की लाल, हरी लाइटोवाले प्लेटफार्म पर खडे वान और असित धीरे-धीरे दोनो दूर होते गये और मै अपने कम्पार्टमेंट मे फिर रो पडी।

मेरे विचारो मे वान का वह लम्बा सा हैट, छडी, बगुले की मानो हिलता हुआ सफेद रुमाल, और वह छोटा वान मेरा असित, अपने गोरे गदराये हाथ हिलाता हुआ—बारबार घूम रहे थे, क्या मै अब कभी देख सकूँगी ?? वे दोनो ही प्रश्न बनकर स्टेशन पर पीछे छूट चुके थे और मेरे साथ असमाधान के अश्रु अनागत जीवन भर के लिए गाडी मे चल रहे थे।

"हालैंड जाती बेला जब भारत छोडा था तब मैंने कितनी करुणा मे दूर होते हुए अपने देश को देखा था और एक क्षण के लिए विचार घिरा था—कि अब कदाचित् जीवन भर के लिए यहाँ लौटकर नही आ पाऊँगी। मेरे देश के पेड, पौधे, फल, फूल, बसन्त मे रग ओढकर हँसनेवाली ऋतु, पतझर मे हर बरस नगे होते रहनेवाले वन —ये सब नही देख पाऊँगी और सदा के लिए इन सबसे दूर हो रही हूँ, पर तब मेरा पति जान साथ मे था !!

"परन्तु, अब जब मै वापस बम्बई पहुँची बिलकुल एकली थी। मुझे लगा कि बम्बई के समुद्र की एक-एक लहर वैसी की वैसी ही है, जैसी कि वे चीनी फूल या पखे लालटेन या आकाशदीप बेचते समय बरसो पूर्व इन्हे देखा करती थी। तब की और आज की रजना को अलग करने मे कई व्यक्तियो, और परिस्थितियो का हाथ है। लीई इसी बम्बई मे कही अपने चीनी पति के साथ होगी—जो कि दाँत बनानेवाले किसी चीनी डाक्टर के यहाँ अब भी काज करता होगा। दो-चार बच्चो की माँ भी वह अब हो गयी होगी। रजना को वह भूल गयी होगी, की सम्भावना नही। आज प्रत्येक की गति मे परिवर्तन आ चुका है—बल्कि अच्छा तो यह होगा कहना कि शेष लोग तो चीटी की चाल चलकर थोडे से ही बदले होगे, परन्तु रजना की गति मे अवश्य ही गरुड की योजन-प्रियता, ईगल के डैने लगे थे और रजना, मात्र बदल ही नही गयी है, वरन् नूतन जन्म ही हो गया है उसका !! कदाचित पथभ्रष्ट होना भी द्विज होना है।

"बम्बई पहुँचकर मैंने पहली बार चाहा कि क्यो न एक बार बम्बई घूम लूँ ? और मै पूरा घूम भी आयी अकलक ! चौपाटी पर मुझे स्वय लगने लगा था कि मेरे हाथ के वे पखे, फूल वगैरह कहाँ गये ? मेरा वह बुर्का कहाँ रह गया है ? वह लीई कहाँ चली गयी अब, जो कि अभी-अभी मेरे साथ थी ?—और मेरा मन खिन्न हो उठा। वह अँधेरीगली वाला मुहल्ला कितना भयावना लगने लगा था कि जहाँ मै कभी अहमद जैसे बर्बर की बीबी बनकर उसके बच्चे की भी माँ बनी थी ! और फिर वे कुटनियाँ, जो मुझे वेश्या बनाना चाहती थी। मै चीख भी पडती उस दिन चौपाटी पर, परन्तु मेरे निकट देखा कि उसी बेच पर—एक बहुत साधारण

व्यक्तित्ववाला मिलिट्री का कोई अफसर, आकर बैठ गया है । मै थोडी देर मे उठकर वहाँ से चल दी। मैने बम्बई पहुँचने की सूचना वान को दे दी थी, और आगे कहाँ जाकर रहूँगी, के बारे मे उचित समय पर सूचना कर दी जायेगी—यह भी लिख भेजा था । मुझे लगभग प्रतिदिन ही वान को पत्र लिखने पडते थे।

बम्बई का वह दिन—

"मै अतर्राष्ट्रीय चित्र प्रदर्शनी से लौटी और वहाँ मैने समार के महान् कलाकारो के बीच म अपने वान निकोलस के भी चित्र देखे तो मेरा मस्तक गर्व मे ऊँचा हो गया। मुझे देखकर कितना आश्चर्य हुआ कि उसने अनेक चित्रो मे मेरा चित्र भी प्रदर्शन के लिए भेजा था ।

मैने अनुभव किया कि वान से अलग होकर मैने कदाचित् अच्छा नही किया क्योकि उसकी कला ने मुझे कितना महान् बना दिया था। मैने अपने मनोवेग को वान के नाम एक पत्र लिखकर अभिव्यक्त किया । पत्र लिखकर प्रेषित करने के पूर्व इस पर काफी सोचा कि वान के पास लौट जाने की जो अभिलाषा प्रकट की है वह कहाँ तक उचित है ? मेरे पास इसका कोई उत्तर नही था, क्योकि मेरा यह आचरण आज तक के व्यवहारो मे एकदम पृथक् ही तो था। लौटकर जाना रजना का स्वभाव—कम से कम उसे तो नही स्मरणता कि ऐसा कभी हुआ हो । मै कई दिनो तक चौपाटी पर बैठी-बैठी अपने इस इस आचरण के औचित्य एव अनौचित्य पर सोचती-विचारती रही। मेरे सामने वान के वे सभी चित्र आ जा रहे थे क्योकि उनके निर्माण मे मेरा हाथ था, उनकी एक-एक रेखा जब निर्मित हुई थी तब मेरा हाथ या तो वान के बालो पर रहता था या फिर कधे पर, और उसका विन्सेट, सामने बैठा हुआ रगो के साथ मजाक किया करता था। जिस दिन ये चित्र भेज रहा था उस दिन वान ने केवल चर्चा की थी पर बताया नही था कि वह कौन-कौन से चित्र भेज रहा है क्योकि उसके प्रति मेरी उदासीनता काफी बढ गयी थी ।

समुद्री साँझ—गुलाबी कूचियाँ आकाश के नीले वस्त्रो को रँगने की चेष्टा कर रही थी—वह ज्वार की परिसमाप्ति का क्षण था। मै चौपाटी पर बैठी हुई थी और वह मिलिट्री अफसर आकर उसी तरह ठीक मेरी बेच के दूसरे कोने पर बैठ गया और मुझे घूरने लगा—जैसे वह मुझे पहचानने का प्रयत्न कर रहा हो। मैने उसे कई दिनो से इसी तरह नित साँझ को अपने पास आकर बैठते देखा था तब मुझे अच्छा नही लगा और मैने जैसे उसे फटकारते हुए कहा था—

"कहिए, किसे खोजते है आप ?"

और उसने कितने स्मार्ट तरीके पर हँसते हुए उत्तर दिया था—

"क्षमा करे, देख रहा हूँ कि चित्र को अकेला छोडकर चित्रकार कहाँ चला गया"

मैने आँखे तरेरते हुए कहा था—

"क्या तात्पर्य आपका ?"—

उसने ठहाका भरते हुए कहा—

"मेरा मतलब है कि वह आपका चित्रकार कहाँ है, जिसने आपको प्रदर्शन की वस्तु बनाकर तो भेज दिया और स्वय कहाँ "

"और मुझे लगा कि यह व्यक्ति व्यर्थ ही प्रदर्शिनी नही देखता था। चित्र-प्रदर्शनी मे मेरे पास खडे होकर मैने किसी मिलिट्री अफसर को बराबर ही देखा था और मुझे तब स्मरण हो आया कि यही वह मिलिट्री अफसर था।"—

अबकी बार मैने रजना को फिर ध्यान से देखना चाहा है और मै उसकी ओर देख रहा हूँ कि उस हालैड के चित्रकार वान ने इस रमणी को किन रगो मे चित्रित किया होगा।

रजना के शरीर के एक-एक अग की बनावट मेरे कितने निकट है जो कभी रग और कला द्वारा कैनवस पर निखर पडी होगी। मै कल्पना कर सकता हूँ कि वान ने ससार के समस्त नारी चित्रो को चुनौती देने का जो साहस किया था और उसके लिए जिस व्यक्ति का अकन किया था वह मिथ्या नही था, क्योकि उसने वह चित्र बनाकर स्वय और व्यक्ति दोनो को अमर कर दिया—किन्तु उस वान जैसे कलाकार को अपनी कला की अमरता का कितना बडा पुरस्कार इस नारी के हाथो प्राप्त हुआ है। विश्व की कडी से कडी आलोचना वान को ढहा या गिरा नही सकती, किन्तु रजना की एक अस्वीकृति —क्या किसी भूचाल या प्रलय से कम है ? फिर वह भी वान जैसे सस्पर्शवान व्यक्ति के लिए!! और मै देख रहा हूँ कि अगर वान मुझे मिल सके तो मै सब कहकर बतला दूँगा कि तुम्हारी रजना जिसे तुमने रग और कला का रूप देकर इतना उत्कृष्ट बनाया और उस नारी को अपना मन देकर पीडा या ठोकर पायी—वह क्या है ? मात्र छलना !! जो कगारो को छूकर उन्हे सदैव के लिए उपहास मे जीने देने के लिए पीछे छोड जाने मे विश्वास करनेवाली इस ब्रह्मपुत्र रजना को वान! तुम समझ सके ?

और मै भी समझ रहा हूँ यह दावा भी गलत है, क्योकि मेरा मन तटस्थ का मन तो नही है न ? मै जानता हूँ अपने मन के भाव को अभिव्यक्त करके वान की सी ही गलती करूँगा

वान एक महान कलाकार और मै एक बनियान की फैक्टरी मे डिजाइनर!!

दो व्यक्तियो का महान अतर!!

रजना इस अन्तर को जानती है, परन्तु वह तो मुझे 'अकलक' समझती है।

"देखो अकलक! हो सकता है जितनी देर तुम्हे सुनने का अवसर मिले, सोचने के लिए कम ही मिले परन्तु मै तुम्हे उसके लिए भी अवसर दूँगी। इसलिए मुझे अपना विगत समाप्त कर लेने दो, और मुझे वर्तमान के भी निर्णय आज ही

लेने है इसलिए बाधा न पहुँचाओ। फिर, शेष अब है ही कितना!!

"यह मिलिटरी अफसर कर्नल कुलकर्णी था, और उसके साथ मे तब नित प्रदर्शिनी जाती थी। वह घटो मेरे चित्र के सामने मुझे ले जाकर एक-एक रेखाओ का उतार-चढाव बहुत ध्यान मे देखता हुआ वान निकोलस की महान कला की प्रशसा करता था।

कर्नल कुलकर्णी के पिता, कभी पूना के रहनेवाले थे लेकिन वे मद्रास मे जाकर काफी दिनो से रहने लगे थे। वह पहली लडाई मे फोज मे भर्ती होकर फ्रास गये थे, तथा वहाँ पर मारे भी गये थे। कर्नल कुलकर्णी के पिता—बचपन मे ही अनाथ हो गये थे, ओर मिशनरियो ने उन्हे पाला-पोसा था, इसलिए वह लगभग जन्म से ही इसाई थे। कुलकर्णी की माँ, भी इसाई थी। कुलकर्णी के पिता ने विवाह के बाद दर्जी का काम शुरू किया था। बाद मे मिशनरी स्कॉलरशिप मिलने पर कनाडा पढने भी गये थे, ओर वहाँ से उन्हे मिलिटरी मे जाने का शौक लगा था। परन्तु कर्नल कुलकर्णी बहुत बच्चा था, तभी उसका पिता लडाई मे मारा जा चुका था। उसे इसकी माता ने ही उसी दर्जी की दूकान द्वारा ही पालापोसा तथा पढाया था। सरकार ने, कुलकर्णी के पिता की सेवाओ का ध्यान रखते हुए इसे फौजी शिक्षा देकर मिलिटरी मे ले लिया था। इस दूसरी लडाई मे यह जापानियो से लडने सिगापुर भेजा गया था, जहाँ से वह अभी लोटा ही था। कुलकर्णी जब लाम पर था तब उसकी माँ एक दिन चर्च से लोटते हुए हार्ट फेल मे समाप्त हो गयी थी—क्योकि पादरी ने उस दिन प्रार्थना के बाद अखबार पढकर सुनाया था कि सिगापुर—जापानियो के कब्जे मे आ गया और वहाँ मित्र राष्ट्रो की सेना का एक भी व्यक्ति नही बचा। यद्यपि समाचार गलत था।

"धीरे-धीरे कुलकर्णी, मेरे यहाँ आने लगा और मै उसके साथ साँझ को नियम से घमने जाती थी। वह पक्का रोमन कथोलिक व्यक्ति था साथ ही चर्च जाना कभी नही भलता था।

"वान सोचता था कि मे अवश्य ही उसके पास लौट जाऊँगी और उसका सोचना बिल्कुल उचित भी था। वान के लगभग प्रतिदिन के हिसाब मे लम्बे-लम्बे पत्र आते थे ओर जिसमे मुझे वह लोट आने का अनुनय करता था। वान का कभी-कभी अननय तो सीमा पर पहुँच जाया करता था और अकलक! मेरा मन एकदम उस तक पहुच जाने के लिए विकल हो उठता था—परन्तु मुझे प्रतिदिन नये-नये निर्णय बनाने पडते थे।

गुनी, क्या हमारा मन ज्यामिति की पुस्तक है? कि हम कुछ सिद्धान्त प्रतिपादित करके कि बस—प्रत्येक त्रिभुज के तीनो कोणो का योग १८० ही होगा, या इसी प्रकार के सिद्धान्तो से हमारा मन बाँधा जा सकता है?—कि नही इस

प्रतिपादित सिद्धान्त की तरह यही प्रतिपादित व्यक्ति है, और हमे इसी के साथ प्रेम या घृणा करनी है ! ! कदाचित् कुछ लोग ऐसा करने मे विश्वास करते हो। तन को तुम बाँध लो क्योकि उसकी सीमाएँ है, परन्तु मन को कौन सा सिद्धान्त सिखाओगे ?

"मै अनुभव करती थी कि वान से दूर आकर मै तन से दूर आ गयी हूँ, परन्तु वान का प्रत्येक शब्द मुझे उसके निकट पहुँचा देता था, और मै प्रत्युत्तर मे जाने क्या क्या लिख जाती थी—यह प्रत्युत्तर लिखनेवाला मेरा तन था या मन ? कुलकर्णी को जाने क्यो विश्वास होता जा रहा था कि मे वान के साथ विवाह कर चुकी थी। यदि विवाह नही भी हुआ था तो विवाह करना चाहती थी और किसी कारण विशेष से मुझे हालैड छोडना पडा और वह मूर्ख कलाकार अभी तक आकर्षित करने के लिए अपनी चेष्टाएँ कर रहा था । मै कभी-कभी कुलकर्णी की इन चेष्टाओ पर उसी तरह ठहाका मारकर हँस देती थी जैसे वह मेरे सामने अभी बच्चा है और मुझे आकर्षित करना चाहता है। जिसने वान निकोलस जैसे ससार-प्रसिद्ध कलाकार और सगीतज्ञ के प्रेम को ठुकराया, क्या वह कुलकर्णी जसे बौने व्यक्तित्त्व के व्यक्ति के साथ कभी प्रेम के बारे मे सोच भी सकती है ? और अब —जब कि ऐसी धारणा की कल्पना भी नही की जा सकती।

"लेकिन कुलकर्णी, अपनी धुन मे था। हम लोग प्रत्येक सध्या रेस्तराँ मे बैठकर डिनर लेते, उसके बाद वह ड्रिक के लिए मुझे बाध्य करता। प्रारम्भ मे मैने बिलकुल अस्वीकार किया, क्योकि मुझे वान की वे आँखे स्मरण हो आती जब वह और मै दोनो ड्रिक करते थे और उसके बाद पियानो पर वान के वे सजग एव मादक स्वर जो आम्सटरडम के ठडे नील आकाश मे उडते से लगते थे—कला की साक्षात प्रतिमा वान निकोलस के वे सप्तवर्णीय रगगधमय स्वर! ! कितने कलात्मक ढग से तब वह मुझे भुजबधनो मे बाँधकर अपनी नीली आँखो मे मेरी आँखो मे समस्त वेदना उँडेलता हुआ कहा करता था —

'रजना ! तुम मेरी प्रतीक्षा हो और मै जीवन भर प्रतीक्षा करने के लिए बना हूँ'

"और उसके बाद मै अपना हाहाकार मन ले अपने कमरे मे चली आती थी। तभी मुझे मेरे सामने ड्रिक करता हुआ कर्नल कुलकर्णी एक फूहड बच्चा सा लगा करता था जो सिगापुर के आक्रमण के बारे मे, जापानियो की पशुता के बारे मे, मिलिट्री के चन्द रटे हुए वाक्यो मे घटो दुहराता रहता था। व्यक्तियो के इस अतर को जानते-बूझते भी मैं कुलकर्णी की उस एकरस कथा पर, रेस्तराँ के सफेद बगुले के पर की भाँति उजले रूमाल से अपने ओठ पोछते हुए कितनी मुलामियत के साथ उसकी प्रशसा करती रहती थी। आसपास बैठे हुए सिविलियन और दूसरे मिलिट्री

के लोग कर्नल की ओर कितनी ईर्ष्या से देखने लगते थे।

"मैं आज अब और झूठ बोल कर अपने सिर बोझा नही बढाने की अकलक! सच तो यह था कि लोग मुझे देखते रहे, इसके लिए मेरा प्रत्येक अग अपने सारे मुलायम हावभावो को कलात्मक ढग से उभारने मे विश्वास करता था। मुझे अपनी गोरी चिकनी, सुडोल बाँहो पर तब कितना मोह हो आता था जब वे पानी के गिलास या काटे-चम्मच के साथ व्यस्त रहा करती थी। मेरा सिर, चारो ओर के व्यक्तियो को अपनी ओर देखकर कितने दर्प के साथ एकदम ऊँचा, कुतुबमीनार की माने उठ, आसमान मे जा लगता था, जैसे मै कितनी महान् हूँ, तुम बौनो की पूरी बाँहे मिलकर भी मेरी महानता को, सम्पूर्ण रूपे छ् पान की सामर्थ्य नही रखते। आसपास बौनो से भरी धरती पर मेरे ये सगमरमर की तरह उजले पैर रक्खे हुए है, इस बात का मुझे खेद भी होने लगता था। अपने इस दर्प भरे रूप को इतने बिखराकर चलते रहने पर भी, भले ही बहुत देर से, किन्तु अब जाकर ही उसे शस्त्र बनाने का अवसर मिला था। सच तो यह भी था कि वान निकोलस इसे अनुभव करे कि रजना को वह रगो मे बाँधना चाहेगा तो वह जीवन भर उसके लिए अप्राप्य रहेगी—ओर अकलक! वान निकोल्स के लिए वह जीवन मे प्राप्या कभी नही रही, परन्तु मुझे उससे प्रेम था। वान मेरे लिए आवश्यक नही था, वरन् मै उसके लिए आवश्यक थी। क्योकि, मै उसकी कला थी, कलाकार नही थी। लेकिन एक बात है अकलक! रजना का वान के विषय मे कभी कोई निश्चित मत नही था, क्योकि सच तो यह था कि वान ने रजना से प्रेम करके रजना को दर्प करना सिखा दिया था।

"मै जानती थी कि कर्नल और मेरा परिचय इसी भाति चलता रहा तो विधिपूर्वक एक दिन विवाह के प्रस्ताव पर आकर वह रुकेगा ओर मै उसे ठकराऊँगी। परन्तु कर्नल कुलकर्णी मेरी सारी सम्भावनाओ को पार करता जा रहा था। हम लोगो को लगभग बम्बई मे छह महीने से अधिक हो गये थे इस तरह मिलते-जुलते ओर उसने अपनी ओर से आवेश या उत्तेजना की कोई भी चेष्टा प्रदर्शित नही की थी। वान के जो पिछले दिनो से पत्र आ रहे थे उनमे उसकी व्यग्रता चरम होती जा रही थी और मेरा मन वान के लिए विकल था।

"उस दिन साझे मै लॉन मे बैठी हुई वान का पत्र पढ रही थी और साथ ही प्रतीक्षा कर रही थी कि कर्नल आयेगा और मै उसे वान का यह पत्र पढाऊँगी। क्योकि वान ने मुझे धमकी दी थी कि यदि मै शीघ्र हालैड लौट नही जाती हूँ तो वह भारतवर्ष आकर मुझे यहाँ से ले जायेगा, क्योकि वह बिना रंजना के नहीं रह सकता है और फिर अमित जो है—क्या कोई माँ अपने बच्चे को इस तरह छोड़ सकती है?

अकलक ! वान का यह पत्र पाकर मै कदाचित् हालैड के लिए चल पडती अगर असित के बारे मे वान ने न लिखा होता, क्योकि असित को मेरी कोई आवश्यकता नही थी । वान बिना मेरे नही रह सकता इसलिए उसने ऐसा लिखा ह, यह सोचकर मुझे वान पर बहुत क्रोध आया कि शायद इसी स्वार्थ के लिए उसने असित के पैदा होने के दिन से यह स्वॉग भरा था। वान के इतने बडे कलात्मक रूप के पीछे इतना बडा स्वार्थ काम करता है और इसलिए उसने असित पर प्रेम का स्वॉग भरा—यहॉ तक कि असित, मेरा ही हाड-मास और रक्त मुझसे ही विद्रोह कर बैठा !! सबका कारण —इसके हृदय मे रजना के प्रति प्रेम नही वरन् उसका शरीर प्राप्त करने की भयकर कापुरुषता एव कुरूपता वास करती है, जिसे वह अपने यश, वैभव, रगो और स्वरो के मोहक जाल से आच्छादित करके प्रस्तुत करता है ।

मेरा मन वान के प्रति भयकर 'छि' 'छि' से भर उठा। मै उसे इसकी कुरूपता का उत्तर दूँगी, और मैने निश्चय किया कि वान को आत्म-समर्पण नही कर सकती—कभी नही कर सकती !!

"उसी क्षण कर्नल कुलकर्णी फूल की डाली लिए आया । मैने मन ही मन निश्चय किया कि कर्नल से मुझे विवाह करके वान को उत्तर देना होगा कि जिसमे उसकी सारी कला, सारा वैभव, सारा दर्प रजना के पैरो पर आकर, टूटे शीशे की भॉति आवाज करता हुआ खड-खड हो जाये।

"विवाह के पश्चात् मैने अपने पुत्र असित को भी वापस बुलाने का निश्चय कर लिया था। मैने उस साझ पहली बार कर्नल कुलकर्णी को इस दृष्टि से देखा कि अगर मेरा पति बनता है, तो !!

"और कर्नल, अपनी मटमैले गहरे हरे रग की स्मार्ट बुशर्शट की ड्रेस पहन-छाती पर रगीन रिबने लगाये हुए मुझे पहली बार सुन्दर लगा। मुझे वान की औरतोवाली उस ऊँचाई पर हँसी आ गयी कि कहॉ वह और कहॉ यह कर्नल, छह फूट का ऊँचा व्यक्ति—जो केवल पुरुष है, चौडे कधो का, फूली नसोवाला, ऑखो मे सिगापुरी अनुभवो की गम्भीरता लिये, भारी-भारी बूटो की आवाजे करता हुआ कितने रोब से चलता है । मुझे अपने आप पर, इस व्यक्ति की इतने दिनो उपेक्षा करने पर कुछ क्रोध आया और आज मेने पहली बार अपना हाथ इसे चूमने को दिया। उसने भद्रता के साथ मेरे उस हाथ का आदर करते हुए विनयशील हो चूमा। मुझे लगा कि मेरा यह हाथ बढा देनेवाला आदर, इसे मिलिट्री मे दिये जानेवाले सारे पदो से कही अधिक गौरवशाली है और इस गौरव की गुरुता, यह मिलिट्री का कर्नल भी समझता है और समझकर विनयलशील होना भी जानता है। मुझे अपने इस नये निर्णय पर प्रसन्नता हुई और हम लोगो ने उस दिन 'ताज' मे अपनी

प्रसन्नता को, डिशों और पैगों का रूप देकर आधी रात कर डाली।

"मैं चाह रही थी कि वान को अपने निर्णय की सूचना दूँ, परन्तु मैं कोई ऐसा काम नही करना चाहती थी जिससे वह मेरे निर्णय मे बाधा पहुचा सके। उस जैसे झुक जानेवाले व्यक्ति की बाधा से भी मुझे घृणा होती जा रही थी। मैंने उन दिनो घण्टों बैठकर वान का विश्लेषण करना चाहा। मैं हमेशा इसी निष्कर्ष पर पहुँचती थी कि मुझ जैसी नारी, उसके उस समर्पणवाले भाव से कैसे प्रेम कर सकी!! और फिर क्या कोई स्त्री उसे प्रेम कर सकती है? जबकि साधारण नारी का भी आकर्षण सम्भव नही होता ऐसे झुक जानेवाले के प्रति——तो फिर मैं!! जिसे चित्रित करके वान को अपार यश मिला, सम्पूर्ण रजना को कैसे दे सकती थी? छि छि, वान मुझे बहुत ही छोटा व्यक्ति लगा। उस जैसे के व्यक्ति के साथ मेरा पुत्र रहेगा इसकी कल्पना भी मेरे लिए सह्य नही रही।

"वर्षा समाप्त हो रही थी और मैं शरद् की प्रतीक्षा मे थी क्योकि तभी मेरा विचार था कि कमल को प्रस्ताव रखने का अवसर दूँगी।

अकलक! मुझे उस 'सर' के लड़के मे (जो कि मेरा पति था लाहौर मे) और वान मे काफी समानता लगी। जानते हो उसका नाम था जगदीशचन्द्र, वह आधा पागल था। क्योकि उसे मेरे कालेज के जीवन के बारे मे सब कुछ मालूम था कि मैं लाहौर के विद्यार्थी लीडर और प्रसिद्ध षडयन्त्रकारी अकलक से प्रेम करती हूँ। चूँकि अकलक गरीब था और मैं अमीर, इसलिए सम्भव नही हो पाया था कि हम दोनो एक दूसरे से विवाह करते। जगदीश को प्रारम्भ मे मुझसे कितना प्रेम था कि वह रात-रात भर मेरे बाल सहलाता रहता था और रटी हुई शेले, तथा कीट्स की कविताएँ सुनाया करता था। मैं समझती थी कि यह मुझे बहुत प्रेम करता है क्या हुआ यदि पागल है तो! और उसके बाद जगदीश अपने वास्तविक स्वरूप पर आने लगा अकलक! तुमने मुझे राजनीति मे रुचि लेना सिखाया था जो कि उन 'सर' महाशय के घर कुछ काम नही आया। धीरे-धीरे मेरा घर से बाहर निकलना बद कर दिया गया था। कहा तो जगदीश मुझे लेकर पार्कों मे सिनेमाघरों मे ले जाते हुए थकता नही था और अब कहाँ उसे मेरी सूरत से घृणा हो चली थी। उसके कथनानुसार अकलक से मेरा शरीर-सम्बन्ध है और कोई भी भारतीय पति, पत्नी के चरित्र लाछन को सहन नही कर सकता है——वह जीवन भर कोढी रह सकता है किन्तु एक क्षण भी चरित्रहीन पत्नी को सहन नही कर सकता है? आये दिन अकलक को लेकर जगदीश प्रतारणाएँ देने लगा था।

एक दिन 'सर' महोदय ने सुबह चाय की टेबिल पर बहू के इस लाछन को असह्य कहकर चाय समाप्त की थी। इतने छोटे घराने मे शादी करके एक तो 'सर' महोदय ने अपनी नाक कटवायी और इस पर उन्हे एक चरित्रहीन बहू मिली।

और अकलक ! अव आये दिन मुझ पर मार पडने लगी। मै जानती थी कि मुझे समझौता करना ही है। बिना समझौता किये तो अब रहा नही जा सकता था क्योकि मात्र नारी से पत्नी बन गयी थी। और अपने शरीर पर वैवाहिक जीवन के पदक बेतो के रूप मे पाती रही। मेरा चरित्रहीन होना भी वे सहन कर सकते थे यदि रजना के पिता ने पूरा दहेज दिया होता। क्योकि वे तब उस धन से पडितो द्वारा प्रायश्चित्त करवा लेते। परन्तु 'सर' महाशय दूसरे की बेटी के प्रायश्चित के लिए अपनी गाढी कमाई कैसे खर्च कर सकते थे--जब रजना के पिता के और कोई नही है तब क्यो नही वे अपने दामाद जगदीश के नाम सम्पत्ति कर देते है ?--

मेरे पिता को उन्होने मरवा दिया और मेरा पति जगदीश पूरी सम्पत्ति का मालिक बना। उसी दिन से मै घर से अलग कर दी गयी और मुझे मेरी सतान के साथ अलग कर दिया गया--दूसरे बॅगले मे रहने लगी। मै इसे भी सहन कर ही रही थी कि अहमद मेरे जीवन मे आया। अकलक ! यह बताओ वान मे और जगदीश मे क्या कही साम्य नही है ? वान मुझसे क्या चाहता था मेरा शरीर ही तो, ओर वह उसे मिल जाता--जैसे कि दूसरो को मिला, तो क्या विश्वास था कि जैसा जास्टीन ने व्यवहार किया वैसा ही करता। क्योकि वान के जीवन मे वह जो मारिया लडकी आयी थी वह आम्सटरडम के बहुत बडे कुल की थी। मारिया ने उसके लिए क्या नही किया था अकलक ! उसने वान को इतना अधिक प्यार किया था कि वह परन्तु वान उससे हमेशा दूर ही दूर बचना क्यो चाहता रहा ? कदाचित् विवाह के पूर्व ही वान उसके शरीर को प्राप्त करने की चेष्टा मे रहा होगा और जब वह शरीर प्राप्त नही हुआ होगा तो वान को बहुत निराशा हुई होगी।"--

मै देख रहा हूँ कि रजना अब बिल्कुल पागलो की सी बुद्धि से मुझ जैसे तटस्थ व्यक्ति पर अपने विगत के विषय मे यह सिद्ध करना चाह रही है कि उसने जो कुछ किया ठीक किया, क्योकि उस सबके पीछे उसका कडवे अनुभव थे जिन्होने उसे प्रज्ञाशील, चेतनावान बना दिया। इसीलिए वह एक तूफान की भॉति परिस्थितियो को समेटकर अपने आसपास के समाज पर छा गयी।

मैने रजना को टोकने का निश्चय कर लिया है क्योकि रजना का दर्प, दूसरो के जीवन को मरुस्थल बनाकर ऊँचा--और ऊँचा ही होता गया है, यहॉ तक कि काल, परिस्थिति और देश की सीमाएँ अब वह नही मानता। उसकी इच्छा ही उसका आकाश है। कुतुबनुमावाला ध्रुव उसका ध्रुव नही है, उसका कोई ध्रुव है इसमे भी सदेह है--वह ध्रुवहीना रजना है !!

'रजना ! जगदीश और वान का सतुलन तुम नही मानती कि वह एक मूर्खतापूर्ण सतुलन है ?'

और मै अपने वाक्य का प्रभाव उसके मुँह की रेखाओ मे पढना चाह रहा हूँ।

"अकलक ! इतने शीघ्र सतुलन को विशेपण दे दोगे तो हो सकता है पीछे पछतावा तुम्हे ही हो : फिर यह बताओ कि तुम्हारे औचित्य एव अनौचित्य का विश्वास नारी को कैसे हो ?"—

कहते हुए उसने फिर नयन मूँद लिये है।

'वान के साथ ही तुम्हे इस सतुलन की आवश्यकता भी क्यो हो ?' —

मैंने यह वाक्य उसके दर्प को ठेस देने के लिए कहा है।

"मे वान के निकट जब आती जा रही थी, जानते हो रजना के पास एक कवच था, उसका पति, और कवच के रहते वान रजना को प्राप्त या आक्रमण करने से वचित ही रहता। किन्तु जब मे पतझग के पेटो की तरह अनावृत हो गयी जान की मृत्यु के पश्चाते, तब मै कितनी असहाय थी क्या यह तुम नही मानते ?"— कहते हुए कितने तैश के साथ उसने मेरी ओर घूरना शुरू कर दिया है।

शायद रात के दो बज चुके है। रात मे, प्रत्येक हलचल जो दिन मे बहुत ऊँची चली जाती है वायुमडल मे, वह नीचे उतर आती है ठीक ऊँची उडनेवाली चिडियो की मानी !! इस समय वायुमडल बिल्कुल शब्दहीन हो रहा है, इसीलिए दो मील के दूर स्टेशन पर इजिन की हल्की सी भी शन्टिग साफ सुनायी दे रही है। कभी-कभी सामने के पेडो मे ऊँघते हुए कोवे पेडो की डाले हिला देते है और जिनके हिलने से काला स्वर सुनायी पड रहा है। या फिर उल्लुओ की 'घु-घु' इतनी डरावनी लगने लगती है कि रोम-रोम खडा हो जाता है। खिडकी से बाहर काले आसमान मे तारो की बत्तियाँ जल रही है—आसमान बरसकर इस समय साफ हो गया है। सप्तऋषि चिर प्रश्न की तरह ध्रुव के चारो ओर परिक्रमा कर रहे है और ध्रुव को जैसे इस चिर प्रश्न का आज तक कोई उत्तर ही नही मिला है। वह ध्रुव तारा आकाश की खिडकी पर अपनी कोहनी टिकाये किसी दार्शनिक की भाँति नीचे धरती की ओर झाँक रहा है—बेचारा प्रश्नो से घिरा ध्रुव !!

मे जानता था कि बहककर कुछ अन्य सोचने लगा हूँ। दिमाग मे जैसे सुनते-सुनते रात हो गयी है। मे जो कुछ भी सोचूँगा, गलत ही सोचूँगा, इसलिए सोचने के स्थान रजना को सुनना चाहता हूँ, जिसे अब मेरी सहानुभूति भी प्राप्त नही हो सकती। जो अपने को प्रज्ञाशील कहती है, प्रत्येक अदने समझौते पर वह अपने आप को कितना गिरा चुकी है। कभी वह एक क्षण को भी सोच पाती तो उसे लगता कि रजना आज जहा पहुँची है—वह एक पीले पीले पीप से भरा हुआ समुद्र है, जिसमे उसके दर्प की मीनार इसी तरह से घिरी है जैसे कोढी की सफेद चट्टो से भरी असुन्दर बाँह, अपनी सहायता के लिए पुकार रही हो—परतु दर्प सगे !!

छि छि, रजना, क्या कभी इसे समझ पायेगी ?

रजना ने फिर बोलना शुरू किया है।—

"मैंने तुमसे कहा न अकलक ! कि न्यायमूर्त्ति बनने का प्रयास मत करना क्योकि समाप्त होती हुई नदी तूफान हो जाया करती है, और तुम्हारी महानता के प्रतीक ये राजदड, न्यायदड कुछ भी काम नही देते वहाँ पर समझे ? तटस्थता का दावा करके तुम परिस्थिति को भले ही छल ले जाओ, परन्तु हम लोग तुम्हारी बातो से, चाल तक से समझ लेते है कि सोने मे कहाँ और कितनी खोट है । हम अपनी ही सृष्टि को न पहचानेगी ? विद्रोह तुम कर लो, क्योकि यह तुम लोगो का स्वभाव है, पर हमे सशय मे डाल सकोगे इसकी कल्पना भी मत करना। पुरुष के मन का पुण्य हम चाहे न समझ सके, परन्तु उसके मन के पाप को सबसे पहले तुम्हारे घर का वह व्यक्ति समझ ले जाता है जो गूँगा बना हुआ चूल्हे के पास, नीचा सिर किये, हल्की चूडियाँ बजाता हुआ तुम्हारे लिए रोटियाँ सेकता होता है । तुमने उसे भले ही गूगा कर दिया हो, पर गाधारी बनने के लिए बाध्य नही किया है । वह व्यक्ति, चूल्हे की गरम-गरम आँच के सामने बैठा हुआ तुम्हारा विश्लेषण सम्पूर्ण रूपे उतनी ही सहजता से कर ले जाता है जितनी सहजता से वह रोटियाँ बेल ले जाता है, अकलक !

"इसीलिए तो जिसकी वह उपेक्षा कर दे, फिर चाहे वह कोई क्यो न हो— कोई वस्तु उसे नारी के निकट मान नही दिला सकती है । नारी की अवहेलना गूँगी होती है अकलक ! .

"मै कह रही थी कर्नल कुलकर्णी के विषय मे । सच तो यह है कि कुलकर्णी बिल्कुल फौजियो की भाँति उद्दड स्वभाव का व्यक्ति था, किन्तु मै अपना निर्णय इसलिए नही बदल सकती थी कि वान कही किसी भाँति मुझे कमजोर न कर ले जायँ । और मै इसे भी अस्वीकार नही कर सकती अकलक ! कि मै उसकी कला को उससे अधिक प्रेम करती थी और वह कही मेरी छाया से भ्रष्ट न हो जाय इसलिए मै उसके पा लेने के सम्मुख सभी सम्भावनाओ के पथ बद कर देना चाहती थी ।

"कुलकर्णी को मैने अनेक अवसरो पर उसी तरह गदा पाया जिस तरह फौजियो के गदे शरीर, उनकी करीने की वर्दियो मे छिपे रहते है । कुलकर्णी को वान के इस प्रकार पत्र आना अच्छा नही लगता था, परन्तु वह अपना विरोध उसी तरह हँसकर अनभिव्यक्त रहने देता था जैसे कि राजदूत लोग हँसकर विरोध को प्रकट नही होने देते है । विवाह के पूर्व तक कुलकर्णी अपनी सीमाएँ जानता था और इसीलिए सब कुछ सहन करना उसके लिए प्राथमिक आवश्यकताओ मे से एक था । कदाचित वह विवाह की प्रतीक्षा मे था और सत्य बात भी यही थी ।

"वान अपने पत्रो मे नतून चित्रो, नव ऑपेरा सगीतो के बारे मे लिखता रहता था साथ ही यह भी कि उसका विन्सेट किस सीमा तक रगो के मेल और रूप देने मे उन्नति कर चुका है । वान ने लिखा था कि विन्सेट ने रजना की एक छवि आँकी है । अकलक, ! मै एक क्षण को व्यग्र हो उठी कि मै क्षण भर के लिए हालैड पहुँच

सकती होती, तथा मै अपने पुत्र द्वारा बनाये गये अपने चित्र को देख सकती। यही सब सोचते कभी-कभी मै अपने लॉन मे बैठी हुई खो जाया करती थी। पिछला स्मरण हो आने लगता था और मै कई बार इतनी तन्मय रहती थी कि कुलकर्णी कब आकर पास मे बैठ गया——इसकी भी चेतना नही रह पाती थी। सॉझ बादलो की रुई, पीली लाल होकर, बम्बई के आकाशे छितरा जाती थी, और सम्मुखे समुद्र-किनारो पर हवा विकल मृगी मानी भटकती होती, परन्तु मै सकल्प विकल्प से परे होने के प्रयास मे उलझती ही जाती थी।

"कुलकर्णी हँमकर कहा करता था .

'मालूम होता है आज के पत्र मे अन्य दिन की अपेक्षा प्रेम की मात्रा अधिक है'।——और वह मेरा बढा हुआ हाथ विश्वास सगे पकडकर चूमने लगता था। मै उसके ओठो की गरमी से परी भर उठती थी और मुझे वान पर हॅसी आने लगती थी। मेरे मन का समस्त मघर्ष कुल्कर्णी के हाथ मे हाथ जाने पर ओई रीते समाप्त होने लगता था जैमे सागर की फैली हुई बॉहो मे नदी का शरीर पहुँच जाने पर सब मिटने लगता है। अनन्तकाल तक के लिए व्यक्तित्व का समर्पण।। वान के पत्र, मेरे पत्रो के उत्तर नही हुआ करते थे वरन वे केवल अपनी कथा कहते थे और मेरे निर्णयो के शिखरो पर प्रहार होता था। कदाचित कुलकर्णी, इस वस्तुस्थिति को समझ चुका था और उसने क्वार की एक हल्की ठडक भरी सझाए चतुर सेनापति मानी उचित समये आक्रमण कर दिया।

"मै स्वय क्वार के प्रारम्भ होते ही प्रत्येक दिन प्रतीक्षा करने लगी थी कि यदि अब कुलकर्णी प्रस्ताव करेगा तो मै मान जाऊँगी। उस दिन एलीफैंटा की गुफाओ से लौटकर हम लोग स्टीमर की प्रतीक्षा मे उस द्वीप के किनारे बैठे हुए प्रसन्न थे, दूर-दूर तक समुद्री तट वैसे ही खुले हुए छितरे थे जैसे कि प्रथम प्रेम की उज्ज्वल वासना——कि तभी कुलकर्णी ने मेरी कमर मे हाथ डालते हुए और दूसरे हाथ से मेरी ठोडी को ऊँचा करते हुए कह डाला——

'रंजना ! हमे विवाह कर लेना चाहिए'——

"और मै उस ममय बहुत दूर बम्बई के आकाश को देखने मे लगी हुई थी कि जहॉ पर विराट वान, पूरे आकाश के कैनवस पर चित्र बनाता हुआ दिखायी पड रहा था। मैंने कितने घबराकर शीघ्रता मे 'हॉ' भर दी थी और हमने कातिक तक विवाह कर लेने का निश्चय किया। स्टीमर तब तक आ चुका था। कुलकर्णी कितने प्रसन्न होकर मेरा हाथ थामते हुए सावधानी के साथ स्टीमर पर चढते हुए मुझे अपने से सटाते हुए हँस दिया था।

परिवर्तन की उस रात को मै फिर सो नही पायी अकलक ! अपने पति जास्टीन की वह कब्र मुझे पुकारती हुई लगी---जैसे वह अपनी कब्र मे से उठकर कह रहा हो--- रजना ! ऐसा कभी मत करना ---

और मै भोर होते-होते बहुत घबरायी हुई थी।

कार्त्तिक आ चुका था और ---

"उस दिन विवाह के बाद जब मै चर्च से लौटकर आयी तो मुझे वान का पत्र मिला कि वह अगले पखवारे भारतवर्ष पहुँच रहा है क्योकि वह रजना के बिना नही रह सकता---एक बार वह रग-स्वरों के बिना चाहे जी भी सके पर बिना रजना के तो नही।

"और मै उस दिन जाने क्यो यह अनुभव करने लगी कि अपनी इच्छा से मैंने यह पहला काज किया है और जो,बिना इच्छा या अपने उत्तरदायित्व से किये हुए दूसरे समस्त सबधो से अधिक गलत और भयकर है ! !

' किन्तु अकलक ! मै इतनी अग्रसरा हो गयी थी कि लौटना सम्भव नही था और फिर वान जो कुछ चाहता है वही एकमात्र सत्य और मै स्वय कुछ नही निर्णयो के आधार पर सोच सकती हूँ ?

"मैंने अपने पार्श्व खडे अपने नतून पति कुलकर्णी को चुम्बनो से भर दिया। कितने गरम और नवजन्मा थे उसके चुम्बन ! !

मैंने अपने को कुलकर्णी की बाँहो मे ढीला छोड दिया।

"वान को मैंने अपने नव विवाह की सूचना तुरन्त भेज दी थी, क्योकि सम्भव था कही वह आने का पागलपन कर बैठे। मुझे ठीक स्मरण है कि प्रत्युत्तर मे उसका एक बधाई का पत्र आया था तारपोर उसका कोई पत्र नही आया।

"मै न जानती थी, ऐसी बात नही, परन्तु जानकर भी अनजान बने रहना चाहती थी कि वान के पत्रो को लेकर कुलकर्णी को कुछ असतोष है । पर वह असतोष भयकर घणा बनकर कुलकर्णी के मन मे नीचता का रूप ग्रहण कर लेगा, और वह भी इतने शीघ्र , यह न मालूम था। प्रारम्भिक दिनो मे जब कभी असित के विषय मे चर्चा करती थी तो कुलकर्णी उपेक्षा कर जाता था और जब कभी मै असित को अपने पास बुलाने की बात उठाया करती तो धीरे-धीरे विरोध करना शुरू कर दिया था। मै उसके विरोध का कारण जानना चाहती थी और वह बिना कुछ उत्तर दिये चुप रह जाता था।

"उधर असित के कभी-कभी पत्र आने लगे थे जिनमे वान के बीमार रहने के

समाचार भी हुआ करते थे। प्रत्युत्तर मे मै वान की बीमारी की चर्चा हमेशा टाल जाती थी, या एक व्यावहारिक ढग से कुछ उल्लेख कर देती थी।

'वान के पिता फिलिप ने अपनी नयी पत्नी को भी तलाक दे दिया था क्योकि वह पत्नी वान को सम्पत्ति से वचित करना चाहती थी और इसके लिए उसने दो-एक बार यह भी चेष्टा की थी कि वान को जीवन से भी हाथ धोना पडे—अगत्या फिलिप को उसे तलाक देना ही पडा। असित ने लिखा था कि वान चाहता है कि विन्सेट को अब लीडन पढने भेज दिया जाना चाहिए, कारण कि वान की बीमारी के कारण विन्सेट की पढाई आम्सटरडम मे ठीक तरह नही हो पाती है और फिलिप को भी विन्सेट का इस तरह रहना प्रिय नही था। फिलिप ने अपने पुत्र पर इन दिनो विवाह कर लेने के लिए बहुत जोर डालना, शुरू कर दिया था, परन्तु वान इस सबको एक उपेक्षा की हँसी मे हँसकर टाल देता था। विन्सेट किसी भी मूल्य पर वान से अलग नही होना चाहता है, यह उसने वान पर भी स्पष्ट कर दिया था। पिता पुत्र की लडाई अपनी चरम अवस्था पर पहुँच गयी थी और वे वान को सम्पत्ति से अलग कर देने की धमकी तक दे चुके थे। उन्ही दिनो फिलिप किसी पोल्डर का बाँध टूट जाने मे बह गये थे, और वान अपनी परिस्थितियो मे नितान्त अकेला खडा था, अकलक!!

"असित के पत्रो मे वान की परिस्थितियो का चित्र बहुत ही हल्का होता था क्योकि अभी वह बच्चा था, और मै समझ रही थी कि वान को एक तो मेरा और दूसरे अपने पिता का—दोनो ही दुख सहने पड रहे थे। असित के पत्र से धीरे-धीरे वान की बीमारी बढने के समाचार मिलते रहे।

"कुलकर्णी का वास्तविक कठोर रूप सामने आता जा रहा था अकलक! वह अब बहुत शराब पीने लगा था और प्रतिदिन मुझसे ही लडता रहता था। मै अपनी भूल अनुभव कर रही थी। परन्तु, हम जब भूल कर चुकते है तो उस एक को ठीक करने के लिए हमे अन्य गलतियो का सहारा लेना पडता है और जिसका कोई भी अत नही हुआ करता। या तो हम पहली भूल को ही अनुभव करने पर उसे सडे हुए अग की भाँति काटकर फेक दे, तभी स्वस्थ हो सकते है, अन्यथा इस वृत्त मे हम बारबार घूमकर वही पहुँच जाते है तथा पैरो मे दुखन, मन मे आक्रोश भर जाता है—पर व्यर्थ होता है वह आक्रोश!! मै अनुभव कर रही थी कि मैंने अपने चारों ओर के सब दुआर इस प्रकार बदलकर लिये थे कि मुझे अब मात्र खडे रहने का स्थान प्राप्त था—न आगे, न पीछे, कही कुछ भी तो नही!! और मै घुटन अनुभव कर रही थी।

"कुलकर्णी मुझे चिढाने के लिए होटलो की लड़कियो या वेकाइयों को लेकर घूमा करता था। कई बार पार्कों मे शराब और लड़कियो के साथ पकडा भी गया था

—परन्तु उसके मिलिट्री पद ने उसे बचाया। वह बिल्कुल जगली होता जा रहा था। उसे वान से, असित से घोर घृणा थी। जब तक वह पत्र पहले नही पढ लेता था कभी मुझे पढने के लिए नही देता था। मै जब-जब भी असित को बुलाने की हठ करती थी तब-तब वह मुझे डरा देता था कि असित के डेक से नीचे उतरते ही वह उसे निश्चय ही गोली मार देगा, और मै कॉप उठती थी। प्रत्येक क्षण पश्चात्ताप की आगे फुँकी जा रही थी कि अकलक ! वान से प्रतिशोध लेने मे मै ही होम हो गयी। फिर अकलक ! मै प्रतिशोध किस बात का लेना चाहती थी ? क्या इसी बात का कि वह मुझसे प्रेम करता था ? और उसने अपने प्रेम को झुककर, विनम्र होकर अभिव्यक्त किया ! ! मेरी नारी का दर्प, पुरुष के झुक जाने पर और भी ऊँचा हो गया, परन्तु कुलकर्णी उस दर्प की मीनार पर अपने अशुभ चील के से पख लिये मँडराने लगा और मै तब उसे समझ नही पायी थी।

"मेरे अधड का कोई अत था अकलक ? परन्तु कुलकर्णी ने आकर बीन बीनकर मेरी कामना की लहरो को जलाना प्रारम्भ किया। मैने उसे अपने विगत की गाथा के कुछ पन्ने सुनाये और उस दिन से वह पागल हो गया, मै अब उसे फूटी आंखो नही सुहाती थी। वह मुझे मेरे मुँह पर कहने लगा—

'तुम नारी नही हो रजना ! तुम नारी का शरीर हो, और मै तुम्हारे इस सुन्दर शरीर के टुकडे-टुकडे कर दूंगा।'—

अकलक ! कुलकर्णी, मेरे जीवन की सबसे पहली भूल का वह पत्थर था जो मेरी दर्प की मीनार का अतिम, काला और सबसे ऊँचा शिखर बनकर आया। शिखर, एकदम काला घिनौना—रूप के व्यग का सबसे बडा प्रतीक, एक पशु ! !

"किन्तु आजि सब व्यर्थ, उस हुए मे से न तो कुछ काटा ही जा सकता था और न उसमे जोडा ही जा सकता था। पथहीन जगल की भॉति, जहॉ सूर्य की किरणे भी पेडो के ऊपरी शिखरो से नीचे नही उतरती अकलक ! मै आज तक समझ नही पायी कि मुझे जीवन मे ऐसा क्या पाना था जो खैबर के दर्रो से लेकर आम्सटरडम के समुद्री किनारो तक भटकना पडा और फिर भी मरुस्थली सरिता की मानी अपना ही जल पीकर रीती हो गयी—तब दूसरो के खेत क्या सीचती ? बताओ, अकलक ! इसका उत्तर है तुम्हारे पास ? अनेक बार पत्नी बनने पर भी, पत्नी नही रह सकी अकलक ! अतिम दिनो मे चाहने पर भी, रोने पर भी, अनुनय-विनय करने पर भी—परन्तु क्या किसी की पत्नी बनकर रह सकी ? इतनी बार मॉ बनी अकलक ! किन्तु क्या मै कोख के सूनेपन का कलक धो सकी ? नेई, नेई ! ! निपूता आमि ! !

"कुलकर्णी ने स्पष्ट कह दिया था कि वह ऐसी औरत को लेकर क्या करे जो चरित्रहीनता की पराकाष्ठा पर पहुँचकर मनुष्य मात्र के लिए धूमकेतु बन गयी हो ! !

वह मुझे प्रत्येक क्षण उपेक्षित करता रहता और मेरा शरीर कभी-कभी वह

उसी भाँति झकझोर डालता था जैसे भूखा व्यक्ति दाँत से बोटी के अदर के मुलायम मास को पाने के लिए व्याकुल होकर हड्डी के टुकडे-टुकडे कर डालता है। और जब अपना मन भर जाता है तब गदी बनियान की मानी सब कुछ फेक देता है।

"वह जानता था मेरी विवशता, क्योकि मै अब और कही भी नही जा सकती थी। मेरे लिए वह अनिवार्य था, परन्तु मै उसके लिए वैसा ही बोझ थी जैसे तीन दिन की सड़ी हुई लाश। घर के किसी भी प्रिय व्यक्ति की हो बोझा ही नही, असहनीय भी नही, डर का कारण भी नही, जीवन के स्वास्थ्य की दृष्टि से हम अपने उस प्रिय की लाश को जला डालना चाहते है। और हम जला फेकते भी है। कल तक जो मुख, हमे चिकने और सुखपूर्ण लगते थे हम उन्हे हमेशा के लिए दूर कर देते हैं। अग्नि ही शरीर की गति है अकलक!

"वह मुझे काट फेकने के लिए उतावला हो रहा था। मै जान रही थी, परन्तु अब परिवर्तन मोर द्वारे नही आयेगा यह भी मै मान चुकी थी। मै जान रही थी कि ज्वार लौट कर सदा के लिए तटो को छोड कर चला गया है। अब वेला पर बैठ मात्र शख, सीपियाँ बटोरना ही भाग्यलेख शेष है। गये हुए समस्त ज्वारो मे अनेक बार पोत आये थे वन्दरगाह पर जीवन लौट आता था किन्तु आजि? ज्वार कहाँ? कहीं भी तो नही. मन ही मन चाह रही थी कि कुलकर्णी का उद्वेग किसी भी रूपे समाप्त हो तो कुछ आगे के लिए सम्भावना हो सकनी है।

"एक दिन असित का पत्र, आया कि वान की अवस्था बहुत शोचनीय हो गयी है और वह 'रजना' रजना' ही कहा करता है। जानते हो अकलक! कुलकर्णी ने पत्र मेरे मुह पर फकते हुए कहा.

"जाओ तुम्हारा यार, वान तुम्हे पुकार रहा है मुझे तुम्हारी कोई आवश्यकता न कभी थी, न है और न रहेगी। मुझ तुम्हारे शरीर की इच्छा थी, और वह मुझे मिला, मैंने उसे शराब के पेग मे कभी अधिक नही समझा। मुझे तुम्हारे रूप की कोई आवश्यकता नही। अपने रूप के लिए जाओ किसी अन्य चित्रकार को खोजो, क्योकि खोजना तुम्हारा धधा है। ओर ऐसे व्यक्ति को खोजो जो तुम्हारे इस न जाने कितनो के त्याज्य शरीर को चित्रित कर स्वय भी जले और शेष मानवता को जलाने के लिए वान की तरह रगमयी रेखाओ को कैनवस पर उतारे जाओ, तुम्हे पुरुषो की कमी कभी रही है?",
और वह कहता हुआ अपने आफिस चला गया।

"मै दिन भर रोती रही।

"मै जानती थी कि बान को मेरी सबसे अधिक आवश्यकता है। किन्तु क्या मै वापस उसके पास जा सकती थी अकलक? वह तो मुझे क्षमा कर देगा किन्तु

वहाँ पहुँचने के लिए मेरे पास क्या आत्मा का औचित्य शेष रह गया था ? मै इस सबके बाद फिर लौटकर जाती ?

साँझ जब कुलकर्णी लौटा तो वह बहुत गुस्से मे था। कदाचित आज वह दिन भर सिगरेटे धौंकता रहा होगा। आते ही उसने कहा कि उसने निश्चय कर लिया है कि वह रजना को तलाक दे देगा और वह बहुत शीघ्र दूतावास मे मिलिट्री अटेची होकर चला जाने वाला है।

"वह पागलो की भाँति चीख रहा था—

'तुमने वान को आज मृत्यु-मुखे पहुँचाया। तुम शुरू से लेकर आज तक विवाह करती आयी, और आगे बढती गयी। पुरुष तुम्हारे लिए प्रारन्ध था। जाने कितनो के श्मशानो पर तुम्हारा यह रूप, अहं की तरह खडा हुआ है। मै चित्रकार या सगीतज्ञ नही रजना! जापानियो को भूनने के लिए गोली चलाते हुए मुझे कभी आनन्द न मिला हो, परन्तु तुम्हे अपनी गोली से उडाते हुए मुझे बहुत प्रसन्नता होगी। तुम पुरुष की कोढ हो, मैं तुम्हारा पति कहलाकर कोढी नही बनना चाहता। तुम्हे मै अपने साथ नही रख सकता। तुम पापिष्ठा, सर्वभक्षी, मुझे तुमसे घृणा, तुम्हारे रूप से घृणा है!! जाओ निकल जाओ यहाँ से!"

मै रात भर रोती रही अकलक! मै उससे मात्र यही चाहती थी कि वह मुझे चाहे अलग कर दे, हम लोग साथ-साथ भले ही न रहे, पर वह कम से कम 'श्रीमती कुलकर्णी' कहलाने का अधिकार न छीने। तुम कहोगे कि रजना "इतने नीचे उतरकर समझौता करके तुमने क्या पाया ? ठीक है, परन्तु जानते हो अकलक मै अतिम रूपे अपनी पराजय स्वीकार कर रही थी ? क्योकि, मुझे फिर गर्भ था और उस सन्तान को मै क्या उत्तर देती कि वह किसका है ? कारण कि कुलकर्णी मुझसे सदा के लिए दूर जा रहा था। कुलकर्णी जानता था कि आमि गर्भवती। मै उसके लिए वह सडा अग थी जिसके साथ वह कभी भी यापन पसद नही कर सकता था, हाँ बिना जिसके यापन मे उसे गहरी प्रसन्नता होगी।

मैने उस रात बम्बई से चलती वेला उसके सब सबधो को तन और मन से तोडकर समुद्र के ज्वार मे उसी भाँति फेक दिये जैसे कि ज्वर के दिनो मे गले मे जो डोरा पहना जाता है और जिसे हम स्वस्थ होने पर तोड फेकते है—

और मै लखनऊ पहुँची।

यह शहर मेरे लिए बिलकुल अपरिचित था परन्तु यहाँ मुझ अपनी आशाओ के पहले ही सब प्रबन्ध हो गया। पुरी के इस आधे बँगले मे गवर्नर का पहले एक ए० डी० सी० रहता था जो कर्नल कुलकर्णी को जानता था, उसी ने मुझे इस आधे बँगले मे रहने का प्रबन्ध करवा दिया, क्योकि वह किसी दूतावास मे बडी पोस्ट पर जा रहा था और इस तरह मै पुरी संगे इस बँगले मे रहने आयी।

"अकलक! इस बेला मुझे अपने शरीर के अदरवाले प्राणी से जाने क्यो मितली आया करती थी। ओर कभी कभी स्वय को तथा उस बच्चे को ही समाप्त कर देने की सोचती थी। जिस समय अस्पताल मे नर्स ने कहा " बच्चा मरा है" तो जानते हो मुझे बहुत प्रसन्नता हुई थी, जो कि इस बात का प्रमाण थी कि मै कुलकर्णी की किसी ऐसी चीज़ को अपने पास नही रखना चाहती थी जो मुझे फिर उन डोरो मे बाँध दे जिन्हे मै उस दिन समुद्र किनारे ज्वारो मे बहा आयी थी।

"प्रारम्भ मे मै कभी पार्टियो शिष्टभेटो मे जाया करती थी, परन्तु मैने अपना आना-जाना बिल्कुल ही बद कर दिया था। तुम्हारे यह पुरी साहब, मै कदाचित् ही कभी इनसे मिलती रही, परन्तु बहुत भले व्यक्ति है। लेकिन अब प्रत्येक व्यक्ति भला या बुरा रजना की सीमा के बाहर जा चुका था। इसलिए मैने अपने को समाज से, अपने उस वर्ग से भी, जो शुरू-शुरू मे प्रतिदिन अपनी आठ गजी लम्बी-लम्बी मोटरो पर चढकर मेरे बँगले पर आया करता था, सबसे उसी भाँति अपने को अलग कर लिया मैने, जैसे साँप अपने को केंचुल से अलग कर लेता है—जो कभी साँप थी तथा लोगो के डर का कारण भी हो सकती थी परन्तु अब एक निरर्थक वस्तु की भाँति, हल्की हवा की प्रतीक्षा मे मृत पडी हुई यह देख रही थी कि, पता नही कब हवा आये और कही भी उड जाना पडे। किन्तु क्या मै इतनी असगमयी हो सकी? क्योकि यह दावा भी तो दम्भ से कम नही है अकलक! कि मै सब प्रभावो से ऊपर या प्रभाव-चुम्बको से हीन हुई क्या ऐसा कभी सम्भव है?

"तुम नही जानते अकलक! नारी का मन, प्याज के किसी छिलके मे होता है। तुम मूर्ख की भाँति उसे केन्द्र की गाँठ मे खोजते जाते हो, और वह छिलके के बीच मे जाने कब का तुम्हारे हाथो मे आ चुका होता है। फिर मुझ जैसी सुन्दर स्त्री का मन, कही भी तो नही होता अकलक! तुम उसके शरीर को लेकर समझ बैठते हो कि यही उसका गुलाबी रग का मन है।"

मै देख रहा हूँ घडी के काँटो को जो सतर्कता से अपना काज करते चले जा रहे है। मै जानता हूँ कल दोपहर को एक बजे जो तूफान आरम्भ हुआ था वह अब भी बहता जा रहा है। मै जो जान पाया हूँ वह यही कि किनारा कभी का छोड चुका हूँ। पूरी रात्रि समाप्त होने को आयी है लगभग तीन हो चुके है और मै थपेडे खाकर उद्विग्न हो उठा हूँ।

परन्तु रजना अपने विगत को परिस्थितियो पर नही छोड सकती है, क्योकि वान ने परिस्थिति उपस्थित भी की और रजना ने अपने से तथा अपने चारों ओर के समाज से खेलने की भावना मे तिरस्कार नही किया? आज यह वान का तिरस्कार करके स्वयं तिरस्कृता नही हुई है? और आज जलते हुए अनावृत सत्य के बीचे खडी, सत्यासत्य से परे यह नारी, तर्क तथा दम्भ, पत्नी और मातृत्व की

दिखाई दे रही है––क्यो ? मै चाहने लगा हूँ कि यहाँ से जितनी जल्दी हो भोर की गाडी मिलते ही चला जाऊँ और फिर कभी वापस नही आऊँ, कदापि नही ! !

मै देख रहा हूँ कि रजना मेरी ओर देख रही है और कदाचित इस आशा मे है कि मै सब कुछ सुनने पर कह दूंगा कि .

'नही रजना ! प्रत्येक व्यक्ति गलत था और तुम बिल्कुल पवित्र थी और रही भी। चाहे समाज कुछ भी कहे, मै तुम्हे बिल्कुल उचित मानता हूँ'––

और तब वह ललककर मुझे अपनी चिकनी गोरी बॉहो के आलिगन से उपकृत कर देगी। सर्प-केचुल का आलिगन ! !

छि छि, अगर यह ऐसी आशा मुझसे कर रही होगी तब तो इससे ओछी रमणी मुझे देखने को शेष नही है। परन्तु जानता हूँ रजना के प्रस्तर भी इतने ऊँचे होगे कि उनकी ओर देखते-देखते गर्दन मे दर्द अवश्य हो आयेगा।

मुझे बिल्कुल भी ध्यान नही रहा है कि पानी फिर से कब बरसना प्रारभ हुआ है, क्योकि जो मुझे ज्ञात है वह यही कि एक बजे के लगभग आकाश साफ-चिकना था, जिसमे तारे वैसे ही लग रहे थे जैसे सगमूसा मे रुपये अठन्नी जडे हुए हो। परन्तु पानी बहुत ही तेजी के साथ और जोरो से गरजकर बरस रहा है। काफी ठडी हवा एकदम बह रही है। पानी बरसने के ख्याल से मुझे ठड का ख्याल हो आया है और मुझे सचमुच की ठड लग रही है। बाहर पेड, पत्तो, सडको, बिजली के तारो पर आकाश खूब सारा पानी बरसा रहा होगा और सडको के गड्ढो मे पानी भर जाने से बिजली के लट्टू उनमे अपना मुँह झॉक रहे होगे। सडको के दोनो ओर की कच्ची जमीन पर तॉगो के पहियो के लम्बे गढ्डे भी पानी की नालियो की तरह लग रहे होगे और उनमे मिट्टी के कारण पानी भूरा गँदला हो गया होगा। हवा मे उडता हुआ रजना का नीला गाऊन उसके अगो की सीमाओ को स्पष्ट दरसा रहा है। मै जानता हूँ यदि मै इस तरह रजना के पास केवल बैठने का ही काज करता तो मै अब तक कहॉ बह जाता पता नही।

परन्तु जान रहा हूँ कि फिर ऐसा सोचकर भूल कर रहा हूँ, क्योकि रजना का सौन्दर्य जो आकर्षित करता है, वह सौन्दर्य भर होता तो कोई बात न होती, परन्तु क्या रजना निरपेक्ष सुन्दरी है––जैसे कि फूल सुन्दर होते है ? या सॉझ सुन्दर होती है ?? लेकिन क्या निरपेक्ष सत्य या सौन्दर्य होता भी है ?

"अकलक ! जहॉ इतनी देर सुनने का अनुग्रह किया केवल कुछ क्षण की बात और है––फिर तो मै विगत की सभी कडियो को तोडकर एक वर्तमान की काली नग्न जलती चट्टानो पर खडी रहूँगी और तब शायद तुम रजना को––अनावृत्त रजना को सम्पूर्ण रूपे अछद्म वेशे देख सकोगे।

"मैने लखनऊ से कुलकर्णी को और वान को पत्र लिखे थे। कुलकर्णी ने असित

के आये हुए कुछ पत्र मेरे पास भेज दिये थे, परन्तु उत्तर में वह चुप ही रहा। असित के इधर के पत्रो मे वान के बचने की भी कोई सम्भावना नही दिखायी दे रही थी। मोर मने अकलक ! एक बार और तूफान आना चाहने लगा, परन्तु इस बेला मैंने बहुत ही निर्ममता के साथ अपने अदर निवास करने वाली असित की माँ को, वान की प्रेमिका को कुचलने का सकल्प कर लिया था । कुलकर्णी, बम्बई छोडकर दिल्ली चला गया था और वह शीघ्र ही अपने दूतावास के लिए जाने की तैयारी मे लगा था।

"और देखती हूँ कि हम कितने मूर्ख होते है कि प्रत्येक पल को अमर मान बैठते है, सोचते है यही सत्य है। विगत की हम उपेक्षा कर देते है, जो अनागत होता है उसे हम कभी नही आनेवाला मानकर, जो क्षण हमारे सामने होता है उसे ही पूरे जीवन पर फैलाकर सुख तथा सतोष की साँस लेना चाहते है । क्या ऐसा कभी हुआ है अकलक ? मैं भी अपने इन कमरो मे, परदो के पीछे बैठकर जीवन मे से इस 'आज' को चुनकर इस आज मे से जो 'अब' था उसे ही जी रही थी और इस 'अब' को भी 'इस क्षण' बनाकर ही पिछले कुछ महीनो से जी रही थी अकलक ! तथा मूर्ख योगी की मानी आँखे बद किये समझ रही थी मुझे 'सिद्धत्त्व' प्राप्त हो रहा है, सिद्धत्त्व, दु ख का अनुचर है ।

"किन्तु, दिवस को खोजने आप नही जाते वरन दिवस आपको खोजता हुआ आप की छत पर, आपके कमरे की खिडकियो मे से आ जाता है जहाँ भी आप सोये हुए हो। उसी तरह जीवन, परिवर्तन तथा बडी से बडी घटनाएँ लेकर आपके सम्मुख उपस्थित हो जाता है, चाहे आप उन बातो के लिए तैयार हो या न हो। 'क्षण' को जीनेवाला व्यक्ति सच तो यह है अकलक ! कि किसी भी बात के लिए तैयार नही होता है ओर आज से तीन दिन पूर्व मैं अपने लॉन मे बैठी हुई अनुभव कर रही थी कि आज की साँझ अत्यधिक लाल-लाल हो रही है। पुरी और उसकी पत्नी थोडी देर पहले 'मेरी, गेट यूवर ग्रन' देखने गये हुए थे । झीने पतले बादल, रुई के ढेर की तरह जल रहे थे। इजिन के बॉइलर की तरह गरम-गरम लाल आँच का वह आकाश, गाछों, मकानो के ऊपर नीचे उतर आया सा लग रहा था । साँझ के इन अगारो की लाल शिखाओ से दूर-दूर तक के हरे लॉन, यूकेलिप्टस के सफेद भूरे तने, बँगलो की दीवारे, इक्के-दुक्के आने जानेवाले लोगो के उजले कपडे सबके सब लाल दिखायी दे रहे थे । टेबल क्लाथ एकदम लाल हो रहा था, उस समय मेरे सामने काफी की ट्रे रक्खी हुई थी जिस पर पूरे लाल आस्मान की प्रतिच्छाया दिखलायी पड रही थी। फाल्गुन साँझ वर्ष भर मे सबसे सुन्दर होती है। आज का एकलापन भयावना सा लग रहा था। हवा बिलकुल नही चल रही थी। अपनी गुमसुम पत्तियाँ लिये हुए अशोक, यूकेलिप्टस जलती साँझ की लाल आँचें बहुत अधिक तप रहे थे । बरसाती के खम्भो पर एकदम घनी होकर बेले चढी हुई थी। सब ऐसा लग रहा

था अकलक ! कि किसी भी क्षण यह आकाश का बॉइलर फट सकता है और पूरी धरती पर उसमे के हजारो अगारे बरस पडेगे और सब जल जायगा---गाछ, बाडियाँ, फूल, केशो के जूडे, भद्रलोको के सितार ओर बेला, पियानो---सब इस आग मे भस्म हो जायेगे। और मैने देखा कि मेरे अहाते का दुआर खोलकर पोस्टमैन आ रहा है। मै समझ गयी कि आज मै निश्चय ही इस पोस्टमैन द्वारा लाये गये पत्र मे अपने जीवन का सबसे बडा अशुभ पढूँगी और और कॉफी का प्याला मेरे हाथ मे हल्के-हल्के कॉप रहा था जब मैने दूसरे हाथ से डाकिये से पत्र लिया।

"हालैड के टिकटो से भरा वह लिफाफा असित के पत्र का था। मुझे वान का स्मरण हो आया, वह बीमार था---असित के अन्तिम पत्र मे जो समाचार था वह था कि वान की अवस्था बहुत ही अधिक खराब है। मैने पत्र खोला, जानते हो अकलक ! वह पत्र किसका था ?

"वह पत्र वान का था जिसके साथ असित का भी पत्र था।

वान का पत्र देखकर रजना के अदर बैठी हुई वान की प्रेमिका उत्साह से भर गयी क्योकि विवाह की बधाई वाले पत्र के बाद से उसका कोई पत्र नही आया था।"---

और मै देख रहा हूँ कि रजना एकदम अपनी कुर्सी पर से उठी और उधर दूसरे कमरे मे चली गयी। मै इस समय बहुत कुछ सोच सकता हूँ परन्तु मेरे दिमाग पर इस नारी ने घटनाओ के भारी-भारी पत्थर रखकर उसे हमेशा के लिए बेकार कर दिया है।

वह बहुत तेजी के साथ एक बडा लिफाफा लेकर लौट रही है। उसके नीले हिलते हुए गाउन मे उसके दोनो लम्बे गोरे पैर कितनी सुन्दरता के साथ इस कमरे की तरफ आ रहे है।

"यह है वह पत्र अकलक ! तीन रात हो गयी हैं मै सो नही सकी हूँ और नही, कुछ नही इसे बाचो अकलक !"---मै अभी आयी।

और मैने वान का वह पत्र खोलना शुरू किया। जो पत्र मै खोल रहा हूँ वह एक प्रसिद्ध सगीतज्ञ एव चित्रकार का लिखा हुआ है और कदाचित बहुत बीमारी मे लिखा होगा। लिखते समय अवश्य ही इस नारी का रूप, जिसे उसने चित्रित कर कला को एक महान देन दी है---सामने आया होगा और धीरे धीरे उसके मन मे उस 'प्रतीक्षा गान' के स्वर गूँज गये होगे क्योकि इस नारी ने सदा के लिए उसके मन को ताश का ताजमहल समझकर ठुकरा दिया।

और मै पत्र पूरा खोल चुका हूँ ---

'रजना !

'तुमने विवाह किया, मेरी बधाई भी मिली होगी। सोचा था, तुम अब प्रसन्न

भी होगी किन्तु हम सबका भ्रम निकला । क्योंकि तुम्हारे पति कुलकर्णी ने मुझे एक पत्र भेजकर यह सूचना दी है कि उसने तुम्हे तलाक दे दिया है—सचमुच मुझे इससे बहुत पीडा हुई है ।

मै जानता हूँ कि तुम्हे वान क्या, वान की किसी भी वस्तु की अपेक्षा नही रही है—जब कि वान के लिए तुम सब कुछ रही हो । इधर बहुत बीमार रहने से लगता है जीवन के तट पर पहुँच चुका हूँ । यदि इस जीवन के तटे तुम्हारे हाथ मे हाथ डालकर एक बार भी उन्मुक्त होकर समुद्री हवा मे मै अपने केश तथा वस्त्र उडाते हुए घूम सकता होता तो मुझे कदाचित हमेशा के लिए एक गहरा सतोष प्राप्त होता । क्योकि सतोष ही मुक्ति है ।

तुम पहले ही चली गयी, और पिता भी चले गये, रह गया असित जिसे मै सब कुछ मानता हूँ । कल राजकीय तौर पर से उसे उत्तराधिकारी बना लिया है । तुम कहोगी कि ऐसा क्यो ? परन्तु रजना ! मेरा अब क्या ठीक ? इस समय रात के एक बज रहे है, पूरा आम्सटरडम सोया हुआ है, केवल जाग रहे है तो मेरे कमरे के ये अभागे चित्र, और इन अभागे चित्रो का निर्माता दुर्भाग्यशाली मै ! ! ठीक मेरे सिरहाने की आरामकुर्सी पर सोया हुआ असित, मौन है—जो कि अभी-अभी रोते हुए सोया है और जिसे नीद मे कभी-कभी हिचकियाँ आ जाती है । पैरो की ओर सम्मुख नर्स, कुर्सी पर झपकियाँ लेते हुए ऊँघ रही है ।

मै जाग रहा हूँ, और यह मेरा जागना अतिम बार के लिए है । रजना ! मेरी मोमबत्तियो की तरह जलनेवाली पलको मे यदि किसी की श्वेत मौन छवि रह-रहकर नृत्य कर रही है तो वह है मोर प्रेमिका, मोर पत्नी रजना की ! ! तुम्हे पत्नी कहने का वैसे व्यावहारिक रूपे मुझे अधिकार नही है ।—जिससे मै बाते कर रहा हूँ वह है मेरी पत्नी जो मुझसे रूठकर चली गयी है । उसे नही ज्ञात कि आज मेरी अतिम रात्रि है और खिडकियो के पल्लो के बाहर दूर दूर तक बरफ झर रही है । कल यही बरफ मेरी कब्र पर उजले ठडे फूल की तरह हल्के-हल्के, बहुत ही हौले-हौले झरेगी । यह पत्र तुम्हे मिलने तक मै कब्र मे पहुँच जाऊँगा, मेरे असित की आँखो मे मानसून होगे और मेरी पत्नी रजना जाने कहाँ, भारतवर्ष के एक नगर लखनऊ मे होगी, और उसे सूचना भी तब नही होगी ।

मै जान रहा हूँ कि मेरे हाथ अब काँप रहे है । मेरे जीवन की मोमबत्ती पूरी तरह से समाप्त हो चुकी है, रजना ! मुझे अतिम बार कह लेने दो कि यदि तुम लौट आती तो .. किन्तु उस 'तो' की चर्चा भी चलाना व्यर्थ ही है, क्योकि मुझे अपनी इस अतिम रात को दूर चली गयी अपनी पत्नी के जहाज के मस्तूलो को पुन: डाकने के लिए 'प्रतीक्षा गान' तो गाना ही होगा ।

मै तब गिरता पडता उठा हूँ रजना ! और बहुत धीमे-धीमे पियानो पर गान शरू किया । मोर कठे प्राण अवरुद्ध हो रहे है, इसलिये केवल यही गा पाया हूँ :—

मोर मन
तुम्हारे जहाज के गोल पाल वाले ऊँचे मस्तूल को
दूर दूर तक के आकाशो खोजा करेगा ।"

मेरा हाथ पियानो के परदे पर झन्न से गिर पडा और मै वहाँ बेहोश हो गया।

रजना यदि इन दिनो तुम मुझे देख पाती तो तुम्हे अवश्य मुझ से घृणा हो जाती—क्योकि मै बहुत कुछ पीला काला पड गया हूँ । मेरे गाल धँस गये है, मै ठठरी का पिंजर मात्र रह गया हूँ—क्यो रजना ! मै बहुत ही कुरूप हो गया हूँ है न ?

पियानो के पर्दो पर मेरे बेहोश हाथो ने जो झन्न से आवाज की उसे सुनकर नर्स और असित दोनो जाग पडे, और उन्होने दौडकर मुझे बिस्तर पर लिटा दिया। मेरे सिर मे बहुत अधिक चोट आ गयी है । चोट मुझे लिखने नही दे रही है रजना ! और मुझे पत्र बन्द करना ही पडेगा रजना !! कदाचित मै अब कभी नही बोल पाऊँगा—बाहर सफेद उजले ठडे बरफ के फल झर रहे है, जो कल मेरी कब्र पर ढेर के ढेर पिरेमिड के रूपे झरते रहेगे—और मै इन सफेद उजले फूलो मे दबा हमेशा-हमेशा के लिए मौन हो जाऊँगा !! सभवत , तुम एक क्षण को मुझे देख सकती । अब मुझ पर कब्र की मिट्टी डाली जा रही है—देख रही हो रजना ! पादरी मेरी आँखो पर क्रॉस फेर रहा है, और मेरे ओठ जहाजो के मस्तूल खोजनेवाला गान प्रारभ कर रहे है—पर रजना प्यार वान !!"—

मेरे दिमाग मे वान की मौत स्पष्ट होती जा रही है असित के पत्र मे मात्र इतना ही लिखा है कि—

"ममी !

वान आज सवेरे हमेशा के लिए चला गया है। मै आगे नही लिख पाऊँगा ममी, वह तुम्हे बहुत प्यार करता था और तुमने ही उसे मृत्यु मुखे.......

असित,—"

मेरे सामने रजना इस समय एक भयकर रूप-प्रतिमा की तरह खडी हुई है, जिसके हृदय के स्थान पर जलते हुए लाल-लाल अगारे भरे हुए है—जिनकी आग मे वह स्वय जली है और दूसरे भी जले है । आज यह रूपमयी, दर्परता 'श्रीमती कुलकर्णी' स्वय के वस्त्रो मे आग लगाये जैसे चीख-चीख कर चिल्लाकर कह रही है

'अकलक ! रूप और सौन्दर्य की उल्काएँ क्या नही कर सकती ? किसे नही जला सकती ?"

और मेरा मन काँप उठा है। रजना का रूप, मात्र अग्निजा है !!

घडी मे इस समय पौने चार बज रहे है। मै कामना कर रहा हूँ कि शीघ्र ही सवेरा हो आये और अधकार के ये काले बाघनख जिन्होने मुझे रात भर से बदी कर रखा है—टूट जाये और मै फिर कभी न लौटने के लिए यहाँ से चल दूँ ।

"   तीन रातों और दो दिनो मे मैं सो नही पायी हूँ। वह वान की मृत्यु ही तो थी जो उम दिन उस साँझ आकाशे देख रही थी। तुम समझोगे कि मैं और कुछ कहूँगी, है न ? किन्तु अकलक ! मेरी गाथा अशेष हुई, जो कहना था कह चुकी। रही बात तुम्हारे बारे मे, वह मैंने बहुत कुछ तभी लिखकर रख ली थी अकलक ! जब तुम यहाँ आये थे और नहाने गये थे कल दोपहर। लो इसे समाप्त कर लायी हूँ यह तुम्हारा पत्र है अकलक ! और मैं चाहती हूँ कि तुम यहाँ से अभी इसी क्षण साढे चार की गाडी के लिए रवाना हो सको तो उचित है। मैंने बैरा को ताँगा लाने के लिए कह दिया है। वह शायद ले भी आया होगा—रुको, मैं देखती हूँ कि वह लाया कि नही ?"— और वह कमरे के बाहर तेजी से चली गयी है।

मैं बिस्तरे पर से उठ आया हूँ। मुझे लग रहा है कि मै अवश्य ही अभी-अभी कोई भयकर स्वप्न देख रहा था। किन्तु मात्र स्वप्न कहकर इस सबकी उपेक्षा भी कैसे कर सकता हूँ ? क्योकि श्रोता के रूपे ही सही, कही न कही भागी तो हूँ।

रजना ने मुझे टाइमटेबल, वही कल का पुराना अखबार और एक चमडे के थैले मे कलवाले मेरे कपडे लाकर दे दिये है।

"चलो अकलक ! ताँगा बाहर आ गया है।"—

और वह आगे-आगे चल रही है।

मैंने चलती हुई रजना का हाथ पकड लिया है। उसने बिना मुडे ही मेरा हाथ झटकते हुए, कहा,—

"पागल न बनो अकलक ! मृत्यु के गोरे हिमहाथ चाहे कितने ही सुन्दर क्यो न हो, जीवन उन्हे अपने ओठो से चूमना कभी प्रिय नही करता है।"

एक क्षण को मोह की साँझ जो घिर आयी थी   अस्ता गयी और मुझे अपने आप पर घृणा हो आयी कि इस रजना नाम की स्त्री ने मुझे क्या समझा होगा, कि मैंने भी रजना को बिना प्राप्त किये वही समझा जो दूसरो ने इसके शरीर को पाकर अभिव्यक्त किया। और मै अपने प्रति जाने कैसी-कैसी छि छि कर उठा हूँ कि पैर भी मुझमे घृणा करके मुझ बहुत तेजी से बाहर ले जा रहे है।

मैं इस ममय जहाँ से गुजर रहा हूँ वह रजना का वही ड्राइगरूम है जहाँ हब्शी का फौलादी मुख चित्र मे गुर्रा रहा है—'लेकून्सक्राई' की मूर्तिवाला दार्शनिक इस समय भी अजगर के कुण्डल मे फँसा चीखे लगा रहा है, उसके बच्चो की चीखो से तो जैसे मेरे कान ही फट जायेगे। कमरे के गलीचे पर बने बारहसिंघे की नाक पर से मेरी चप्पल अभी-अभी गुजरी है। यह वही ऊँट की खाल के रग का पाँवपोश है जिस पर लाल अक्षरो मे 'वेलकम' लिखा हुआ है जो कि कमरे की बत्ती मे इस समय भी दिखायी दे रहा है। रजना के दोनो कुत्ते भी नीद से जाग कर साथ-साथ चल रहे है।

हम परदा ऊँचा करके कमरे के दालान मे पहुँच रहे है इसी दुआरे तो वह 'मिसेज रजना कुलकर्णी' वाली नेमप्लेट लगी है जिसे भ्रम मे मने 'मिसेज रजना पुरी'' पढा था। और यही वे बरसाती की तीनो सीढियाँ है कि जिसके दालान मे वे दोनो हरे-पुते हुए मोढ अभी भी रखे हुए है।

रजना मुझे बरसाती मे खडी-खडी बिदा दे रही है। वह अपने नीजे गाउन मे जिसके ऊपर हल्का ओवरकोट डाल रखा है--कदाचित, बेश सुन्दर लग रही है। परन्तु मुझे घृणा होनी चाहिये कि वान की मृत्यु का कारण इसे इसका पुत्र तक ठहराता है। छि-छि रजना का रूप, विष है। और अब मैंने कितने बनावटी ढग से, बिलकुल खरबूजे की तरह फीकी हँसी के साथ अपने दोनो हाथ जोडे है और ताँगा चल पडा है। ये फूल, क्यारियाँ, लताएँ, बेले है जिन्हे कल दोपहर मे मैंने आती बेला देखा था, इस समय चार बजे के ऊँघते हुए आकाश के अधकार के नीचे सब मौन है, ओर भोर की पुरवा मे धीमे-धीमे करवटे बदलने की तरह हिल रहे हैं। पानी थम चुका है, किन्तु आसमान साफ नही है। बादलो मे ऊपर कही पर तारे होगे। मै आधे मिनट के अदर ही इस अहाते के बाहर पहुँच जाऊँगा जहाँ कि मेरे मित्र के बँगले का पोरशन बद है, जहाँ मेरा मित्र अपनी पत्नी के साथ सुखी जीवन बिताता होगा।

मै देख रहा हूँ कि रजना बरसाती मे खडी हुई है। और उसके कुत्ते दुमे हिला रहे है। मुझे लगा कि जैसे उसके सुन्दर मुँह पर दोनो ओर से तूफान की पीली हथेलियाँ फिर रही है। मेरा ताँगा बँगले से निकल नार्थ एवेन्यू रोड पर आ गया है। सडके एकदम धुली हुई है। इस बडी सी सडक की लाइटे लम्बी पाँत मे बहुत दूर तक चली गयी है जिसका कि मै अब नाम भूल रहा हूँ, और गीली सडक पर लाइटो की छायाएँ नीचे उतरकर सडक पर फैल गयी है।

मै जानता हूँ कि मेरी जेब मे रजना का पत्र है और जिसके लिए यह आदेश है कि मै ट्रेन मे ही पढूँगा। रजना के वे गुलाबी गाल, गोरी बाँहे कितनी मोहनेवाली है। पर मै पत्र पढने के लिए बहुत ही उत्सुक हूँ, क्योकि यह कल जब मै स्नानघर मे था तभी बहुत कुछ लिखा गया था और इतनी बाते हो जाने के बाद भी असार्थक नही हुआ है, यही बात मुझे आश्चर्य मे डाले हुए है।

बडी कठिनाइयो से स्टेशन पहुँचा हूँ। रास्ते भर मेरा दिमाग रजना की महागाथा के चरित्रो के सग दौडता, घूमता रहा है। मैंने जल्दी से ताँगेवाले को पैसा देकर बिदा कर दिया है और टिकट लेकर ट्रेन के डिब्बे मे पहुँच जाना चाह रहा हूँ, जहाँ पैर फैला कर एक बार नये सिरे से बिलकुल अकेला बैठकर वह पत्र पढूँगा उस रमणी का, जिसने स्वय के साथ क्या नही किया और अपनी सीमा मे आये हुए दूसरो के साथ भी।

ट्रेन के डब्बे मे पहुँचकर मैंने सबसे पहला काज जो किया है वह है एक तरफ

की सीट पर जाकर पैर पसारना। पत्र को उलट-पुलट रहा हूँ। रजना के अक्षर कदाचित रजना से भी बढकर सुन्दर है —

"श्री स्वामीनाथन,

आमि जानी के तुमि अकलक नेई, कारण अकलक नाम के व्यक्ति को तो अडमान से भागने के अपराध मे आज से दस वर्ष पूर्वेई गोली मार दी गयी थी —जानते हो तुम मुझे अकलक के रूप मे कैसे लगे ?

जब मै इस बँगले मे आयी तब तुम्हारे मित्र पुरी ने दूसरे दिन मुझे चाय पर बुलाया। हम लोग ड्राइगरूम मे बैठकर चाय पी रहे थे जहाँ तुम्हारा चित्र दीवार पर टँगा हुआ था। मेरी आँखे सहसा उस पर गयी और मुझे भ्रम हुआ कि यह चित्र 'अकलक' का है, क्योकि बिल्कुल वैसे ही घुघराले बाल, लम्बी पतली आखे और हल्के मोटे ओठ—अतर था तो नाक का क्योकि तुम्हारी उतनी लम्बी नाक नही है। पुरी ने पूछने पर बताया कि तुम लँगडाकर चलते हो जो कि तुम्हारे इगलिश मास्टर के कृपा-दण्ड का फल है।

मै तुमसे मिलने को उत्सुक थी, इसलिए नही कि मुझे कोई प्रेम हो गया था तुमसे, कारण कि किसी से भी प्रेम करने की सीमा मै पार कर चुकी थी। पर एक तो अकलक जैसे व्यक्ति को देखकर मै उसके अभाव को पूरा कर पाऊँगी और मै तुम्हे जानबूझ कर 'अकलक' अकलक' कहकर थोडी सी कथा कह पाऊँगी तो मेरे मन का बोझ हल्का हो जायगा। तुम कहोगे कि मुझ पर इतना बडा विश्वास करने को मै कैसे तत्पर हो गयी —अपने रहस्यों को किसी अनजान पर प्रदर्शित करने पर वह अनजान व्यक्ति भी उसे रहस्य मानकर मन के गुप्तभंडारे बद कर लेगा ?

स्वामीनाथन ! तुम जैसे लोक सीधे व्यक्तित्त्व के हुआ करते है और कोई भी नारी चाहे तो उन्हे अच्छी तरह छल सकती है—अब बोलो, मैने तुम्हे पहचानने मे भूल तो नही की ? अस्तु,

तुम्हारे मित्र ने तुम्हे कभी बुलाने का मुझसे वादा किया। एक बार तुम्हारा पत्र जलगांव से आया और मेरे ही कहने से पुरी ने तुम्हे बुलवाया। तुम्हे बुलवाने तक परिस्थितियाँ वैसी नही थी जैसी कि कल २२ मार्च की सझाए हो गयी और मै २३ मार्च की भोर से ही प्रतीक्षा करने लगी—पुरी को अचानक अपने घर बरेली से तार पाकर चला जाना पडा।

तुम किस तरह आओगे, मुझे क्या समझोगे, इसकी मुझे पूरी अशका थी। जब तुम्हारा ताँगा अहाते आया, मै उस समय कमरे के परदे के आडे तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही थी। पिछले एक घटे मे जितने भी ताँगे इधर से गये थे मैने सबको ध्यान से देखा था। ज्योही तुम अदर आये मैने पहचान लिया कि यह स्वामीनाथन है। पहले तो मै स्वामीनाथन ही कहना चाहती थी किन्तु मुझे सब कुछ कहना था और एक

अपरिचित को परिचित का रूप देकर तो मै कुछ भी कह सकती थी किन्तु अपरिचित को जब आप और भी अपरिचित बना दे तब तो कठिन ही है न ? लोग तो जब परिचित से अपरिचित हो जाते है तब उनसे कहने मे हिचकते है । अस्तु ।

अनुमान के अनुसार ही तुमने मुझे 'श्रीमती पुरी' समझा और मैंने उसी क्षण निश्चय किया कि तुम्हे बिना सुनाये लौटने न दूँगी । मै जान रही हूँ कि तुम गाथा अशेष हो जाने पर घृणा ही करोगे । कथा मे ऐसे अवसर भी आ सकते थे कि तुम मुझसे क्या कुछ न माँग सकते थे---तब, जब कि यह मै पत्र लिख रही हूँ मेरा इस पर कोई निर्णय नही है, क्योकि मेरा निर्णय शुरू से ही इस विषय मे अतिम था कि सब कुछ मै दिन भर और रात के दो बजे तक सुना दूँगी और तब उसके बाद तुम्हे बिदा दूँगी ।

तुम मेरे जीवन मे एक ऐसे व्यक्ति के रूपे आये स्वामीनाथन ! कि मेरे जीवन के सबसे अतिम तथा महत्त्वपूर्ण न्यक्ति बने, किन्तु गोपन रहते हुए भी समानान्तर रेखा की मानी बिलग रहोगे । क्योकि तुमको मै बचपन की रजना से लेकर अपने पुत्र असित द्वारा घोषित घिनौनी रजना को एकदम सौप दूँगी---यह मेरा निश्चय था। जिसने भी रजना को देखा था या पाया वह विभाजित टुकडो का सौभाग्य था। अच्छी या बुरी जो कि रजना है, जिसे आज तक केवल मै ही संपूर्ण रूपे जानती थी, उसे मैंने तुम्हे कहकर प्रदर्शित किया है कि स्वामीनाथन ! रजना, नारी के पुण्य शरीर के रूप मे पाप मानी ही तो है---न इससे कम, न इससे बेश ।

कथा सम्पूर्ण हुई स्वामीनाथन ! तुम मेरे पिता, पति, प्रेमी या पुत्र कुछ भी नही रहे हो। मेरे पास केवल एक ही प्रश्न है---और वह है मेरा शरीर, सुन्दर शरीर !! सबने मेरे इस प्रश्न के उत्तर दिये अपने-अपने ढँग पर किन्तु क्या कोई भी मुझे अप्रश्नशीला कर सका ?

मेरा अतिम पति कुलकर्णी, जिसे मै किसी भी मूल्य पर जीवन भर निभाना चाहती थी, मुझे प्रेम के प्रति छलना करनेवाली स्त्री कहा करता था । चरित्र-हीन पुरुष भी, स्त्री से सतीत्त्व का विश्वास चाहता है स्वामीनाथन ! मैंने जो कुछ किया उसे तुम सज्ञा दोगे, मै जानती हूँ । किन्तु रजना ने जो कुछ किया उसमे उसकी महत्त्वा-काक्षा नही थी यह भी नही है, परन्तु केवल रजना ही इस सब के होने मे थी, यह मै नही स्वीकारूँगी । मेरे जीवन के अन्य पथ तुम्हे दिखायी देगे कि 'यह भी हो सकता था'---वैसा ही मै भी, आज सोच सकती हूँ---किन्तु जीवन, ज्यामिति नही !!

अब मुझे कुछ भी नही चाहिए स्वामीनाथन ! परन्तु मै तो जो कहूँगी वह यह कि सबके उत्तरो को अत मे मेरे शरीर ने किस प्रकार उत्तर दिया वह है कि---अकलक अहवादी था, जिसे रजना मिलती भी तो तोड देता, जास्टीन एक चरित्रहीन पत्नी का चरित्रवान पति था और रजना को पूरी तरह पाने के लिए पुरुष का पति से

अधिक प्रेमी भी होना आवश्यक नही, और रहा वान--वह एक स्वप्नशील, जिसके आलिगन मे देवत्त्व अधिक था। रजना, देवता का पाथर कैसे ढोती स्वामीनाथन ? टामस, कचन का मृग और शेष--वे अमहत्त्वपूर्ण बिन्दु जो समग्र रूप के लिए अनावश्यक होने पर भी अपेक्षित होते है।

रजना न तो पत्नी ही बन सकी और न माता ही--उसे जो लोगो ने बनाया वह उसके शरीर का मात्र विभिन्न रूप। तुम्हारी घृणा और प्रेम दोनो के ऊपर मात्र नारी, समस्त प्रश्नो से परे, स्वय मे अपूर्ण एव अनुत्तरा--किन्तु इससे क्या ?

जो अन्यदा नही, जो विपथगा नही, वह आज के यथार्थ के अशिवत्त्व का मात्र द्रष्टा भले ही हो--उसे शकर की तरह सती के शिव की भाँति कधे पर धारण नही कर सकता स्वामीनाथन ! नारी, शिव है। हम स्वय को ही जब नही समझ पाती तब तुम या शेष, उस शिव को समझ सकोगे ?

आज मेरे लिए भी रजना का कोई अर्थ, प्रयोजन, मूल्य कुछ भी तो नही रह गया और इन सबसे 'हीन' शेष का कोई उपयोग क्या है ?

चलती बेला मै तुम्हारा कुछ भी आतिथ्य न कर सकी हूँ, क्षमा कर देना। मेरे चलने की भी बेला आ पहुँची है। तुम जब तक स्टेशन पर पहुँचोगे मै अपने वान के पास हूँगी। मै जानती हूँ तुम लौटोगे--अच्छा, आमार अतिम मित्र ! नमस्कार ! !

किसी की भी नही,

... रजना ..

ट्रेन चलने में कुछ भी देरी नही है। मैंने तेजी से अपना सामान उतारा है। टिकिट लौटा कर चारबाग स्टेशन से बाहर आया हूँ– "ए, ताँगा! नार्थ एवेन्यू चलो।"

बादल छँट चुके हैं—

प्रत्यूष वेला की हल्की प्रजनन लालिमा, आकाश के नील चीवरो मे फूटी पड रही है। शेष तारे बहुत पूर्व ही डूब चुके है। शुक्र का नील उज्ज्वल अशेष नक्षत्र —योगी आकाश की आत्मा की भाँति अपने मे लीन है। अपथमती चिडियो सी भोर की मदार रजित हवाएँ, चदन वनो मे फुनगियो के छत्तो पर उड रही है। कदाचित उषा, सूर्यपुत्र की माता बन रही है। आकाश, इस जन्म की प्रतीक्षा कर रहा है। जन्म होकर रहेगा।

नव दिल्ली